# प्रेरणा विचार

RNI No. : UPHIN/2023/84344 ₹ : 30/-
मासिक
आश्विन–कार्तिक, विक्रम संवत् 2081 (अक्टूबर –2024)
पृष्ठ – 68, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित

## परिवर्तन की पंचधारा

# सरस्वती शिशु मन्दिर

सी-41, सेक्टर-12, नोएडा (गौतमबुद्ध नगर)
दूरभाष: 0120-4545608
ई-मेल: ssm.noida@gmail.com
वैबसाइड: www.ssmnoida.in

## विद्यालय की विशेषताऐं

* भारतीय संस्कृति पर आधारित व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास की शिक्षा।
* नवीन तकनीकी शिक्षा प्रोजैक्टर, कम्प्यूटर, सी.सी.टी.वी., कैमरा आदि की सुविधा।
* आर.ओ. का शुद्ध पेय जल, सौर ऊर्जा, विशाल क्रीड़ा स्थल व हरियाली का समुचित प्रबन्ध।
* प्रखर देशभक्ति के संस्कारों से युक्त उत्तम मानवीय व चारित्रिक गुणों के विकास पर बल।
* सामाजिक चेतना एवं समरसता विकास के लिए विविध क्रियाकलाप।
* विद्यालय को श्रेष्ठतम बनाने की दृष्टि से आपके सुझाव सादर आमन्त्रित हैं।

| दिनेश गोयल | प्रदीप भारद्वाज | असित त्यागी | प्रकाश वीर |
|---|---|---|---|
| (अध्यक्ष) | (व्यवस्थापक) | (कोषाध्यक्ष) | (प्रधानाचार्य) |

# विषय सूची


# प्रेरणा विचार

वर्ष -2, अंक - 10

RNI No. UPHIN/2023/84344



**संरक्षक**
अनिल त्यागी

**प्रबंध निदेशक**
बिजेन्द्र कुमार गुप्ता

**सलाहकार मंडल**
श्याम किशोर, डॉ. अनिल निगम
अशोक सिन्हा

**संपादक**
डॉ. मनमोहन सिंह शिशौदिया

**कार्यकारी संपादक**
डॉ. प्रियंका सिंह

**प्रबन्ध संपादक**
मोनिका चौहान

**समन्वयक संपादक**
राम जी तिवारी



अध्यक्ष प्रीति दादू की ओर से मुद्रक/प्रकाशक डॉ. अनिल त्यागी द्वारा चंद्र प्रभु ऑफसेट प्रिंटिंग वर्क प्रा. लि. नोएडा से मुद्रित तथा प्रेरणा भवन सी-56/20 सेक्टर-62 नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित



**संपादकीय कार्यालय**
प्रेरणा शोध संस्थान न्यास,
प्रेरणा भवन, सी-56/20 सेक्टर-62,
नोएडा - 201309
दूरभाष : 0120 4565851
ईमेल : prernavichar@gmail.com
वेबसाइट : www.prernasamvad.in



इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। संपादक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का निपटारा नोएडा की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों/फोरम में मान्य होगा।
संपादक


## इस अंक में

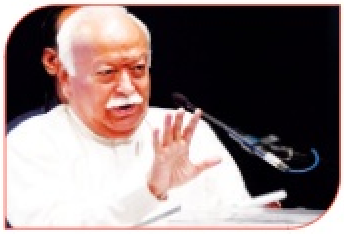


पंच परिवर्तन से होगा राष्ट्र का अभ्युदय-06

'स्व' से साक्षात्कार-10

ऐतिहासिक यात्रा में एकत्व भाव के पद चिन्ह -26

भारत की वसुधैव कुटुंबकीय व्यवस्था-34

समाज को अनुप्राणित करेगा संघ.....08
भारतीय ज्ञान परम्परा का शिक्षा में समावेश.....12
हमारा 'स्व'.....14
'दासत्व' से 'स्वत्व' की ओर.....16
'स्व' के तंत्र में समाहित राष्ट्र का परम वैभव.....18
भारतीय दर्शन में अर्थ चिंतन.....20
सांस्कृतिक विविधता और सामाजिक समरसता.....22
सामाजिक समरसता के मूल तत्व.....24
समरसता के कर्मयोगी.....28
'छह शब्दों से कुटुंब प्रबोधन'.....31
कुटुंब प्रबोधन : आर्थिक समृद्धि में सर्वोपरि.....36
सनातन संस्कृति में परिवार.....38
टूटे नहीं, योजना से तोड़े गए परिवार.....40
दायित्वबोध से समृद्ध और सक्षम बनेगा भारत.....42
शिक्षा और कर्तव्य बोध.....44
मतदान : अधिकार और कर्तव्य.....46
नागरिक और डिजिटल सुरक्षा की चुनौतियां.....48
जलवायु परिवर्तन : मानव अस्तित्व पर गंभीर संकट.....50
मीडिया भी सोचे पानी के सवाल पर.....52
भारत में ई-कचरा निस्तारण और प्रबंधन.....56
हरित योद्धाओं के साथ दो कदम.....58
संस्कृत भाषा : भारतीय ज्ञान और रोजगार की कुंजी.....61
शुष्क मौसम में त्यौहारों का मेला.....62
विशेष समाचार.....64

# देव संस्कृति विश्वविद्यालय

यूजीसी द्वारा मान्यता प्राप्त, राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् द्वारा प्रत्यायित, आईएसओ 9001:2015 द्वारा प्रमाणित एवं सर्वांगपूर्ण शिक्षा के लिए वर्ष 2019 के श्रेष्ठ विश्वविद्यालय के रूप में पुरस्कृत संस्था


दिनांक : 12 सितम्बर, 2024

## शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि प्रेरणा शोध संस्थान न्यास, नोएडा द्वारा **'प्रेरणा विचार मासिक पत्रिका'** का प्रकाशन हो रहा है। यह पत्रिका समाज को एक दिशा प्रदान करने का कार्य कर रही है और यह निश्चित रूप से एक महत्वपूर्ण कदम है। विशेषतः प्रकाशित होने जा रहे **'पंच परिवर्तन'** के विभिन्न आयामों पर केन्द्रित है।

**पंच परिवर्तन** एक ऐसा विषय है जो हमारे सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन को नई ऊर्जा और दिशा देने की क्षमता रखता है। यह अंक उन व्यक्तियों के लिए एक अमूल्य संसाधन साबित होगा जो समाज और राष्ट्र के हित में काम कर रहे हैं। इसमें शामिल विचार, सुझाव और विश्लेषण न केवल हमें नई प्रेरणा देंगे, बल्कि समाज में सकारात्मक बदलाव लाने में भी सहायक होंगे।

इस महत्वपूर्ण पहल को लेकर मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ। मुझे पूरा विश्वास है कि **'प्रेरणा विचार मासिक पत्रिका'** अपने विचारों और सृजनात्मकता के माध्यम से समाज में एक नई सोच और दिशा का संचार करेगी। आपके इस प्रयास को सफलता की ऊँचाइयों पर पहुँचाने की कामना करता हूँ।

मेरी ओर से पुनः हार्दिक मंगलकामनाएँ।

शुभेच्छु

डॉ. चिन्मय पण्ड्या


**डॉ. चिन्मय पण्ड्या**

**प्रति कुलपति (एम.बी.बी. एस; पी.जी.डि.; एम.आर.सी. साईक-लंदन)**

गायत्रीकुंञ्ज - शान्तिकुंञ्ज, हरिद्वार - 249411 (उत्तराखण्ड)

दूरभाष : + 91 92583 60606 ई-मेल : chinmay.pandya@dsvv.ac.in वेबसाइट www. dsvv.ac.in | www.awgp.org

# पंच परिवर्तन की पवित्र धारा

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अपने शताब्दी वर्ष में प्रवेश कर रहा है। 1925 में हिन्दू समाज के संगठन का संकल्प लेकर प्रारंभ हुई यह यात्रा 21 वीं सदी में भारत की भूमिका और भारतीय चिंतन के महत्व को रेखांकित करती हुई निर्बाध रूप से उन्नति के पथ पर अग्रसर है। संघ के स्वयंसेवकों के लिए यह अवसर गौरवान्वित करने वाला भी है और कर्तव्यबोध का स्मरण कराने वाला भी। आज से 100 वर्ष पूर्व परम पूज्य डॉक्टर जी द्वारा जो स्वप्न देखा गया था, उसके साकार होने का स्पंदन हम अनुभव कर सकते हैं, किन्तु अभी हम सभी को अहर्निश, यत्नपूर्वक आगे बढ़ते रहना है। तभी हम एक ऐसे भारत को निर्मित होता देख सकेंगे जिसको साकार होता देखने के लिए हमारी अनेक पीढ़ियों ने अपना जीवन खपा दिया। वह स्वप्न एक ही है ...माँ भारती की विश्व गुरु पद पर पुनर्प्रतिष्ठा, उससे कम पर हम भारतीयों को संतोष नहीं। संघ की लम्बी यात्रा में हजारों स्वयंसेवकों के तप, त्याग और दृढ़व्रती संकल्प ने हमें उस स्थिति में तो पहुंचा ही दिया है, जहां समाज एक आशापूर्णा दृष्टि से संघ की ओर देखता है। देश का वातावरण और वैश्विक परिदृश्य में भारत के प्रति सोच बदली है। देश एक बड़े परिवर्तन की बाट जोह रहा है। अपने शताब्दी वर्ष के अवसर पर संघ भी सम्पूर्ण ऊर्जा के साथ पुण्यभूमि भारत के उत्कर्ष के लिए संकल्पबद्ध होकर जुटेगा। संघ समाज का संगठन है इसलिए समाज का प्रत्येक सदस्य नये भारत के निर्माण के लिए संकल्पबद्ध हो, राष्ट्र के परम वैभव हेतु समाज के एक-एक सदस्य का योगदान हो, उस दृष्टि से संघ समाज के बीच परिवर्तन की पंचधाराओं को लेकर जाएगा। यह पांच क्षेत्र भारत को समर्थ, सशक्त, सक्षम तो बनाएंगे ही किन्तु साथ ही भारत की आभा से विभिन्न संकटों से जूझते विश्व के कल्याण का मार्ग भी प्रशस्त करेंगे। संघ ने सम्पूर्ण भारतीय समाज में आधारभूत परिवर्तन के लिए जिन पांच आयामों को चुना है वे हैं - 'स्व', सामाजिक समरसता, कुटुंब प्रबोधन, पर्यावरण और नागरिक कर्तव्य। यह भारत को स्वकेंद्रित व्यवस्था की ओर ले जाने का संकल्प है। स्वाधीनता से स्वतंत्रता की ओर उन्नयन है। यह पांच आयाम भारतीय जन मानस में 'स्व' का बोध जगाएंगे। पराधीनता काल में संक्रमित हुई ऊंच-नीच और भेदभाव जैसी कुरीतियों का उन्मूलन करेंगे, भारतीय समाज की इकाई कुटुंब परम्परा को पोषित करेंगे, हमें प्रकृति के नियमों के अनुकूल जीवन शैली की ओर लौटाकर पर्यावरण संरक्षण को सुनिश्चित करेंगे तथा समाज के प्रत्येक सदस्य को संविधान प्रदत्त कर्तव्यों तथा अपने सामाजिक दायित्व बोध की दिशा देंगे।

पंच परिवर्तन का यह संकल्प भारत को वैभव सम्पन्न सशक्त राष्ट्र के रूप में विकसित करेगा। संघ स्वयं कुछ नहीं करता, स्वयंसेवक कुछ नहीं छोड़ता, अस्तु स्वयंसेवकों के आचरण-व्यवहार से समाज में पंच परिवर्तन का सकारात्मक सन्देश जाए, देश के सभी पंथ, सम्प्रदाय, सामाजिक संगठन और संस्थाएं एक साथ मिलकर यथाशक्ति एक नये भारत के निर्माण का संकल्प लेकर एक साथ जुटें। इस दृष्टि से शताब्दी वर्ष में संघ ने पंच अमृत धाराओं से समाज को सिंचित करने का संकल्प लिया है। ■

देश के वातावरण और वैश्विक परिदृश्य में भारत के प्रति सोच बदली है। देश एक बड़े परिवर्तन की बाट जोह रहा है। अपने शताब्दी वर्ष के अवसर पर संघ भी सम्पूर्ण ऊर्जा के साथ पुण्यभूमि भारत के उत्कर्ष के लिए संकल्पबद्ध होकर जुटेगा। संघ समाज का संगठन है इसलिए समाज का प्रत्येक सदस्य नये भारत के निर्माण के लिए संकल्पबद्ध हो, राष्ट्र के परम वैभव हेतु समाज के एक-एक सदस्य का योगदान हो, उस दृष्टि से संघ समाज के बीच परिवर्तन की पंचधाराओं को लेकर जाएगा। यह पांच क्षेत्र भारत को समर्थ, सशक्त, सक्षम तो बनाएंगे ही साथ ही भारत की आभा से विभिन्न संकटों से जूझते विश्व के कल्याण का मार्ग भी प्रशस्त करेंगे। संघ ने सम्पूर्ण भारतीय समाज में आधारभूत परिवर्तन के लिए जिन पांच आयामों को चुना है वे हैं - 'स्व', सामाजिक समरसता, कुटुंब प्रबोधन, पर्यावरण और नागरिक कर्तव्य।

# पंच परिवर्तन से होगा राष्ट्र का अभ्युदय

**भारतीय जनजीवन में ऐसे पांच परिवर्तन कौन से हैं जो वर्तमान राष्ट्रीय परिदृश्य में राष्ट्र की समृद्धि के लिए अनिवार्य हैं। देश को विकसित और समर्थ राष्ट्र बनाने हेतु ये पंच परिवर्तन प्रत्येक भारतीय नागरिक के लिए ग्रहण करने योग्य हैं। पंच परिवर्तनों के विषय में संघ के पूज्य सरसंघचालक डॉ . मोहन भागवत जी ने समय-समय पर अपने विचार प्रकट किये हैं। उनमें से कुछ संपादित अंश पाठकों के लिए प्रस्तुत हैं।**

**'स्व'**

## राष्ट्र की उन्नति अपनी प्रकृति पर आधारित होनी चाहिए

स्व आधारित भारत, आजकल इसकी चर्चा होने लगी है। पहले इसको आवश्यक नहीं माना जाता था और एक ऐसा विचार भी था कि जो-जो भारत का है वो कुछ काम का नहीं है। भारत का जो था वह हजार साल पुराना है, वह आज के समय में बिल्कुल उपयोगी नहीं है। ऐसा विचार होने लगा था कि हमको कुछ लेना चाहिए तो दूसरों से ही लेना चाहिए। उनकी नकल करनी चाहिए, उधर (पश्चिमी जगत से) से इधर (भारत में) लाना। लेकिन यह एक सामान्य नियम है कि यदि व्यक्ति, राष्ट्र और समाज की उन्नति होनी है तो उसकी उन्नति उसकी अपनी प्रकृति पर आधारित होगी, वह उन्नति कही जाएगी, नहीं तो वह एक तमाशा होता है और तमाशा भी देखने लायक। इसलिए भारतवर्ष की उन्नति तब कही जाएगी जब भारतवर्ष अपने आधार पर कुछ करके दिखाएगा।

**समरसता**

## सद्भाव से ही जाएगी जाति-पाति की कुरीति

अन्याय के प्रति जो चिढ़ है, उसके कारण अपने ही समाज के लोग रूठे हुए हैं, गुस्से में हैं। मन में आशंका है, दूरी है। इतिहास के कारण ये जो घाव हुए, उसकी पीड़ा है। इसलिए हम दूर हैं तो पास आना है और एक होने का मार्ग क्या होगा? मार्ग तो यही होगा कि उसको भूतकाल में जमा कर दो। डर है, तो दुर्बल मत बनो। शक्ति संपन्न बनो। डर नहीं रहेगा, लेकिन शक्ति के साथ शील संपन्न बनो। शील अपने धर्म और संस्कृति से आता है जो सत्य के बाद अहिंसा को कहता है। सबके प्रति सद्भावना को लेकर पुरानी बातों को भूल कर अपनाना और हम एक दूसरे को अपना सकें इसलिए बदलाव अपने में करना है। अपने घर से उसका प्रारंभ करना, स्वयं से उसका प्रारम्भ करना है।

कुटुंब प्रबोधन

# बालकों की प्रथम आचारशाला है कुटुंब

कुटुंब हमारे संस्कार की पाठशाला है। शिक्षा शास्त्र के अनुसार कुटुंब में बच्चे को प्रारम्भिक तीन वर्ष तक जो आत्मीयता का भाव मिलता है, उसी से उसकी प्रवृत्ति का निर्माण होता है। प्रारंभिक वर्षों की परवरिश ही उसके जीवन की दिशा तय कर देती है कि वह सद् प्रवृत्ति वाला बनेगा या दुष्प्रवृत्ति वाला। इन प्रारंभिक वर्षों में वह अपने माता-पिता, परिवार के साथ ही रहता है। माता-पिता ही उसके लिए सब कुछ होते हैं। आगे जाकर 12 वर्ष की आयु में वह अपने मित्रों, शिक्षकों आदि से भी सीखता है। 12 वर्ष की आयु तक शिक्षक सिखाते हैं किन्तु आधार कुटुंब ही होता है। 12 वर्ष की आयु के बाद शिक्षक प्रामाणिक हो जाते हैं, माता-पिता दूसरे नम्बर पर आ जाते हैं। अपने यहां संस्कृत की उक्ति प्रसिद्ध है जो बताती है कि बाल्यावस्था में लाड, तरुणावस्था में डपट और किशोरावस्था में पुत्र के साथ मित्रवत् व्यवहार किया जाना चाहिए। यह सब कुटुंब में संपन्न होता है। घर से बाहर जाएगा तो अच्छा-बुरा सबका सामना होगा किन्तु उनमें से क्या ग्रहण करना है और क्या नहीं उसका विवेक कुटुंब में ही आता है।

नागरिक कर्तव्य

# नागरिक अनुशासन का पालन सर्वोपरि

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर ने कहा था कि अब हम स्वतंत्र हो गये हैं, अब हमारे ऊपर ब्रिटिश तंत्र का शासन नहीं है। पहले हम सारा दोष उनपर मढ़कर सत्याग्रह और आन्दोलन करते थे जिसमें नियमों को भी भंग किया जाता था। तब वह क्षम्य था किन्तु अब हम स्वतंत्र हैं इसलिए नियम आदि का भंग किया जाना अब अक्षम्य है। अब व्यवस्थाएं हमारी अपनी हैं इसलिए नागरिक अनुशासन का पालन सर्वोपरि है। उन्होंने यह भी कहा कि अब सत्याग्रह की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए क्योंकि कानून-संविधान में उसका मार्ग है, उसी के अनुरूप चलना होगा।

पर्यावरण

# विकास एवं पर्यावरण में संतुलन अनिवार्य

आजकल हम देख रहे हैं कि विकास तो हो रहा है किन्तु इस विकास के कारण पर्यावरण की हानि भी हो रही है। विकास और पर्यावरण में द्वन्द्व चल रहा है। हर युग में जब-जब विकास की योजना आई तब-तब पर्यावरण का आंदोलन शुरू हो गया। यदि पर्यावरण संरक्षकों की सुनें तो विकास बंद करना पड़ेगा और उनकी बात में भी दम है कि पर्यावरण विकास से अधिक महत्वपूर्ण है लेकिन पर्यावरण बिगड़ने के बड़े नुकसान हैं। हम सभी जानते हैं कि विकास और पर्यावरण दोनों आवश्यक हैं। हमने एक को ज्यादा महत्वपूर्ण मान लिया और दूसरे को गौण। दुनिया यह मान कर चलती है कि जीवित रहना, यही अपना काम है और दुनिया ऐसी है, लाभ की दृष्टि से सोचती है, जिधर लाभ वह अपना, बाकी सब दुश्मन। इस सोच से संघर्ष पनपता है। दुनिया में जो बलवान है यह दुनिया उसके सुख के लिए है, इससे संघर्ष रहेगा, मनुष्य स्वयं को बलवान, सर्वश्रेष्ठ मानकर अन्य को दोयम दर्जे का मानता है, यह सोच ठीक नहीं। प्रकृति में हम निर्बल ही हैं। हम प्रकृति के स्वामी नहीं उसके अंश हैं। प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व से ही पर्यावरण और विकास के बीच संतुलन बनेगा। प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व का भाव भारतीय ज्ञान परम्परा का प्रेरक तत्व रहा है।

# समाज को अनुप्राणित करेगा संघ

**पंच परिवर्तन का विमर्श ही भारत को पुनः चैतन्य स्वरूप में स्थापित करेगा। संघ का विश्वास है कि इस राष्ट्र का सम्पूर्ण जनमानस, सज्जन शक्ति और समाज के विभिन्न क्षेत्रों में काम करने वाली संस्थाएं/संगठन राष्ट्रीय हित में एक साथ कार्य करेंगे तो समाज में निश्चित रूप से आमूल परिवर्तन आएगा।**

**डॉ. प्रताप निर्भय सिंह**
**शोध प्रमुख, प्रेरणा शोध संस्थान न्यास, नोएडा**

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अपनी स्थापना के सौवें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। अपनी स्थापना से लेकर अब तक की यात्रा अनेक विषम परिस्थितियों और विकट बाधाओं का सामना करते-करते एक ऐसे पड़ाव पर आ पहुंची है जिसे देखकर स्वयंसेवकों सहित देशवासियों के मन में हर्ष और उल्लास की तरंगे हिलोरे लेने लगती हैं। यह पड़ाव है संघविचार के देशव्यापी विस्तार का। यह समय है अनगिनत स्वयंसेवकों के 100 वर्षों के त्याग, तप, संघर्ष, बलिदान, समर्पण और निष्ठापूर्ण आचरण को स्मरण करने का। इस पड़ाव पर ठहरकर पीछे के मंथन के साथ, अपने महापुरुषों और कर्मयोगियों से ऊर्जा अर्जित कर आगे छलांग लगा सकने का दृढ़ संकल्प शताब्दी वर्ष में हमें अनुप्राणित करेगा।

माँ भारती को परम वैभव पद पर प्रतिष्ठित करने की अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण होनी अभी शेष है। संघ की परम्परा रही है कि प्रत्येक विशिष्ट अवसर पर स्वयंसेवक स्वयं को परम लक्ष्य हित उपार्जन यज्ञ में समिधा स्वरूप आहूत कर आगे बढ़ते हैं। ऐसे विशिष्ट अवसर प्रत्येक स्वयंसेवक के लिए ऊर्जा देने वाले, चिंतन और आचरण को नवचैतन्य देने के साधन बनते हैं।

इसी कड़ी में अपना यह शताब्दी वर्ष भी नई ऊर्जा और नई उमंग के साथ सम्पूर्ण समाज को संगठित कर माँ भारती को परम वैभव पद पर प्रतिष्ठित करने का अवसर लेकर आया है। वर्तमान में सर्वत्र अनुकूलता का समय अनुभव में आता है, संघकार्य का बहुमुखी विस्तार हुआ है। जीवन के सभी क्षेत्रों में संघ प्रेरणा से स्थापित संस्थाएं एवं संगठन राष्ट्र के उत्थान हेतु दृढ़ संकल्पित होकर जुटे हुए हैं। पिछले कुछ वर्षों में वैश्विक पटल पर भारत की पहचान भी बदली है। भारत एक समर्थ, सशक्त और आत्मनिर्भर राष्ट्र बनने की ओर अग्रसर है।

किन्तु अनुकूलता का समय अधिक चुनौतीपूर्ण होता है। अधिक सतर्कता, मूल्यपरक आचरण और नैतिक प्रतिबद्धता की इस समय सम्पूर्ण समाज को आवश्यकता है। संघ का लक्ष्य सम्पूर्ण समाज के एक-एक घटक को संगठित कर विश्व कल्याण हित नव भारत को निर्मित करने का है। यह लक्ष्य तभी सिद्ध होगा जब देश, समाज और राष्ट्र का प्रत्येक घटक उसमें भागीदारी करेगा। इस दृष्टि से अपने शताब्दी वर्ष में संघ ने दो लक्ष्य निर्धारित किए हैं। प्रथम है, संगठनात्मक दृष्टि से संघ की शाखाओं का प्रत्येक ग्राम/मंडल तक विस्तार करना एवं कार्य की गुणवत्ता में वृद्धि करना, अर्थात् संख्यात्मक विस्तार के साथ-साथ गुणात्मक वृद्धि। द्वितीय है सामाजिक दृष्टि से 'पंच परिवर्तन' के संकल्प द्वारा सम्पूर्ण भारतीय जनमानस में परिवर्तन लाना।

यह पंच परिवर्तन का विमर्श ही भारत को पुनः चैतन्य स्वरूप में स्थापित करेगा। संघ का विश्वास है कि इस राष्ट्र का सम्पूर्ण जनमानस, सज्जन शक्ति और समाज के विभिन्न क्षेत्रों में काम करने वाली संस्थाएं/संगठन राष्ट्रीय हित में एक साथ कार्य करेंगी तो समाज में निश्चित रूप से आमूल क्रान्ति आएगी। संघ का स्पष्ट रूप से यह भी मानना है कि राष्ट्र का विकास, प्रगति और उत्कर्ष तभी संभव होता है जब उसके सभी घटक तत्व, सामाजिक संगठन, समाज के लिए समर्पित संस्थाएं राष्ट्रहित सर्वोपरि की भावना से एक साथ जुट जाएं। इस दृष्टि से संघ के स्वयंसेवकों तथा विभिन्न संगठनों के

कार्यकर्ताओं को धुरी बनाकर कार्य को विस्तार देने के लिए ही 'पंच परिवर्तन' की संकल्पना को धारण किया गया है। भारतीय समाज की वर्तमान आवश्यकताओं का आकलन करते हुए इन 'पंच परिवर्तन' के लिए संघ का प्रत्येक स्वयंसेवक निष्ठापूर्वक जुटेगा। यह पंच परिवर्तन निम्न हैं :-

**समरसता -** चराचर जगत में ईश्वर का वास मानने वाले हमारे समाज में ऊंच-नीच और छुआछूत जैसी कुरीतियां ऐतिहासिक कालक्रम में न जाने कब और कैसे प्रवेश कर गयीं। समय-समय पर संतों और महापुरुषों ने उनका उन्मूलन भी किया किन्तु दुर्भाग्य से आज भी यत्र-तत्र यह बुराई देखने में आती है। जातियों, वर्गों को लेकर, गांव के तालाब, मन्दिर और श्मशान को लेकर समाज में कोई भेदभाव या विभाजन नहीं होना चाहिए। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार 'सर्वभूतहिते रताः' अर्थात सब प्राणियों के कल्याण में लगे रहने की अपनी भावना है। सभी को आत्मसात कर लेने वाली अपनी संस्कृति में ऊंच-नीच जैसी कुरीतियों का कोई स्थान नहीं है। सामाजिक समरसता हमारी राष्ट्रीय संस्कृति का स्वभाव है जो जन-जन के व्यवहार और आचरण में परिलक्षित होना चाहिए। संघ इस सन्देश को लेकर समाज के प्रत्येक सदस्य तक जाएगा।

**कुटुंब प्रबोधन -** भारतीय समाज की इकाई व्यक्ति नहीं, कुटुंब है। कुटुंब ही वह निर्माणशाला है जहां नैतिक मूल्यों से सुसंस्कृत मानव का निर्माण होता है। कुटुंब ही पीढ़ी दर पीढ़ी पूर्वजों के मूल्यों और उनके द्वारा अर्जित ज्ञान परम्परा को नई पीढ़ी में हस्तांतरित करता है। कुटुंब की पाठशाला में सभी प्रकार के कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का बोध और सम्बन्धों की समझ विकसित होती है। कुटुंब में इसका शिक्षण ही कुटुंब प्रबोधन है। कुटुंब से व्यक्ति और समाज दोनों का सब प्रकार से पोषण होता है। कुटुंब प्रबोधन भारत की कुटुंब विरासत के पुनरुद्धार का साधन है। भारत की कुटुंब संकल्पना ही विस्तृत होकर 'वसुधैव कुटुंबकम्' का विश्व कल्याणमयी स्वरूप धारण करती है। संघ द्वारा कुटुंब प्रबोधन गतिविधियों से अपनी कुटुंब परम्परा का संरक्षण और संवर्धन होगा।

**पर्यावरण -** वेदों और उपनिषदों के काल से हमने प्रकृति के महत्व को समझा है। प्रकृति की शक्ति को हमारे पूर्वजों ने 'ऋत' कहा है जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सार्वभौमिक नियम है। ईश्वर का प्रकट रूप है। प्रकृति, जिसकी वनदेवी के रूप में आज भी उपासना होती है। प्रकृति के शोषण से नहीं अपितु संयमित दोहन द्वारा पोषण की अपनी परम्परा रही है। पंच तत्वों, जीव आदि से युक्त यह पर्यावरण जीवन का आधार है। आज सम्पूर्ण विश्व पर्यावरण के गंभीर संकट से गुजर रहा है। नदी, पर्वत, मिट्टी आदि पर्यावरण के सभी घटकों की रक्षा, ये किसी एक संगठन का अभियान नहीं, वरन् पूरे समाज का दायित्व है। संघ का प्रयास है कि समाज का प्रत्येक सदस्य पर्यावरण संरक्षण हेतु जागरूक एवं कर्तव्यबद्ध हो।

**स्व :** 'स्व' आधारित व्यवस्था का आग्रह – हमारे राष्ट्र भारत की एक चेतना है, इसका एक स्वभाव है। भारत का स्वभाव इसके नाम में भी निहित है जिसका अर्थ है 'ज्ञान प्राप्ति में रत'। भारत का स्वभाव 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के रूप में भी गुंजित हुआ है। किन्तु यह अलग-अलग दिखने वाले भाव जहां से निःसृत हुए उसका मूल है 'धर्म-तत्व'। अब हमें स्व-तंत्र विकसित करना है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में 'स्व' पर आधारित व्यवस्था को स्थापित करना है। 'स्व-बोध' का स्वाभिमान और स्वदेशी भाव पर जीवन को उत्कृष्ट बनाने की चेष्टा अपना सम्पूर्ण समाज धारण करे, उस दिशा में उत्कंठ प्रयत्न के लिए हमारी कटिबद्धता स्वदेशी के प्रति होनी चाहिए। धर्म-संस्कृति रक्षार्थ अपना सर्वस्व अर्पित कर देने वाले हमारे महान पूर्वजों तथा पराधीनता के विरुद्ध अपना जीवन बलिदान कर देने वाले हमारे अनगिनत महापुरुषों की प्रेरणा 'स्व' तत्व ही रहा है। देश के जन-जन में 'स्व-बोध' एवं स्वावलंबन जगे उसके लिए संघ सम्पूर्ण समाज का आह्वान कर इसके लिए जुटेगा।

**पंच परिवर्तन भारत को वैभव सम्पन्न राष्ट्र के रूप में विकसित करने के आलंबन हैं। इनका सौन्दर्य यह है कि यह सभी परिवर्तन पंथनिरपेक्ष हैं अस्तु सभी समुदायों, सम्प्रदायों को स्वीकार्य होंगे। एक राष्ट्र के घटक तत्व के रूप में किसी भी भारतीय को इनके अनुपालन में और इनके धारण करने में किसी प्रकार का संकोच नहीं होगा।**

**नागरिक कर्तव्य -** किसी देश का समुचित विकास तभी संभव है, जब उसके नागरिकों में नागरिक कर्तव्य का बोध हो और उसके पालन के प्रति कठोरता हो। संविधान में निर्देशित नागरिक कर्तव्यों और देश के कानून का निष्ठा के साथ अनुपालन करना देश के प्रत्येक नागरिक के आचरण में होना चाहिए। यदि देश का प्रत्येक नागरिक अपने अधिकारों के स्थान पर अपने कर्तव्यों को अधिक महत्व देने लगे तो 'देश हमें देता है सबकुछ, हम भी तो कुछ देना सीखें' का भाव विकसित हो जाता है। संघ की दृष्टि में नागरिक कर्तव्य की अवधारणा में संवैधानिक कर्तव्यों के साथ-साथ सामाजिक दायित्व का बोध भी निहित है। जिस दिन भारत के नागरिक अपने दायित्वबोध से युक्त होकर अपने कर्तव्यों का शत-प्रतिशत अनुपालन करने लगेंगे, हमारा देश उसी दिन से वैश्विक पटल पर सुदृढ़ता के साथ प्रतिष्ठित हो उठेगा।

उपरोक्त पंच परिवर्तन भारत को वैभव सम्पन्न राष्ट्र के रूप में विकसित करने के आलंबन हैं। इनका सौन्दर्य यह है कि यह सभी परिवर्तन पंथनिरपेक्ष हैं अस्तु सभी समुदायों, सम्प्रदायों को स्वीकार्य होंगे। एक राष्ट्र के घटक तत्व के रूप में किसी भी भारतीय को इनके अनुपालन में और इनको धारण करने में किसी प्रकार का संकोच नहीं होगा। ■

# 'स्व' से साक्षात्कार

**जे. नन्द कुमार**
**राष्ट्रीय संयोजक, प्रज्ञा प्रवाह**


**'स्व' राष्ट्र की प्रामाणिक पहचान है। यद्यपि राष्ट्र शब्द का उपयोग प्राय: अंग्रेजी के नेशन के रूप में किया जाता है, जबकि 'राष्ट्र' शब्द का अनुवाद 'नेशन' के रूप में नहीं किया जा सकता। राष्ट्र राजनीतिक से अधिक एक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक अवधारणा है।**

राष्ट्र के लिए 'स्व' का क्या अर्थ है? यह क्या दर्शाता है? जैसा कि स्वामी विवेकानन्द कहते हैं, "सामान्य मानवता से परे प्रत्येक राष्ट्र, चरित्र की एक निश्चित विशिष्टता विकसित करता है। वह धर्म, राजनीति, भौतिक शरीर, मानसिक प्रकृति, पुरुषों और महिलाओं में दृष्टिगोचर होता है। कोई राष्ट्र अपने चरित्र की एक विशेषता विकसित करता है, तो किसी दूसरे राष्ट्र की अन्य विशेषता होती है"।

'स्व' राष्ट्र की प्रामाणिक पहचान है। यद्यपि राष्ट्र शब्द का उपयोग प्रायः अंग्रेजी के नेशन के रूप में किया जाता है, जबकि 'राष्ट्र' शब्द का अनुवाद 'नेशन' के रूप में नहीं किया जा सकता। राष्ट्र राजनीतिक से अधिक एक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक अवधारणा है। राष्ट्रत्व और राष्ट्रीयता की अवधारणाओं की जड़ें राष्ट्र में हैं। 'राष्ट्रत्व' अंग्रेजी का 'नेशनहुड' भी नहीं है। राष्ट्रत्व और नेशनहुड पूर्णतः भिन्न हैं। राष्ट्र, राष्ट्र-राज्य और राष्ट्रवाद की अवधारणाएं उन्नीसवीं सदी के यूरोप में औद्योगीकरण के निजी आर्थिक हितों और सामाजिक परिवर्तन से विकसित हुईं, इसलिए यूरोप में राष्ट्रवाद को लेकर यह मत है कि राजनीतिक सीमाएं सांस्कृतिक समुदायों के अनुरूप होनी चाहिए। इसलिए संस्कृति को मुख्य रूप से साझा भाषा द्वारा परिभाषित किया जाना चाहिए।

भारतीय और पश्चिमी अवधारणाओं का तुलनात्मक विश्लेषण करते हुए प्रख्यात विचारक और वरिष्ठ आरएसएस प्रचारक श्री रंगा हरि अपने लेख "हिन्दुत्व : भारतीय राष्ट्रत्व" में लिखते हैं कि 'जब वैज्ञानिक और व्युत्पत्तिशास्त्रीय रूप से विश्लेषण किया जाता है, तो राष्ट्रवाद को नेशनहुड के बराबर मानना उतना ही गलत है, जितना कि 'उपनयन' को सूत्र समारोह कहना।' 'सूत्र समारोह' के रूप में अनुवाद करते ही 'उपनयन' की मूल संस्कृति और भावना विकृत हो जाती है। मृत्यु के बाद की क्रियाएं यथा श्राद्धकर्म के दौरान एक परंपरा है, जिसमें कुरचा (कुश की पत्तियों से बने दिवंगत आत्मा के प्रतीक) पर एक धागा (सूत्र) बांधा जाता है। यह भी सूत्र की एक रस्म है। लेकिन, यह पवित्र 'उपनयन' का विकल्प नहीं हो सकता। इसी तरह, क्या कोई यह कह सकता है कि जब दुल्हन के गले में दूल्हा मंगलसूत्र बांधता है तो उसने अपनी दुल्हन का 'उपनयन संस्कार' किया है? नहीं, क्योंकि 'उपनयन' से जुड़ा प्रतीक और भाव गहरे अर्थ लिए है। पश्चिमी सांस्कृतिक बोलचाल में ऐसी परिकल्पना ही नहीं है, इसलिए इस शब्द का अनुवाद किया ही नहीं जा सकता है।

ऐसा ही भारतीय सन्दर्भ में राष्ट्रत्व के सम्बन्ध में है। किसी समाज का राष्ट्र के रूप में विकास उस समाज को बनाने वाले लोगों की विशेष पहचान या 'स्व' के आधार पर होता है। उदार बनने की उनकी आकांक्षा, संगठित होने की उनकी ललक, भीतर की दिव्यता को पहचानने की उनकी क्षमता, ब्रह्मांड के समान मन को विकसित करने की उनकी निष्ठा, ये सभी राष्ट्र के 'स्व' से संबंधित हैं।

वास्तव में, 'स्व' किसी राष्ट्र के अस्तित्व के उद्देश्य या उसके लक्ष्य को आकार देता है।

नेपोलियन ने एक बार इंग्लैंड को 'व्यापारियों का देश' कहा था। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि अर्थशास्त्र इंग्लैंड का राष्ट्रीय आदर्श है, जबकि फ्रांस के लिए यह राजनीति पर आधारित है। वहीं भारत के लिए यह आदर्श 'धर्म' है। स्वामी विवेकानन्द ने बताया था कि भारत के 'स्वत्व' से ही इसका अस्तित्व है। मानव जाति को आध्यात्मिक मार्ग पर प्रशस्त करना ही भारत का लक्ष्य, भारत के अस्तित्व की रीढ़ और आधार है, उसके अस्तित्व का कारण है। अपने जीवन-क्रम में भारत अपने पथ से कभी विचलित नहीं हुआ, चाहे तातार ने शासन किया हो, या तुर्कों ने, मुगलों ने या फिर अंग्रेजों ने।

महर्षि अरविंद के अनुसार, 'सनातन धर्म' ही भारत का स्वभाव है। अपने प्रसिद्ध उत्तरापाड़ा भाषण में वे कहते हैं, "मैं अब यह नहीं कहता कि राष्ट्रवाद एक पंथ, एक धर्म, एक आस्था है, मैं कहता हूँ कि सनातन धर्म ही हमारे लिए राष्ट्रवाद है। इस हिंदू राष्ट्र का जन्म सनातन धर्म के साथ हुआ, उसी के साथ वह चलता है, उसी के साथ उसका विकास होता है। सनातन धर्म का पतन होता है तो राष्ट्र का पतन होता है और सनातन धर्म नष्ट होगा, तो वह भी नष्ट हो जाएगा। सनातन धर्म ही राष्ट्रवाद है।"

राष्ट्र के स्वत्व के बारे में अपने विचार को घर-घर तक पहुंचाने के लिए पूजनीय गुरुजी दो शब्दों अस्तित्व और अस्मिता का उल्लेख करते थे। श्री गुरुजी ने हिमालय को दर्शाने के लिए कालिदास के कुमार संभवम् से दो भावों का उपयोग किया। कालिदास हिमालय को 'नगाधिराज' अर्थात पर्वतों का राजा (अस्तित्व) और 'देवतात्मा' (अस्मिता) कहते हैं।

एकात्म मानव दर्शन में पं. दीनदयाल उपाध्याय ने इसकी पहचान 'चिति' के रूप में की। 'चिति वह कसौटी है, जिस पर प्रत्येक कार्य, प्रत्येक दृष्टिकोण का परीक्षण किया जाता है और स्वीकार्य या अन्यथा निर्धारित किया जाता है। चिति राष्ट्र की आत्मा है। इस चिति के बल पर एक राष्ट्र समर्थ और शक्तिशाली बनता है। यह चिति ही है, जो

**आधुनिक विश्व में भारत के स्वत्व को भारतीयत्व ही माना जा रहा है। यह एक भौगोलिक शब्द है और कुछ हद तक राजनीतिक भी। अगर हमें इसे सांस्कृतिक शब्दावली में सम्बोधित करना है या फिर सभ्यतागत तरीके से इसका सही चित्रण करना है, तो इसके लिए 'हिन्दुत्व' सही शब्द होगा।**

किसी राष्ट्र के प्रत्येक महान व्यक्ति के कार्यों में प्रदर्शित होती है। प्रत्येक समाज की एक जन्मजात प्रकृति होती है, जो ऐतिहासिक परिस्थितियों का परिणाम नहीं होती।" इन महापुरुषों ने अलग-अलग शब्दावली के माध्यम से 'स्व' की अवधारणा को घर-घर तक पहुंचाया। हमारे वैश्विक दृष्टिकोण को हमारे मूल सभ्यतागत चरित्र ने आकार दिया है। यह हमारे सभी दृष्टिकोणों और मनोवृत्तियों में प्रतिबिंबित होता है। हमारे लिए पृथ्वी माता है, वायु पिता है, अग्नि मित्र है, अंतरिक्ष भाई है। भर्तृहरि के वैराग्य शतक के सौवें श्लोक में स्पष्ट उल्लेख किया गया है-

**मातर्मेदिनि तात मारुत सखे तेजः सुबन्धो जल**
**भ्रातर्व्योम निबद्ध एष भवताम् अन्त्यः प्रणामाञ्जलिः।**

हम प्रकृति को कभी अपनी व्यवस्था से बाहर की चीज नहीं मानते। हालांकि, प्रकृति स्वयं हमारी पालक है, वह हमारी देखभाल और संरक्षण की अधिकारी है। यह हमारी जिम्मेदारी है। हमें ऐसे सोचना और उस पर अमल करना होगा कि पर्यावरण हमारे अस्तित्व का एक हिस्सा है, हम इसे प्रकृति कहते हैं। इसीलिए वेद कहते हैं-

**जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं**
**नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।**
**सहस्रम् धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्रुवेव**
**धेनुरनपस्फुरन्ती।। (अथर्ववेद)**

(यथौकसम् ) जैसे एक घर में रहने वालों का समान रूप से भरण पोषण होता है, वैसे पृथ्वी पर (बहुधा) बहुत प्रकार के (विवाचसम्) विभिन्न भाषाएं बोलने वाले, (नाना धर्माणम्) भिन्न भिन्न मतों वाले जनसमुदाय का (द्रविणस्य सहस्रम् ) हजारों प्रकार के धन धान्य से (विभ्रती) भरण पोषण होता है। ठीक उसी प्रकार जैसे एक गौ स्थिर खड़ी हुई बिना किसी भेदभाव से सबको हजारों धाराओं से दूध देती है।

भारतीय दर्शन में लिंगभेद कभी मुद्दा नहीं रहा। हमारी संस्कृति में हम स्त्री-पुरुष में भेदभाव नहीं करते। हम सृष्टि में विद्यमान विविधता का सम्मान करते हैं। फिर भी, हम मानते हैं कि सभी एक माँ की संतान हैं। विश्व बन्धुत्व की अवधारणा हमारे रक्त में है। स्वीकृति भी हमारे स्वभाव का एक और महत्वपूर्ण गुण है। यह 'सर्वत्र' हमारे 'स्व' से प्रेरित दर्शन के सार्वभौमिक पहलू को दर्शाता है। इसी आलोक में, हमें अपनी 'वसुधैव कुटुंबकम' की अवधारणा को समझना होगा। हमारे लिए विश्व न तो गांव है और न ही बाजार, यह हमारा घर, हमारा परिवार है।

इस भूमि की प्रबुद्ध आत्माओं ने इस विचार को न केवल उद्‌घाटित किया, बल्कि इसके उद्‌भव और विकासक्रम से बढ़ते हुए यह विचार विकसित होकर प्रकट हुआ है, जिन्हें बाद में, हम पर कब्जा करने के लिए यहां आए आक्रामणकारियों, लुटेरों, से अलग पहचान देने के लिए हिन्दू कहा गया। तभी से हिन्दुत्व शब्द प्रचलन में आया। आधुनिक विश्व में भारत के स्वत्व को भारतीयत्व ही माना जा रहा है। यह एक भौगोलिक शब्द है और कुछ हद तक राजनीतिक भी। अगर हमें इसे सांस्कृतिक शब्दावली में संबोधित करना है, या फिर सभ्यतागत तरीके से इसका सही चित्रण करना है, तो इसके लिए 'हिन्दुत्व' सही शब्द होगा। कोई अन्य नामकरण 'स्व' या सहज आत्म-चेतना को विशेष रूप से 'हिन्दुत्व' के रूप में समझा नहीं सकता है। इन पहलुओं को समझे बिना वास्तविक भारत को नहीं समझा जा सकता। ■

# भारतीय ज्ञान परम्परा का शिक्षा में समावेश

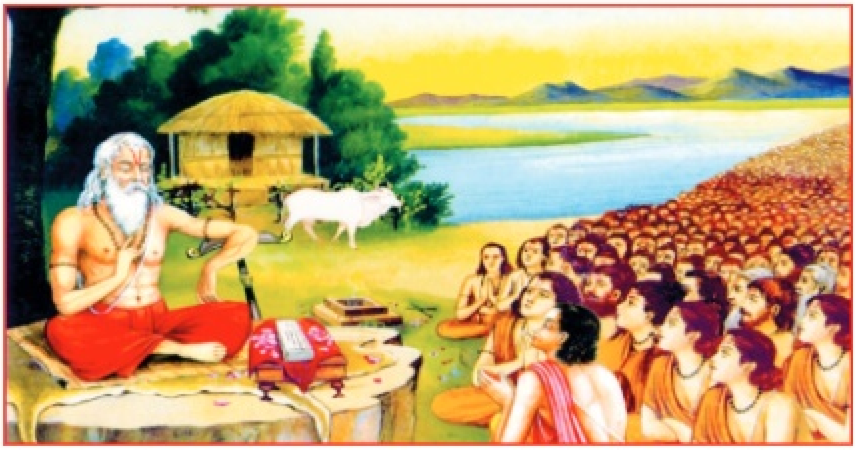

डॉ. अतुल कोठारी
राष्ट्रीय सचिव, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास

स्वदेशी शिक्षा ही छात्रों को 'स्व' की पहचान कराती है और उनमें स्वत्व के बोध का कारक बनती है। यह विद्यार्थीयों को स्वभाषा, स्वभूषा, 'स्व' का खान-पान, स्वधर्म, स्वदेश, स्वसंस्कृति एवं 'स्व' की सभ्यता से जोड़ती है। स्वदेशी शिक्षा ही शिक्षार्थी की अभिव्यक्ति और विचार को प्रतिबिम्बित करती है। यदि वृक्ष अपनी जड़ों से अलग हो जाए तब उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है। पिछले लगभग 175 वर्ष पुरानी लार्ड मैकॉले द्वारा भारतियों पर थोपी गई अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली के कारण हमारे देश की पीढ़ी की भी कुछ ऐसी ही स्थिति हुई है। दुर्भाग्य से स्वतंत्र भारत में भी हमारी शिक्षा को स्वदेश से जोड़ने का कोई विशेष प्रयास नहीं किया गया और यदि थोड़ा बहुत हुआ भी है तो वह न के बराबर ही है। किन्तु हम सभी के लिए हर्ष की बात यह है कि वर्तमान केन्द्र सरकार के द्वारा प्रस्तुत राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 ने फिर से शिक्षा को भारत के मूल स्वभाव से, हमारी जड़ों से जोड़ने का मार्ग प्रशस्त किया है। चुनौती यही है कि शिक्षा क्षेत्र से जुड़े हमारे आचार्य, शिक्षाविद् एवं शैक्षिक प्रबंधनकर्ता इस नई नीति को लागू करने में कितना गंभीर प्रयास कर पाते हैं। उन सबके दृढ़ संकल्प, समर्पण एवं निष्ठा पर ही नई शिक्षा नीति की सफलता निर्भर करेगी।

स्वदेशी शिक्षा को पुनः स्थापित करने के सन्दर्भ में हमें अपने स्वत्व को, भारत के मूल स्वभाव को, इसकी प्रकृति और दर्शन परम्परा को जानना समझना अनिवार्य होगा क्योंकि इसे

> **स्वदेशी शिक्षा ही विद्यार्थियों को स्वभाषा, स्वभूषा, 'स्व' का खानपान, स्वधर्म, स्वदेश, स्वसंस्कृति एवं 'स्व' की सभ्यता से विद्यार्थी को जोड़ती है। साथ ही स्वदेशी शिक्षा, शिक्षार्थी की सोच को प्रतिबिम्बित करती है। क्योंकि जो वृक्ष अपनी जड़ से अलग हुए वह अस्तित्वहीन हो जाते हैं।**

अंगीकृत किये बिना शिक्षा व्यवस्था में अपेक्षित परिवर्तन और स्व केन्द्रित नई शिक्षा नीति का क्रियान्वयन संभव नहीं होगा। जब हम स्वदेशी शिक्षा को अमल में लाने की बात करते हैं तब यह स्पष्ट हो जाता है कि इसके लिए स्वभाषा का प्रश्न प्राथमिक और महत्वपूर्ण है। हमें समझना होगा कि भाषा मात्र संप्रेषण का माध्यम नहीं है, यह संस्कृति की संवाहिका है। जिस भाषा को बालक माँ के गर्भ से सीखना प्रारम्भ करता है उसमें वह सहजता से सीखता है। 'स्वभाषा में शिक्षा' यह पूर्णरूप से वैज्ञानिक दृष्टि है। वैश्विक स्तर पर बाल-मनोविज्ञान और भाषा सम्बन्धित जो भी अध्ययन, अनुसंधान हुए हैं, उन सबका निष्कर्ष एक ही है कि बालकों की शिक्षा मातृभाषा में ही होनी चाहिए। इसी प्रकार शिक्षा की राष्ट्रीय, अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं ने या महापुरुषों एवं समय-समय पर गठित शैक्षिक आयोगों ने भी इसी बात को दोहराया है। पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए. पी.जे अब्दुल कलाम ने एक महाविद्यालय में छात्रों के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा था कि "मैं अच्छा वैज्ञानिक इसलिए बना कि मेरी 12वीं तक पढ़ाई मातृभाषा में हुई है।" इसके साथ महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारी भाषाएं पूर्णरूप से वैज्ञानिक हैं। राष्ट्रीय मस्तिष्क अनुसंधान केन्द्र, मानेसर की डॉ. नन्दिनी सिंह के अनुसंधान के अनुसार "अंग्रेजी की पढ़ाई से मस्तिष्क का बायां हिस्सा अधिक सक्रिय होता है, जबकि हिन्दी की पढ़ाई से मस्तिष्क के दोनों हिस्से समान रूप से सक्रिय होते हैं।" इसी प्रकार सर आइजेक पिटमेन ने कहा था कि "यदि संसार में कोई सर्वांगपूर्ण लिपि है तो वह देवनागरी है।" हमारी भाषा की वैज्ञानिकता में लिपि का भी महत्वपूर्ण योगदान है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर के कथन के अनुसार "यदि विज्ञान को जनसुलभ बनाना है तो मातृभाषा के माध्यम से ही विज्ञान की शिक्षा दी जानी चाहिए, आज विश्व के सभी विकसित देशों में वहां की शिक्षा, शासन-प्रशासन का कार्य, अनुसंधान आदि की भाषा वहां की 'स्व' भाषा ही है। अस्तु भारत

को प्रगति के पथ पर अग्रसर करना है तो इसका एक महत्वपूर्ण माध्यम शिक्षा व्यवस्था को स्वदेशी बनाना और बालक के लिए सीखने की प्रक्रिया को मातृभाषा पर आधारित करना होगा"।

**राष्ट्रीय शिक्षा नीति :** इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में भारतीय ज्ञान परम्परा का शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर समावेश की अनुशंसा की गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति की प्रस्तावना में लिखा है- प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और सत्य की खोज को भारतीय विचार परम्परा और दर्शन में सदा सर्वोच्च मानवीय लक्ष्य माना जाता था। प्राचीन भारत में शिक्षा का लक्ष्य सांसारिक जीवन अथवा विद्यालय के बाद के जीवन की तैयारी के रूप में ज्ञान अर्जन करना मात्र नहीं बल्कि आत्मज्ञान और मुक्ति के रूप में माना गया था। प्रस्तावना के अंत में नीति के उद्देश्य के संदर्भ में लिखा है कि नीति का विजन छात्रों में भारतीय होने का गर्व न केवल विचारों में बल्कि व्यवहार, बुद्धि और कार्य में भी और साथ ही ज्ञान, कौशल, मूल्यों और सोच में भी होना चाहिए। जो मानव अधिकारों, स्थाई विकास और जीवन यापन तथा वैश्विक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध हो ताकि वे सही अर्थों में वैश्विक नागरिक बन सकें। इसी तरह छात्रों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास एवं चरित्र-निर्माण तथा सभी स्तरों पर यथा, पाठ्यक्रम, शिक्षण-अधिगम, परीक्षा-मूल्यांकन, शोध आदि में समग्रता की दृष्टि (होलिस्टिक एप्रोच) की बात कही गई है। साथ ही, भारतीय संवैधानिक एवं नैतिक मूल्यों, स्वदेशी, स्थानीय भाषा, कला-कारीगरी, परम्परा के समावेश तथा भारतीय संस्कृति, खेल एवं कला के एकीकरण की बात कही गई है। इनके आधार पर विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रम में भारतीय ज्ञान परम्परा का समावेश किया जा सकता है।

**पाठ्यचर्या में समावेश :** इस दिशा में अपरिहार्य है कि प्रत्येक विषय की पाठ्यचर्या में उस विषय के भारतीय इतिहास को रखा जाए। इस हेतु रसायन शास्त्र में प्रफुल्लचन्द्र राय लिखित हिन्दू केमिस्ट्री का समावेश, प्रबंधन के पाठ्यक्रम में चाणक्य, गीता, रामायण, शिवाजी आदि के प्रबंधन का समावेश, गणित में वैदिक गणित, श्रीनिवास रामानुजन आदि का समावेश किया जा सकता है। इस प्रकार का प्रयास प्रत्येक विषय में होना चाहिए। पाठ्यक्रमों में समग्रता लाने के लिए विद्यालय से लेकर उच्च शिक्षा तक भारतीय ज्ञान परम्परा पर एक आधार पाठ्यक्रम सभी छात्रों के लिए अनिवार्य किया जाना चाहिए। सभी स्तरों के पाठ्यक्रमों को पंचकोश की आधारभूत संकल्पना को आधार बनाकर पाठ्यक्रम तैयार किए जाने चाहिए। इस हेतु प्राथमिक से लेकर शिक्षक-शिक्षा, स्नातक, परास्नातक आदि के पाठ्यक्रम पंचकोश आधारित तैयार किए जाने चाहिए। यह भी अवलोकनीय है कि हमारे शिक्षा संस्थानों में अनेक दशकों से गलत, विकृत एवं विसंगतिपूर्ण तथा अधिक मात्रा में आक्रमणकारियों का इतिहास पढ़ाया जाता रहा है, उसे बदलना सबसे प्राथमिकता का विषय है। साथ ही पाठ्यचर्या को विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास पर आधारित करने लिए सभी स्तर के पाठ्यक्रमों में योग-शिक्षा को स्थान देना चाहिए। विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रमों, पाठ्य-पुस्तकों में भारतीय ज्ञान परम्परा के समावेश में कुछ समय लग सकता है परंतु कम अवधि के पाठ्यक्रम तुरंत प्रारंभ किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, वैदिक गणित, चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व के समग्र विकास, पर्यावरण की भारतीय दृष्टि, वेदों का अध्ययन, भारतीय कला एवं स्थापत्य, कौटिल्य का अर्थशास्त्र व राजनीति शास्त्र, एकात्म मानव दर्शन, उपनिषद् का अध्ययन, योग, हिन्दू दर्शन का अध्ययन इत्यादि प्रकार के पाठ्यक्रम, प्रमाण-पत्र, क्रेडिट कोर्स एवं डिप्लोमा के रूप में प्रारंभ किए जा सकते हैं।

> **रसायन शास्त्र में प्रफुल्लचन्द्र राय लिखित हिन्दू केमिस्ट्री का समावेश, प्रबंधन के पाठ्यक्रम में चाणक्य, गीता, रामायण, शिवाजी आदि के प्रबंधन का समावेश, गणित में वैदिक गणित, श्रीनिवास रामानुजन आदि का समावेश किया जा सकता है।**

**भारतीय भाषाओं की शब्दावली का प्रयोग :** पाठ्यचर्या और पुस्तकों में भारतीय ज्ञान परम्परा के समावेश का एक प्रमुख मार्ग भारतीय शब्दावली का उपयोग है। प्रत्येक शब्द के अर्थ होते हैं, अर्थों के भाव होते हैं। उसके आधार पर जीवन दृष्टि का विकास होता है। परंतु कई शब्दों के अंग्रेजी अनुवाद से उनके अर्थ बदल जाते हैं। वैसे शब्दों का अंग्रेजी में रोमन लिपि में यथावत प्रयोग करना चाहिए। जैसे भारत, धर्म, मोक्ष, संस्कृति आदि शब्दों को यथावत रोमन लिपि में लिखना। भारतीय ज्ञान परम्परा के अंतर्गत, विशेषतः उपनिषदों में अनेक शिक्षण-पद्धतियों की ओर संकेत है। उपनिषदों में ज्ञान प्राप्ति हेतु श्रवण, मनन और निदिध्यासन इन तीन प्रकार की प्रक्रियाओं का उल्लेख मिलता है।

**कौशल विकास :** पंडित विद्यानिवास मिश्र के अनुसार शिक्षा के मुख्य तीन आधार हैं- ज्ञान, चरित्र एवं कौशल। भारतीय परम्परा में कौशल को सदैव प्राधान्य दिया जाता रहा है। इस दृष्टि से स्थानीय कला-कारीगरी कौशल का शिक्षण में समावेश करना जिससे उन क्षेत्रों के छात्र स्थानीय कृषि, उद्योग, व्यापार एवं वहां की कला- कारीगरी का कौशल सीखेंगे और रोजगार का भी निर्माण होगा। मूलतः तैत्तिरीयोपनिषद् में इस हेतु पंचकोश की संकल्पना दी गई है उसको आधार बनाकर इसको सभी प्रकार के पाठ्यक्रम में जोड़ा जाना चाहिए।

| पंचकोश | अर्थ |
|---|---|
| 1. अन्नमय कोश | शारीरिक विकास |
| 2. प्राणमय कोश | प्राणिक विकास |
| 3. मनोमय कोश | मानसिक विकास |
| 4. विज्ञानमय कोश | बौद्धिक विकास |
| 5. आनन्दमय कोश | आध्यात्मिक विकास |

इसके साथ ही शैक्षिक संस्थाओं की व्यवस्था में भारतीयता बोध का पोषण आवश्यक है। एक प्रकार से भारतीय ज्ञान परम्परा का आधुनिकता के साथ समन्वय करके देश और दुनिया की आवश्यकताओं की पूर्ति एवं चुनौतियों के समाधान कर सके इस प्रकार शिक्षा का स्वरूप बनाने का प्रयास शिक्षा में भारतीय ज्ञान परम्परा के समावेश से संभव हो सकेगा। ■

# हमारा ‘स्व’

श्याम किशोर सहाय
संपादक, संसद टीवी

> देश-काल और परिस्थिति के अंतर से इतर सनातन सभ्यता की अलग पहचान जिस एक कारण से बनी वह है जीव-जीवन और संपूर्ण सृष्टि को देखने की विशिष्ट जीवन दृष्टि। इस जीवन दृष्टि का सिद्धांत व्यवहार रूप में सरल है, वैचारिक रूप से थोड़ा जटिल। इसकी जो सबसे बड़ी विशेषता है वह है सभी चीजों को समग्रता में देखने का भाव।

‘स्व’ से अर्थ हमारी मूल पहचान से है, मूल स्वरूप से है।‘स्व’ एक ऐसा तत्व भी है जो हमारी चिति अर्थात् चेतना में बीज रूप में स्थित रहता है। ऊर्जा के एक अक्षय स्रोत के रूप में हमें जीवन पथ पर गतिमान रखता है। अधिक स्पष्टता से समझना चाहें तो हमारा ‘स्व’ एक प्रेरक शक्ति के रूप में व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के माध्यम से विभिन्न अवसरों पर विभिन्न रूपों में प्रतिबिम्बित होता है। इस सृष्टि में जितनी जीवित इकाइयां हैं उन सभी का एक विशिष्ट स्वभाव, स्वरूप, व्यवहार और परिचय है। इन सभी में श्रेष्ठ होने के कारण मानव जीवन एक अलग ही आभा लिए हुए है। उन मानवों में भी पुण्यभूमि के रूप में वर्णित भारत के मानव की एक विशिष्ट पहचान रही है। इस आलेख में हम भारत की भूमि पर जन्मे, पले और बड़े हुए उस समुदाय की विशिष्ट जीवन शैली और जीवन दर्शन की बात करेंगे जो उसकी मूल पहचान है, जो उसका ‘स्व’ है।

सृष्टि की सर्वप्राचीन सनातन सभ्यता का वाहक यह समुदाय विश्व की अन्य सभ्यताओं से अलग पहचान रखता है। देश-काल और परिस्थिति के अंतर से इतर इस सभ्यता की अलग पहचान जिस एक कारण से बनी वह है जीव-जीवन और संपूर्ण सृष्टि को देखने की विशिष्ट जीवन दृष्टि। इस जीवन दृष्टि का सिद्धांत व्यवहार रूप में सरल है, वैचारिक रूप से थोड़ा जटिल। इस जीवन दृष्टि की जो सबसे बड़ी विशेषता है वह है सभी चीजों को समग्रता में देखने का भाव। हमने जीवन को बांट कर नहीं देखा। उदाहरण स्वरूप; काल की गणना विश्व की अन्य सभ्यताओं ने भूत, भविष्य और वर्तमान में की जो व्यवहारिक रूप से ठीक भी है। इससे आगे बढ़कर हमने इसे अनंत वर्तमान के रूप में देखा। इसी तरह मानव शरीर की बात करें तो इसे हमने केवल स्थूल शरीर के रूप में न देखकर सूक्ष्म और कारण शरीर के रूप में भी देखा। अन्य सभ्यताओं ने व्यक्ति प्रधान समाज की कल्पना की। सनातन की दृष्टि इससे अलग रही। हमने इसे वृहद स्वरूप में देखा। हमने व्यष्टि अर्थात् व्यक्ति, समष्टि अर्थात् समुदाय या संसार, सृष्टि अर्थात् प्रकृति और परमेष्टि अर्थात् परमात्मा को एक दूसरे से जुड़ा देखा। इन्हें एक ऐसे वलय के रूप में देखा जो अपने से छोटे वलय को आवृत्त किए हुए है। व्यक्ति केन्द्र में रहा लेकिन उसके चारों ही तरफ मानव समुदाय, उससे ऊपर प्रकृति और सबसे ऊपर परमात्मा का आवरण रहा। इस सभ्यता ने इन सभी के बीच एक कड़ी और जुड़ाव देखा जिसे एकात्म दर्शन कहा। सूत्र रूप में इसे उपनिषदों ने कहा-

**‘सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासित’** यह सब ब्रह्म है, सबकुछ ब्रह्म से ही आता है और वापस वहीं चला जाता है। हमने सर्वशक्तिमान ईश्वर को साकार और निराकार दोनों रूपों में पूजा। सूक्ष्म रूप में ईश्वर को प्रकृति की अनंत शक्तियों में देखा तो जगत में उसके स्थूल प्रभाव की भी पूजा की। **“एकं सद्विप्रा बहुधा वदंति”** के सूत्र ने उसकी एकात्मता और उसके बहुरूपों में आभासित होने को सिद्ध किया।

जीवन चक्र को देखने की सनातन दृष्टि अलग रही। पुनर्जन्म की संकल्पना हमारी विशिष्टता है जिसने कई जटिल प्रश्नों के तार्किक उत्तर दिया। पूर्व जन्म और अगले जन्म के ज्ञान ने इस सभ्यता को चीजों को

समग्रता में देखने की शक्ति दी। इसके अंदर से कर्म और उसके प्रभाव का सिद्धांत आया जिसने मानव को सभी जीवों में विशिष्ट बनाया। कर्म के सिद्धांत हमें 'धर्म' की ओर हमें जागृत किया।

यहां तक की प्रकृति के पंच महाभूतों यथा जल, वायु, अग्नि इनका भी धर्म नियत किया। इतना ही नहीं, व्यक्ति धर्म, समाज धर्म, राष्ट्र धर्म और युग धर्म के साथ साथ पड़ोसी धर्म, आपद धर्म तक की कल्पना की। धर्म के इस उदात्त और अनुशासनात्मक विचार और उससे नियंत्रित व्यवहार ने सनातन को ऊंचे पायदान पर पहुंचा दिया। कह सकते हैं कि धर्म के इस स्थूल और सूक्ष्म तत्व में हमारा 'स्व' अंतर्निहित हो गया। शास्त्रों में वर्णित यह धर्म हमारी दीपशिखा हो गया।

धर्म अर्थात् कर्तव्य के प्रति सचेत सनातन समाज की व्यवस्था कुछ ऐसी रही व्यक्ति के कर्तव्यों की बात करते हुए उसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के पुरुषार्थ चतुष्टय में बांध दिया। उससे पूर्व ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास के चार आश्रमों में जीवन की गति को सुनिश्चित किया। अष्टांग योग के दर्शन ने जीवन को हर दृष्टि संयमित रखने और समाधि के लक्ष्य के प्रति सचेत रहने का सुंदर सूत्र दिया। शास्त्रों ने इन आश्रमों में गतिमान रहते हुए तीन ऋणों- देव ऋण, पितृ ऋण और ऋषि ऋणों से उऋण होने का निर्देश दिया। इसके लिए देव कर्म अर्थात् यज्ञ-हवन, पितृ कर्म अर्थात श्राद्ध-तर्पण और ऋषि ऋण से उऋण होने के लिए आर्षग्रंथों का स्वाध्याय और उस ज्ञान का प्रसार करना बताया गया। इन कर्मों को करते हुए चार देवताओं की अराधना का निर्देश दिया। मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव और अतिथि देवो भव। साथ ही एक सनातनी व्यक्ति के लिए इन कर्मों की सफलता सुनिश्चित करने हेतु शिखा, सूत्र, गोत्र और संतोष को आधार बताया।

सनातन की विशेषता रही कि ऐसा जीवन जीते हुए सभी जीवों के प्रति दया और सभी के मंगल की कामना करना बताया गया है। प्रकृति और धरती के साथ माता सम सम्बन्ध की संवेदनात्मक दृष्टि ने सनातन को एक अलग ही सुंदरता प्रदान दी। **"माता भूमि पुत्रो अहं पृथिव्याः"** - मैं पृथ्वी का पुत्र हूं और पृथ्वी मेरी माता है- वेद का पृथ्वी सूक्त एक सूत्र में यह भाव स्पष्ट कर देता है। सनातन संस्कृति प्रकृति पूजक संस्कृति रही है। जहां अन्य सभ्यताओं ने प्रकृति और धरती का स्वयं के लिए शोषण किया, उस पर विजय प्राप्त करने का यथासंभव प्रयास किया, हमने प्रकृति के समक्ष विनती कर जो भी इच्छित था उसे मांग कर प्राप्त किया। साथ ही यज्ञ और हवन के माध्यम से हमने पहले प्रकृति को सब कुछ समर्पित किया।

> **स्वर्ग और नर्क की कल्पना प्रकारांतर से सभी सभ्यताओं ने की। सनातन अकेली ऐसी सभ्यता रही जिसने स्वर्ग से भी ऊपर अपवर्ग की कल्पना की। एक ऐसी अवस्था जहां अपवर्ग अर्थात् प फ ब भ म यानी- न पतन है, न फलाशा, न बंधन, न भय और न ही मृत्यु है। इसे ही हमने मोक्ष कहा।**

इन सभी विचारों से आगे बढ़ते हुए सनातन ने एक ऐसी अद्‌भुत संकल्पना प्रस्तुत की जिसने इसे शेष सभी सभ्यताओं से श्रेष्ठ बना दिया। स्वर्ग और नर्क की कल्पना प्रकारांतर से सभी सभ्यताओं ने की। सनातन अकेली ऐसी सभ्यता रही जिसने स्वर्ग से भी ऊपर अपवर्ग की कल्पना की। भारत की महिमा का वर्णन करते हुए विष्णु पुराण ने कहा - **"गायन्ति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे। स्वर्गापवर्गास्पदमार्गभूते भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्।।"** देवगण भी निरंतर यही गान करते हैं कि जिन्होंने स्वर्ग और अपवर्ग के मार्ग भूत भारत वर्ष में जन्म लिया है, वे पुरुष हम देवताओं की अपेक्षा भी अधिक धन्य हैं। यहां उल्लिखित अपवर्ग एक ऐसी अवस्था है, जहां अपवर्ग अर्थात् प फ ब भ म यानी- ना पतन है, ना फलाशा, ना बंधन, ना भय और ना ही मृत्यु है। इसे ही हमने मोक्ष कहा। एक ऐसी अवस्था जहां व्यक्ति के मोह का क्षय हो जाता है। जीवन मृत्यु के चक्र से मुक्ति का ज्ञान। इसी ज्ञान की प्राप्ति के लिए संसार का प्रथम जिज्ञासु नचिकेता यम के द्वार पर तीन दिनों तक भूखा प्यासा बैठा रहा। सनातन की यह कथा यम-नचिकेता संवाद के रूप में विख्यात है।

सनातन जीवन दृष्टि में उदात्त भावना के साथ-साथ जीवन का सूक्ष्म व्यवहारिक पक्ष कभी धूमिल नहीं हुआ। सनातन के सिद्धांतों में **"अहिंसा परमो धर्म"** कहकर हिंसा के त्याग का निर्देश दिया गया तो **"शस्त्रेण रक्षति राष्ट्रे, शास्त्र चिंता प्रवर्तते"**- शस्त्र से रक्षित राष्ट्र में ही शास्त्र का अध्ययन संभव है- ऐसा कहकर शास्त्र सम्मत हिंसा की अपरिहार्यता को भी स्पष्ट कर दिया गया। संभवतः यही कारण रहा कि हमारे सभी देवी-देवताओं के हाथों में शास्त्र के साथ-साथ शस्त्र को भी दिखाया गया है। इन विचारों, भावों और जीवन व्यवहार से गमन करते हुए जीवन के अंतिम लक्ष्य के प्रति सचेत रहने का भाव ही सनातन का मूल भाव है। वेद निर्दिष्ट सप्तऋषियों के बताए मार्ग पर चलते हुए, सृष्टि की अनश्वरता का सतत् स्मरण करते हुए, ईश्वर की सत्ता में अगाध आस्था रखते हुए सनातन मतावलंबियों के लिए जीवन का अंतिम लक्ष्य रहा आत्मा से परमात्मा से मिलन का, जीवन-मृत्यु के चक्र से मुक्ति का।

ऊपर हमने जितने बिन्दु स्पर्श किए वो सारे हमारे 'स्व' को, हमारी 'चिति' की प्रेरक शक्ति को प्रतिबिंबित करते हैं। हमारे विचार और व्यवहार में हमारा यही 'स्व' दिखता रहा है। भारत एक अध्यात्म देश है। हमारे 'स्व' में वह अध्यात्म पिरोया हुआ है। इसी क्रम में वेद का यह श्लोक सभी बिंदुओं को चरितार्थ कर रहा है-**"अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्।"** मैं ही राष्ट्री अर्थात् सम्पूर्ण राष्ट्र की चेतना शक्ति अर्थात ईश्वरी हूं। जिस सभ्यता की मूल चेतना स्वयं आद्या शक्ति हों उसके 'स्व' की और क्या व्याख्या हो सकती है। ■

# 'दासत्व' से 'स्वत्व' की ओर

**रमेश शर्मा**
**वरिष्ठ पत्रकार**

**जीवन गतिमान रहता है। समय की यह गति कई बार समाज जीवन को विषमताओं से भर देती है। लेकिन यदि स्वत्व जागृत है तो समय के साथ समाज अपने मूल की ओर लौट आता है।**

समय की गति और चुनौतियां व्यक्ति, परिवार और समाज जीवन को विसंगतियों से भर देती हैं। यदि 'स्व' चेतना जागृत है तो विषमताएं और अंधकार के बीच भी व्यक्ति और समाज अपनी विशिष्टता बनाए रखता है। यदि किसी विवशता में कुछ समयावधि के लिए कुछ परिवर्तन आया भी तो वह समय के साथ 'स्व' चेतना से पुनः जीवन्त होकर अपनी विशिष्टता की ओर लौट आता है। 'स्व' संस्कृत भाषा में एक धातु है। स्वयं, स्वत्व, स्वाभिमान, स्वावलंबन, स्वभाव, स्वाधीन, स्वदेश जैसे शब्द इसी धातु से बनते हैं। 'स्व' धातु इन शब्दों में उपसर्ग के रूप में प्रयुक्त होती है। इससे जो शब्द बने हैं उन सबका अर्थ तो अलग-अलग है उन सब शब्दों का मूल और आशय विशिष्टता लिए हुए है जो 'स्वत्व' का ही बोध कराते हैं। 'स्व' धातु से बनने वाले शब्द में निजत्व की विशिष्टता का मानक संदेश होता है। यदि कोई व्यक्ति, कोई समाज विशिष्ट है तो इसका कारण है 'स्व' की चेतना। प्रत्येक समाज और व्यक्ति में दो व्यक्तित्व होते हैं। एक दृश्यमान स्वरूप और दूसरा अदृश्यमान चेतना। किसी व्यक्ति को हम देखकर, आवाज सुनकर अथवा स्पर्श आदि से समझ लेते हैं वह उसका दृश्यमान व्यक्तित्व होता है। लेकिन मन, विचार, वृत्ति स्वभाव आदि आकार में नहीं होता। यही उसका स्वत्व है जो निराकार है जो उसके समस्त क्रियाकलाप को संचालित करता हैं। यह 'स्व' प्रत्येक दृश्यमान व्यक्ति, वस्तु, प्राणी और प्रकृति की केन्द्रीभूत चेतना होती है। विपरीत समय अथवा परिस्थिति की विवशता से जीवन में आने वाली विसंगतियों के बीच 'स्व' चेतना ही व्यक्ति अथवा समाज को सुरक्षित रखती है। परिस्थितियां कितनी ही विपरीत हों, दासता का अंधकार कितना ही सघन हों, यदि 'स्व' चेतना जागृत है तो व्यक्ति अथवा समाज अपने मूल को सुरक्षित रखने में सफल हो जाता है। लेकिन 'स्व' चेतना कमजोर होने पर दासत्व प्रबल हो जाता है और वह स्वाभिमान से समझौता करने लगता है। व्यक्ति का आचरण, व्यवहार सब 'स्व' पर ही निर्भर करता है। प्रत्येक व्यक्ति का चेहरा, रक्त विशिष्टता (डीएनए), स्वर या रुचि-अरुचि विशिष्टता सब अदृश्यमान 'स्व' के कारण होती है। 'स्व' की चेतना से ही व्यक्ति अपने परिवार, समाज का निर्माण और विस्तार करता है। परिवार या समाज का निर्माण तो मनुष्य करता है लेकिन 'स्व' का निर्माण प्रकृति करती है। अदृश्यमान 'स्व' में प्रकृति के विविध आयाम होते हैं। इसी से व्यक्ति की प्रतिभा, दक्षता, मेधा और क्षमता विशिष्ट होती है। इसी के अनुरूप समाज और राष्ट्र का विशिष्ट स्वरूप उभरता है। इसे समाज समूहों और संसार की विविधता से समझा जा सकता है। व्यक्ति जिस परिवार में जन्मा है, उस परिवार का 'स्व' और परिवार जिस समाज से सम्बन्धित है उस समाज का भी 'स्व' है। इसी प्रकार क्षेत्र विशेष और राष्ट्र का भी अपना विशिष्ट 'स्व' होता है। यह प्रकृति का निर्धारण है कि विविधता और क्षेत्र की विशिष्टताएं व्यक्ति और उसके व्यक्तित्व में भी समाहित होती हैं। 'स्व' की इसी विशिष्टता से भारत संसार में अति विशिष्ट रहा है। भारत आर्थिक, सामाजिक और बौद्धिक उच्चता के

जिस स्तर पर पहुंच गया था वहां आज तक कोई नहीं पहुंचा। इसकी झलक हजारों वर्ष पूर्व की रचना ऋग्वेद में मिलती है। धरती से लेकर अंतरिक्ष तक ऐसा कोई विषय नहीं जिसका संकेत ऋग्वेद में न मिलता हो। संसार ने यह रहस्य वेद से ही समझा कि धरती गोल है। दुनिया के विशेषज्ञों ने शल्य क्रिया भारत से ही सीखी और ईंजन की शक्ति मापने का पैमाना 'हॉर्स पावर' यानि अश्व शक्ति ऋग्वेद के 'कीर्ति अश्व' से लिया गया है। भारत में सामाजिक समरसता, सामाजिक आत्म निर्भरता और जिस कुटुंब परंपरा का विकास हुआ, उस पर आज पूरा विश्व अनुसंधान कर रहा है। तभी तो भारत को विश्व गुरु माना गया और सोने की चिड़िया कहा गया। भारतीय समाज जीवन में ज्ञान-विज्ञान और प्रकृति के स्वभाव अनुरूप जीवन शैली का विकास ही भारत का स्वत्व है।

**'स्व' से सकारात्मक प्रगति :** 'स्व' चेतना जागृत हो या विलुप्त। जीवन तो गतिमान रहता ही है। समय की यह गति कई बार समाज जीवन को विषमताओं से भर देती है। लेकिन यदि स्वत्व जागृत है तो समय के साथ समाज अपने मूल की ओर लौट आता है। अब प्रश्न उठता है कि समाज में विकृति या अवनति की स्थिति कब बनती है? इसका उत्तर स्वत्व के विलोम शब्द में है। 'स्वत्व' का विलोम 'दासत्व' है।

यदि 'स्व' विलुप्त हो गया तो समाज को विसंगति, विकृतियां घेर लेती हैं। स्वत्व का बोध अदृश्य चेतना से आरंभ होकर शरीर तक आता है। जबकि दासत्व का बोध शरीर से आरंभ होकर चेतना में समाता है। भारत ने एक लंबी अवधि तक दासत्व का अंधेरा देखा है और इस अंधेरे में अनेक पीढ़ियां रहीं। इस कारण असंख्य लोगों की चेतना में दासत्व बोध समा गया है। आज भारत में बड़ी संख्या में ऐसे लोग हैं जो दासता की स्मृतियां सहेजने में पूरी शक्ति लगा रहे हैं और भारत राष्ट्र के स्वत्व संदर्भ का परिहास करते हैं। स्वतंत्रता के बाद भी भारत में मानों 'स्व' के बोध का संघर्ष समाप्त नहीं हुआ। 'स्व' चेतना का यह संघर्ष बाहर से नहीं भीतर से है। दासता की प्रतीक कितनी परंपराएं हैं जिन्हें स्वतंत्रता के साथ ही बदलना चाहिए था वे आज भी समाज जीवन पर हावी हैं। इसका मनोवैज्ञानिक कारण है। मनुष्य के सोचने और काम करने के तरीके का एक चक्र होता है। जो शरीर से आरंभ होकर आत्मा तक जाता है और आत्मा से आरंभ होकर शरीर तक आता है। पहली परिस्थिति में शरीर का सुख या शरीर का कष्ट इन्द्रियों को प्रेरित करता है। इन्द्रियां मन को, मन मस्तिष्क को और मस्तिष्क आत्म ज्ञान को पूरी तरह ढक लेता है। मान लीजिये किसी शक्तिशाली ने एक व्यक्ति को पकड़ कर अपना दास बनाया और अपनी शक्ति से इस व्यक्ति का स्वामी बन गया है। स्वामी की पिटाई के भय अथवा प्रलोभन से दास की इन्द्रियां स्वामी के अनुरूप काम करने लगती है। यह दासत्व का पहला स्तर है। समय के साथ इन्द्रियां स्वामी के अनुरूप ढलने लग जाती हैं और स्वामी के आदेश के पूर्व ही स्वयं काम करने लगती हैं। यह दासत्व की दूसरा स्तर है। आगे चलकर तीसरा स्तर आरंभ होता है। इस स्तर पर दास अपने स्वामी की इच्छा के अनुरूप न केवल काम करने लगता है बल्कि उसमें सराहना पाने की लालसा आने लगती है। दासत्व का एक चौथा स्तर है इसमें दास स्वामी भक्ति का प्रदर्शन करके गौरवान्वित अनुभव करता है। वह अपना 'स्व' भूल जाता है। दास की आत्मा दासत्व से ढक जाती है। इसे आम बोल चाल की भाषा में आत्मा का मर जाना कहते हैं और दास का मन मस्तिष्क पूरी तरह दासत्व में ढल जाता है। इस अवस्था के बाद यदि स्वामी कहीं चला जाये तो यह दास उसकी स्मृतियों को सहेजता है और भावुक अंदाज में दूसरों को बताता है। इसे आत्मा का दासत्व कहा जाता है।

**भारत में बड़ी संख्या में आज ऐसे लोग हैं जिन्हें अपने पूर्वजों की परंपराओं, देशज मान्यताओं में हीन भाव दिखाई देता है। वे विदेशी परंपराओं के पालन से गौरवान्वित अनुभव करते हैं। यह 'स्व' चेतना के पतन का कारण होता है।**

इसके विपरीत स्वत्व आत्मा का स्वभाव है। स्वत्व का बोध आत्मा से आरंभ होकर शरीर तक आता है। यह ठीक है कि समय की विसंगतियों अथवा दासत्व का अंधकार से शरीर को दासत्व के लिये विवश कर देता है। लेकिन यदि 'स्व' चेतना जागृत है और आत्मा पर अज्ञान का पर्दा नहीं है तो विसंगतियों से उबरते ही समय आने पर स्वत्व मस्तिष्क, मन और इन्द्रियों को जाग्रत कर देता है। यह शरीर को 'स्व' अनुरूप कार्य करने को प्रेरित करता है और यहीं से दासत्व के विरुद्ध संघर्ष आरंभ होता है परिणामस्वरूप स्वत्व एवं स्वाभिमान से जीवन जीने का मार्ग प्रशस्त होता है।

**'स्व' की चेतना से ही परिवर्तन संभव**

भारत में बड़ी संख्या में आज ऐसे लोग हैं जिन्हें अपने पूर्वजों की परंपराओं, देशज मान्यताओं में हीन भाव दिखाई देता है। वे विदेशी परंपराओं के पालन से गौरवान्वित अनुभव करते हैं। यह 'स्व' चेतना के पतन का कारण होता है। दासत्व के अंधकार में अपनाये गये भाव, भाषा, भूषा, भोजन और परंपरा में इतने ढल जाते हैं कि दासत्व की स्मृतियों में विकास और प्रतिष्ठा देखते हैं। ऐसे में व्यक्ति और समाज की 'स्व' चेतना का जागरण बहुत आवश्यक होता है। 'स्व' चेतना के जागरण से ही समाज परिवर्तित होकर अपने मूल स्वरूप की ओर लौटता है। यह ठीक उसी प्रकार है जैसे रोग प्रतिरोधक क्षमता घटने पर व्यक्ति को रोग घेर लेते हैं। चिकित्सक की औषधियां दो प्रकार से काम करती हैं। एक तो रोग के वायरस को नष्ट करना और दूसरा रोग प्रतिरोधक क्षमता की वृद्धि। इससे व्यक्ति पुनः स्वस्थ होकर अपनी मूल चैतन्यता पर लौट आता है। इसी प्रकार 'स्व' चेतना का जागरण व्यक्ति और समाज को दासत्व युक्त मानस में परिवर्तन लाकर अपने मूल की ओर लौटने का सोपान है। ■

# ‘स्व’ के तंत्र में समाहित राष्ट्र का परम वैभव

**भारत में ‘स्व के तंत्र’ की अवधारणा एक व्यापक और प्राचीन विचारधारा है, जो भारतीय संस्कृति, परंपरा और दर्शन के मूल में बसी है। यह अवधारणा व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के विभिन्न स्तरों पर आत्म-जागरूकता, आत्म-नियंत्रण और आत्म-सशक्तीकरण की प्रक्रिया को संदर्भित करती है। ‘स्व के तंत्र’ का महत्व केवल व्यक्तिगत विकास तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह राष्ट्रीय विकास, सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक स्थिरता के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।**

**अनुपमा अग्रवाल**
लेखिका

स्व+तंत्र यानी अपनी परंपरा, अपनी संस्कृति व अपनी सोच अर्थात व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपनी जरूरतों और उद्देश्यों को समझकर स्वतंत्र रूप से उसका संचालन करते हुए बाह्य प्रभावों से मुक्त होकर अपने मार्ग का निर्धारण करता है। भारत में ‘स्व’ के तंत्र की अवधारणा एक व्यापक और प्राचीन विचारधारा है, जो भारतीय संस्कृति, परंपरा और दर्शन के मूल में बसी है। यह अवधारणा व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के विभिन्न स्तरों पर आत्म-जागरूकता, आत्म-नियंत्रण और आत्म-सशक्तीकरण की प्रक्रिया को संदर्भित करती है। स्व के तंत्र का महत्व केवल व्यक्तिगत विकास तक ही सीमित नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय विकास, सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक स्थिरता के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। पारंपरिक भारतीय अवधारणा में ‘स्व’ के तंत्र का गहरा संबंध योग, वेदांत दर्शन, उपनिषद् और अन्य प्राचीन दार्शनिक ग्रंथों से है। इस संदर्भ में ‘स्व’ का अर्थ आत्मा या आत्मसत्ता है, जो कि हर व्यक्ति के भीतर स्थित परम दिव्यता का प्रतीक है। भारतीय परंपरा में ‘स्व’ का तंत्र चार मुख्य बिन्दुओं-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में विभाजित किया गया है।

व्यक्ति के आंतरिक ‘स्व’ का तंत्र उसके धर्म अर्थात कर्तव्य से संचालित होता है। जो केवल व्यक्तिगत स्तर पर न होकर सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर भी लागू होता है। स्व का तंत्र उस धन (अर्थ) और संसाधनों के प्रति भी है, जिसे व्यक्ति अपनी क्षमता से अर्जित करता है, लेकिन इसे समाज और राष्ट्र की समृद्धि के साथ जोड़ा जाता है। जबकि व्यक्तिगत इच्छाओं (काम) को नियंत्रित करने का तंत्र, जिसमें संतुलन और अनुशासन प्रमुख भूमिका निभाते हैं। इनको स्व के द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। साथ ही जीवन का अंतिम उद्देश्य मुक्ति (मोक्ष) है, जहां व्यक्ति स्व पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर आत्मा व परमात्मा की प्राप्ति करता है।

राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में ‘स्व’ के तंत्र की अवधारणा केवल व्यक्तिगत आत्म-साक्षात्कार तक सीमित नहीं है, बल्कि यह देश और समाज के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महात्मा गांधी द्वारा उठाई गई ‘स्वराज’ की आवाज ‘स्व’ के तंत्र का एक प्रमुख उदाहरण है। स्वराज यानी स्व-शासन का तात्पर्य केवल विदेशी सत्ता से स्वतंत्रता नहीं था, बल्कि यह आत्म-नियंत्रण, आत्म-संयम और आत्मनिर्भरता की ओर संकेत करता है। गांधीजी ने यह स्पष्ट किया कि जब तक देशवासी अपने व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन में ‘स्व’ का तंत्र स्थापित नहीं करेंगे, तब तक सच्चा स्वराज्य प्राप्त नहीं हो सकता। ‘स्व’ के तंत्र की अवधारणा का एक प्रमुख भाग स्वदेशी जागरण है, जहां लोगों को अपनी क्षमताओं और संसाधनों पर निर्भर

रहने के लिए प्रेरित किया गया। इसका उद्देश्य था कि भारतीय लोग अपने उत्पादन और संसाधनों का उपयोग कर आत्मनिर्भर बनें और विदेशी वस्तुओं पर अपनी निर्भरता कम करें। गांधीजी के सर्वोदय दर्शन में भी 'स्व' के तंत्र की अहम भूमिका है, जिसमें हर व्यक्ति के उत्थान के लिए सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता बताई गई।

भारतीय समाज और संस्कृति में 'स्व' के तंत्र का प्रमुख स्थान रहा है। परिवार, समाज और समुदायों के बीच एक दूसरे के प्रति जिम्मेदारी और सेवा का भाव इस तंत्र का अभिन्न अंग है। भारतीय समाज में यह माना जाता है कि व्यक्तिगत उन्नति तभी संभव है, जब व्यक्ति अपने 'स्व' की पहचान कर समाज और देश के प्रति अपनी जिम्मेदारियों और कर्तव्यों को समझकर उन्हें ईमानदारी से निभाएं। भारतीय संस्कृति में 'स्व' का तंत्र सेवा भाव से भी जुड़ा है। 'सेवा परमो धर्मः' की अवधारणा यह बताती है कि आपके पास जो कुछ भी है उसमें से दूसरों की सेवा या सहायता के लिए कुछ निकालना 'स्व' है, जो धन कमाया है उसमें से एक भाग समाज के लिए दान दें यही भारतीय संस्कृति है। खेत में धान बोती महिलाएं गीत गाती हैं- 'साधु, संन्यासी, अतिथि सबको देंगे तब स्वयं के लिए रखेंगे'। इसके अतिरिक्त 'स्व' आचरण बुजुर्गों, दीन दुखियों, वंचितों के प्रति सेवा भाव पैदा करता है तथा दया, करुणा, अहिंसा, परोपकार, समर्पण, अपरिग्रह, समरसता का भाव 'स्व' में समाहित है। 'वसुधैव कुटुंबकम्' अर्थात् सम्पूर्ण विश्व को परिवार मानने की संकल्पना 'स्व' में समाहित है। अतः व्यक्तिगत जीवन में 'स्व' का तंत्र तभी सफल हो सकता है जब व्यक्ति समाज की भलाई के लिए कार्य करे।

भारतीय धार्मिक और आध्यात्मिक परंपराओं में भी 'स्व' का तंत्र एक केंद्रीय तत्व है। योग, ध्यान, और आध्यात्मिक साधनाएं व्यक्ति को अपने भीतर के 'स्व' से जोड़ने और उसकी वास्तविकता को समझने का मार्ग दिखाती हैं। यह केवल व्यक्तिगत शांति के लिए नहीं, बल्कि समाज और राष्ट्र के सामूहिक कल्याण के लिए आवश्यक माना जाता है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' अर्थात् सभी के सुख की कामना 'स्व' की ही अवधारणा है।

आधुनिक भारत में 'स्व' का तंत्र नए अर्थ में व्याख्यायित हो रहा है। आत्मनिर्भरता और आत्म-जागरूकता को न केवल व्यक्तिगत स्तर पर बल्कि सामूहिक और राष्ट्रीय स्तर पर भी प्राथमिकता दी जा रही है। जिसके तहत प्रधानमंत्री मोदी के द्वारा शुरू किया गया आत्मनिर्भर भारत अभियान 'स्व' के तंत्र की आधुनिक व्याख्या है। इसका उद्देश्य है कि भारत अपने उत्पादन, तकनीकी विकास और वैश्विक बाजारों में प्रतिस्पर्धा करने हेतु आत्मनिर्भर बने। 'स्व' का तंत्र अब सामाजिक सशक्तीकरण का भी एक हिस्सा है, जिसमें व्यक्ति और समाज दोनों को उनकी पूर्ण क्षमता का अहसास कराया जाता है। महिलाओं, वंचित वर्गों तथा अन्य समुदायों के लोगों को सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से सशक्त बनाना भी 'स्व' का तंत्र है ताकि वे समाज में सक्रिय योगदान कर सकें। 'स्व' के तंत्र का उद्देश्य समाज में सामाजिक और आर्थिक असमानता को दूर कर सभी को समान अवसर प्रदान करना है।

**प्रत्येक राष्ट्र का 'स्व' उसकी प्रकृति है। 'स्व' में ही व्यक्ति और राष्ट्र को गढ़ने की क्षमता होती है। प्रत्येक राष्ट्र जब अपने जन, जंगल, जमीन, जल और सांस्कृतिक परिवेश में तंत्र का निर्माण करता है, तब सुशासन की स्थापना होती है। महर्षि दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी जैसे अनेक महापुरुषों ने स्वदेश और स्वराज का गुणगान ही नहीं किया बल्कि उसी में रामराज्य की अवधारणा के दर्शन किये।**

प्रत्येक राष्ट्र का 'स्व' उसकी प्रकृति है। 'स्व' में ही व्यक्ति और राष्ट्र को गढ़ने की क्षमता होती है। प्रत्येक राष्ट्र जब अपने जन, जंगल, जमीन, जल और सांस्कृतिक परिवेश में तंत्र का निर्माण करता है, तब सुशासन की स्थापना होती है। महर्षि दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी जैसे अनेक महापुरुषों ने स्वदेश और स्वराज का गुणगान ही नहीं किया बल्कि उसी में रामराज्य की अवधारणा के दर्शन किये। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने स्वतंत्र की व्याख्या करते हुए कहा था कि, "स्वतंत्रता और परतंत्रता का अंतर शासन के सूत्रों का विदेशियों और स्वदेशियों के हाथ में रहना मात्र नहीं है। महत्वपूर्ण यह जान लेना है कि एक विदेशी शासक सुशासन दे सकता है पर स्वराज नहीं।" गीता में भी कहा गया है कि स्वराज तभी आएगा जब 'स्व' तंत्र की स्थापना होगी और स्वतंत्रता से सुशासन स्थापित होगा।

'स्व' के तंत्र द्वारा परम वैभव को प्राप्त करने के लिए भारतीय जनमानस को स्वाभिमान, स्वावलंबन के आधार पर सुसंगठित समाज की रचना करनी होगी तथा प्रत्येक नागरिक को देश के संविधान और कानूनों का पालन, राष्ट्रीय दायित्व समझकर करना होगा क्योंकि आत्मानुशासन में कर्तव्य बोध निहित होता है और कर्तव्य पालन से अधिकार स्वतः प्राप्त होते हैं।

'स्व' के तंत्र की अवधारणा भारतीय जीवन-दर्शन का एक महत्वपूर्ण भाग है, जो आत्म-जागरूकता, आत्म-नियंत्रण और आत्मनिर्भरता के सिद्धांतों पर आधारित है। इसलिए राष्ट्र के विकास, सामाजिक स्थिरता, और सांस्कृतिक पहचान के निर्माण में भी इसका विशेष योगदान है। ऐसे में भारत को अपने 'स्व' को अंगीकार करना होगा। तभी 'स्व' तंत्र की प्राप्ति होगी और राष्ट्र परम वैभव को प्राप्त होगा। ■

# भारतीय दर्शन में अर्थ चिंतन

**डॉ. बजरंग लाल गुप्त**
**अर्थशास्त्री और समाजसेवी**

**किसी समय भारत आर्थिक रूप से खूब संपन्न था। उस समय दुनिया की अर्थव्यवस्था में भारत का हिस्सा एक चौथाई से अधिक था और यह संभव था अर्थ में भारतीय चिंतन दृष्टि के कारण।**

अर्थ चिंतन, भारत ही नहीं दुनिया की प्रत्येक समाज व्यवस्था के केंद्र में रहा है। अंतर केवल इतना है जिस समाज ने अर्थ चिंतन और अर्थ व्यवहार को सही ढंग से जांचा परखा और उचित प्रकार से उसका संयोजन किया वह समाज हर दृष्टि से प्रगति करता रहा। अंग्रेजों के आने से पूर्व कुल मिलाकर विश्व की जी.डी.पी में भारत का हिस्सा लगभग 37 प्रतिशत तक था। तो ऐसा क्यों था? यदि दुनिया भर में यह स्थान प्राप्त था तो इसका वैशिष्ट्य, अर्थ चिंतन और अर्थ व्यवहार भारतीय दृष्टि रही है। यह भी सच है कि अर्थ को हमने सब कुछ नहीं माना, अर्थ को महत्वपूर्ण माना, अर्थ को साध्य नहीं माना अर्थ को साधन माना। जिस अर्थशास्त्र को आजकल हम पढ़ते और पढ़ाते हैं दुर्भाग्य से उस अर्थशास्त्र ने अपने आप को नीतिशास्त्र से अलग कर लिया। इकोनॉमिक्स में हम पढ़ाते ही हैं, "इकोनॉमिक्स हैज नथिंग टू डू विद एथिक्स"। जो अर्थ चिंतन, अर्थ व्यवहार, आर्थिक सिद्धांत नीतिशास्त्र से अपने को अलग कर लेता हो उसका परिणाम क्या आएगा? उसका परिणाम है दुनिया भर में दिखाई देने वाली अनैतिकता और भ्रष्टाचार। भारतीय चिंतन में अर्थ व्यवहार करते समय नैतिकता अपरिहार्य है। इसी चिंतन को महात्मा गांधी ने आगे बढ़ाया था। उनका एक वाक्य बहुत प्रसिद्ध है "आई डू नॉट ड्रॉ ए शार्प कंट्रास्ट बिटवीन इकोनॉमिक्स एंड एथिक्स, इकोनॉमिक्स दैट हर्ट द मोरल वेल-बीइंग ऑफ एन इंडिविजुअल और ए नेशन इज इम्मोरल एंड देयरफोर सिनफुल"। अर्थात् "मैं अर्थशास्त्र और नीति शास्त्र के बीच कोई विभाजक रेखा मानकर नहीं चलता और जो शास्त्र ऐसा करता है वह अनैतिक है और पापपूर्ण भी।" भारत में हम अर्थशास्त्र और धर्म शास्त्र यानी नीति शास्त्र दोनों को साथ-साथ लेकर चलते रहे और इसलिए हमारी परंपरा में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ये चार पुरुषार्थ हैं।

सिद्धांत बड़े स्पष्ट हैं, मेरे विचार से आधुनिक अर्थ चिंतन में संभवतः पहले के और अंत के चतुष्टय को छोड़ दिया गया है। अर्निंग (कमाना) और कंजम्पशन (उपभोग) को ही ध्यान में रखा गया। कमाना भी धर्म आधारित नहीं है और उपभोग भी नहीं। यूरोपीय आर्थिक सिद्धांत मानता है कि जितना अधिक से अधिक उपभोग होगा उतना बाजार बढ़ेगा। हालांकि भारत में, उपभोग को हमने नकारा नहीं किन्तु भारतीय दृष्टि में सीमित, संयमित और सदाचारी उपभोग यह तीन शब्द प्रयोग होते रहे हैं अर्थात् असीमित उपभोग नहीं होना चाहिए। कुछ वर्ष पूर्व अमेरिका में जो ग्लोबल फाइनेंसियल क्राइसिस आया, उसका बड़ा कारण उपभोक्तावाद और आवश्यकता से अधिक उपभोग था। जब परमात्मा ने सीमित संसाधन ही बनाए हैं तो असीमित उपभोग कैसे करेंगे? इससे न संसार चल सकता है न समाज और न ही अर्थव्यवस्था। इसलिए भारतीय दृष्टि में संयमपूर्ण उपभोग का विशेष महत्व है।

आजकल सस्टेनेबल डेवलपमेंट की बात की जा रही है, तो उसमें उपभोग को नियंत्रित करना ही पड़ेगा। जो व्यक्ति या समाज आवश्यकता से अधिक उपभोग करता है निश्चित रूप से वह किसी न किसी के अधिकार को छीनता है। इसलिए भारत में

भाव है कि, "मैं भी भूखा न रहूं और समाज का भी कोई व्यक्ति भूखा न रहे।" प्रत्येक मनुष्य की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति की व्यवस्था अर्थ चिंतन में और अर्थव्यवस्था में रहनी चाहिए। इसी चिंतन को भारत ने स्वीकार किया है। इसी से जुड़ी है उत्पादन की व्यवस्था। पाश्चात्य दृष्टि के अनुसार जितना अधिक उपभोग होगा उतना अधिक उत्पादन होगा और उतना लाभ होगा। वहीं भारत की दृष्टि में पर्यावरण और आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उत्पादन होना चाहिए। इसी से जुड़े दो महत्वपूर्ण बिंदु हैं बचत और निवेश। जिस प्रकार भारत में उपभोग के लिए सीमित, संयमित रहने का नियम है उसी प्रकार उत्पादन के लिए भी मर्यादापूर्ण नियम है। लेकिन दुर्भाग्य से वर्तमान में उपभोग को भी असीमित बना दिया गया है और असीमित उपभोग की पूर्ति करने के लिए दुनियाभर में उत्पादन बढ़ाने की होड़ लगी है। इससे दो बातें हुई हैं; पहली- अधिक उत्पादन करने के चक्कर में प्राकृतिक संसाधनों का अमर्यादित दोहन हो रहा है जिससे पर्यावरण का गंभीर संकट पैदा हो गया है। दूसरी- उत्पादन के सम्बन्ध में यह मान्यता है कि उत्पादन तंत्र ऐसा होना चाहिए जिसके द्वारा देश के अधिक से अधिक लोगों को रोजगार मिल सके। लेकिन आज ऐसा उत्पादन तंत्र विकसित हुआ है कि उत्पादन तो खूब हो रहा है, परंतु रोजगार नहीं है। इसलिए गांधी जी और पंडित दीनदयाल उपाध्याय एक बात कहा करते थे कि हमको अपने देश में 'मास प्रोडक्शन' नहीं चाहिए। 'प्रोडक्शन बाय द मास' चाहिए। 'प्रोडक्शन बाय द मास' होगा, तो रोजगार सृजन के साथ मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति भी होगी। अब अगर उत्पादन करना है तो उत्पादन करने के लिए पूंजी चाहिए, पूंजी चाहिए तो पूंजी कहां से आएगी? देश के भीतर से पूंजी आएगी और पूंजी लाने और निवेश करने के लिए बचत करना आवश्यक है। हमारे देश की यह भी विशेषता रही है कि हर एक व्यक्ति बचत करता है गरीब से गरीब

**आज असमानता की खाई को पाटने के लिए समूचे विश्व को भारत के स्वत्व आधारित मॉडल की आवश्यकता है। लेकिन इसके लिए शैक्षिक, शासन-प्रशासन के साथ ही धरातल पर लागू किये जाने वाली विकास योजनाओं के माध्यम से छोटे-छोटे शिल्पकारों और स्थानीय विशेषताओं को ध्यान में रखकर नीतियां बनानी होंगी।**

आदमी बचत करता है। दुनिया के लिए आश्चर्य का विषय है कि भारत की अर्थव्यवस्था में कुल मिलाकर जीडीपी के लगभग 30 से 34 प्रतिशत की अलग-अलग समय में बचत होती रही। इस देश की कुल बचत में सबसे बड़ा हिस्सा पारिवारिक बचत का है क्योंकि परिवार व्यवस्था पर हमने जोर दिया। बहुत सारा उत्पादन हम परिवार के भीतर ही कर लेते हैं। हालांकि यहां की जीडीपी में उसको जोड़ा नहीं जाता और बाकी दुनिया के अनेक देशों की जीडीपी में उसको जोड़ा गया। इसलिए उन्होंने कहा कि हमारी जीडीपी ज्यादा है। हमारे देश में परिवार की रसोई एक छोटे कारखाने की तरह है जहां पापड़, सेवइयां, आचार, मुरब्बे और भोजन बनता है। यह एक प्रकार से कुटीर उद्योग है। जबकि पश्चिम के देशों में यह सभी कार्य बाजार में होते हैं। इसलिए उनकी जीडीपी बढ़ गई। हमारे यहां बचत होने का यह प्रमुख कारण है कि बहुत सी वस्तुओं का उत्पादन और उपभोग अपनत्व और कर्तव्यबोध युक्त परिवारों के भीतर ही हो जाता है। इसी बचत में से हम फिर पूंजी निवेश करते हैं और इसी से स्वावलंबन आता है।

उपभोग और उत्पादन यदि भारतीय दृष्टि से हो तो इसका एक स्वाभाविक परिणाम होगा कि वितरण भी न्यायपूर्ण होगा। हम लोगों ने इस न्यायपूर्ण वितरण पर बड़ा जोर दिया है। उसका कारण है कि वितरण करने से पहले इस बात का विचार होता है कि देश के संसाधनों का मालिक कौन है? पूंजीवाद ने तो देश के संसाधनों का स्वामित्व व्यक्ति के पास माना है, तो स्वाभाविक रीति से जिसके पास जितने ज्यादा साधन होंगे उतना ज्यादा उत्पादन करेगा इससे असमानता आएगी।

वहीं भारतीय चिंतन के अनुसार संसाधनों का स्वामित्व परमात्मा का है, समाज का है, उसी में से न्यास (ट्रस्टीशिप) का सिद्धांत आया। हमारे पास जो कुछ साधन है उसके हम ट्रस्टी हैं। हमारे उपयोग के लिए जितना है उतना हम रखेंगे, शेष को समाज को लौटा देंगे। इस ट्रस्टीशिप की सोच के कारण व्यक्ति के मन में अनावश्यक संसाधनों को संग्रह करने का लालच नहीं आता। जो कुछ है समाज को सहज रीति से देता रहता है। इसी से ममत्व और समत्व का सिद्धांत भारतीय चिंतन और व्यवहार में रहा। पंडित दीनदयाल जी ने इस बात पर जोर दिया था कि समाज में जो आखिरी पंक्ति में और आखिरी स्थान पर खड़ा हुआ व्यक्ति है अगर आपकी नीति उसके जीवन में कुछ उन्नति ला पाती हैं तो ही वह नीति ठीक है।

यही अंत्योदय का सिद्धांत है। वर्तमान सरकार भी अंत्योदय को अपना केंद्रीय उद्देश्य मानकर अनेक योजनाएं चला रही है। इसलिए आज असमानता की खाई को पाटने के लिए समूचे विश्व को भारत के स्वत्व आधारित मॉडल की आवश्यकता है। लेकिन इसके लिए शैक्षिक, शासन-प्रशासन के साथ ही धरातल पर लागू किये जाने वाली विकास योजनाओं के माध्यम से छोटे-छोटे शिल्पकारों और स्थानीय विशेषताओं को ध्यान में रखकर नीतियां बनानी होंगी। इन सबमें सबसे जरूरी है इस चिंतन को व्यवहार में लाने की इच्छा शक्ति। स्व-आधारित अर्थ व्यवस्था से ही भारत समृद्ध राष्ट्र के पद पर फिर से अधिष्ठित होगा। ■

# सांस्कृतिक विविधता और सामाजिक समरसता

> भारतीय समाज की एकात्मता और समरसता को संवारने में भारत के संतों, कवियों, लेखकों और समाजसेवियों की भूमिका के प्रसंग बहुत अनूठे हैं। ये सभी क्रूर शासकों के समक्ष कभी नत मस्तक नहीं हुए। अपने आराध्य के अवलम्ब को राष्ट्र और संस्कृति की रक्षा के लिए अमोघ अस्त्र बनाकर अपनी वाणी का प्रवाह बनाए रखा। ऐसे अवसर बारम्बार आते रहे जब मनीषियों को अपने प्राणों का मूल्य चुका कर स्वत्व की रक्षा करनी पड़ी।

**नरेन्द्र भदौरिया**
वरिष्ठ पत्रकार

अनेक बार लोग सांस्कृतिक वैविध्य का अर्थ ठीक प्रकार से नहीं समझ पाते हैं। संसार में कोई ऐसा देश नहीं है जो भारत जैसी सांस्कृतिक विविधता के वैशिष्ट्य से युक्त हो। इसका कारण यह है कि भारतवर्ष में पल्लवित हुई सनातन संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष या समुदाय विशेष के सीमित हितों की पूर्ति के लिए सृजित नहीं की गयी। सनातन संस्कृति की विविधता का मूल कारण यही है। युगों के लम्बे कालखण्ड में इस संस्कृति का विकास होता रहा। भारतीय उप महाद्वीप की इस संस्कृति को समावेशी संस्कृति कहा गया। समय-समय पर सुयोग्य दार्शनिकों, चिन्तकों, विचारवान लोगों ने इसके प्रवाह को गति दी। दूसरी बात यह कि इस संस्कृति को एक व्यापक क्षेत्र में सामाजिक सम्मति और स्वीकृति मिलती रही।

जब कभी सनातन संस्कृति की विविधता की बात की जाती है तो कुछ लोग प्रश्न करने लगते हैं कि जहां विविधता है वहां एकात्मता कैसे हो सकती है। इस बात का सर्वोत्तम उदाहरण आदि शंकराचार्य के जीवन काल का है। वह केरल के कालड़ी गांव में 788 ईस्वी में जन्मे थे। उनकी महासमाधि का वर्ष 820 ईस्वी है। मात्र 12 वर्ष की वय में वेदान्त का प्रचार-प्रसार करने निकल पड़े थे। उनका जीवन काल 32 वर्ष का रहा। जब वह केरल से उत्तर की ओर चल पड़े तो देखा कि सर्वत्र विखण्डन और दैन्यता की स्थिति है। अपने मत और अपनी राह चलता समाज एकात्मता और समरसता का भाव खोता जा रहा था।

आदिशंकर चाहते तो केवल अपने मत का प्रसार करते हुए सन्तोष का भाव लेकर यात्रा पूरी कर लेते। पर आदिशंकर भारत के जिस क्षेत्र में भी गये वहां लोगों को विमर्श के लिए आमन्त्रित किया।

चिन्तन और शास्त्रार्थ की श्रृंखला से इस महान दार्शनिक युवा सन्त ने विविधता के बीच एकात्मता और सामाजिक समरसता की सुन्दर लताएं सर्वत्र पल्लवित करा दीं। वस्तुतः यह एक चमत्कार था। आदिशंकर ने भारत के चार केन्द्रों पर चार मठों की स्थापना करके यह सिद्ध कर दिया कि भारत की सनातन संस्कृति कालजयी है। प्रत्येक परिस्थिति में नव सृजन का सामर्थ्य रखती है। इसीलिए सतत् प्रवाहमान रही है। आदि शंकराचार्य ने भारत के चार कोनों में चार प्रमुख मठों की स्थापना की। उत्तर में ज्योतिर्मठ, दक्षिण में श्रृंगेरी मठ-कांची, पूर्व में जगन्नाथ पुरी, पश्चिम में द्वारका पुरी। इन मठों की स्थापना का उद्देश्य अद्वैत वेदान्त के दर्शन का प्रचार करना था। आदिशंकर ने भारत को उसी प्रकार एक सूत्र में पिरोया जिस प्रकार कौशलेन्द्र श्रीराम ने पदयात्रा करते हुए भारतीय संस्कृति के द्रोहियों का नाश करने के साथ जन-जन को निर्भय करते हुए समरसता का अभ्यास कराया था।

सनातन धर्म की अवधारणा को बढ़ावा देने के लिए यह मठ सक्रिय रहे। मात्र 32 वर्ष की अवस्था में केदार नाथ धाम में आदिशंकर ने समाधि ले ली। इतनी अल्प अवधि में सनातन संस्कृति के इस महान अध्येता ने केरल से कैलाश पर्वत तक पदयात्रा की। सम्पूर्ण समाज को सहेजते हुए सांस्कृतिक विविधता में एकता के आदि काल के मन्त्र का संचार किया। लोगों को बताया कि पारस्परिक समरसता के साथ आध्यात्मिकता से सम्बद्ध रहकर एक सूत्र में बंधे रहने से भारतीय संस्कृति अक्षुण्ण बनी रहेगी। प्रथम शंकराचार्य का यह प्रयास इतना प्रभावी हुआ कि उनके जीवनकाल के बाद साधु, सन्तों, मनीषियों, सामाजिक उन्नायकों के तनिक प्रयास करने मात्र से सांस्कृतिक एकात्मता और समरसता का बीज दीर्घ काल तक अक्षुण्ण रहा।

भारत की विविधतापूर्ण सांस्कृतिक पहचान का अर्थ है- विविध जीवन शैलियां, रंग-रूप, भाषा, बोली-वाणी, खान-पान और रीति-रिवाज में सदा से भिन्नता रही है, पर यह भिन्नता संस्कृति के मौलिक तत्वों से टकराव के रूप में कभी प्रकट नहीं हुई। दो मूल आधार हैं। पहला यह कि सम्पूर्ण भारतीय समाज अपनी विविधता के रहते आध्यात्मिक आस्था के नाम पर एक रहा है। सनातन संस्कृति की आध्यात्मिकता और आस्था का आधार बहुत व्यापक है। हर व्यक्ति अपने लिए इच्छा अनुसार देव शक्ति का अवलम्ब निश्चित कर सकता है। इतना ही नहीं ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी दोनों को एक साथ रहने अपने ढंग से जीवन जीने का अवसर यह संस्कृति प्रदान करती है। इस एकात्मता को तोड़ने के नाना प्रयत्न हजारों वर्षों के कालखण्ड में सतत् होते रहे हैं। विदेशी आक्रमणों के झंझावात सहता भारतीय समाज अनेक बार आहत हुआ। कष्टों ने झकझोरा, पर क्लेश के क्षणों में भारतीय संस्कृति और राष्ट्रीयता की सुधि बनी रही। हालांकि विदेशी आक्रमणों के समक्ष जय-पराजय के अनेक क्षण आये। इस दौरान भारतीय समाज ने बहुत कुछ खोया भी। भारतीय संस्कृति को जकड़न से मुक्त करने का दायित्व 1947 में नव गठित स्वतन्त्र भारत की सरकार का था। पर इस सरकार का नेतृत्व ऐसे हाथों में चला गया जो सनातन संस्कृति का धुर विरोधी सिद्ध हुआ। तत्कालीन सत्ताधारी लोगों ने भारतीय इतिहास और संस्कृति का दहन करने वाली मानसिकता के लोगों को शिक्षा प्रणाली के नव सृजन का दायित्व सौंपा। उनका हेतु स्पष्ट था कि भारत की नवीन पीढ़ियों को उनके प्राचीन गौरवशाली इतिहास और समृद्ध परम्पराओं से दूर रखा जाए।

ऐसी निर्मम पीड़ा देकर भारतीय समाज की परीक्षा लेने वाले तो विदा हो गए। किन्तु उनके उत्तराधिकारी भारतीय कहे जाने वाले उनसे अधिक चपल और बड़े षड्यन्त्रकारी सिद्ध होने लगे। भारत के वर्तमान राजनीतिक परिवेश में अनेक राजनेता ऐसे हैं जिनका जन्मजात उद्देश्य भारत की सांस्कृतिक,

> **सामाजिक समरसता हिन्दू समाज के लिए एक ऐसा संकल्प है जिसे प्राण प्रण से पूरा करना होगा। सम्पूर्ण हिन्दू समाज जब तक समरस भाव से भारत माता के आंगन में एक सूत्र में बंधा दिखायी नहीं देगा, तब तक उसकी चुनौतियां समाप्त नहीं होंगी।**

सामाजिक एकता और समरसता को विखण्डित करना है। भारतीय समाज को अपनी संस्कृति से दूर करने के प्रयत्न हजारों वर्षों के सतत् अत्याचारों में सफल नहीं रहे। बावजूद इसके आज भी हमारी एकात्मता और समरसता मिटाकर भारत को विखण्डित करने की कुचेष्टा चल रही है। भारत में भारतीयता के शत्रु खुलकर अपने बाजार सजा रहे हैं। विदेशों के एजेण्ट बनकर सनातन संस्कृति के मूलाधार विविधता में एकता की खिल्ली उड़ा रहे हैं।

ऐसे विखण्डनकारी लोगों का मानना है कि सांस्कृतिक विविधता का कोई महत्व नहीं है। उनकी दृष्टि में इस विविधता का तात्पर्य है कि भारत न तो एक संस्कृति में पिरोया है और न ही एक राष्ट्र है। विभिन्न जीवन शैलियों, भाषा और पहनावे के साथ अलग रीति-रिवाजों को यह अल्पज्ञ लोग भिन्न संस्कृति मानते हैं। ऐसे निपट षड्यंत्रकारी भारतीयता को कभी हृदयंगम नहीं कर सके। ऐसे लोग भारत के सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में सदा राजनीति का विष घोलते रहे हैं। हलाहल को जिस प्रकार शिवजी ने समुद्र मन्थन के समय पीकर अपने कण्ठ में धारण कर लिया था उसी तरह भारत के अनेक राष्ट्र भक्त अपनी भूमिका निभा रहे हैं। यह सन्तोष की बात है कि विविधता में राष्ट्रीय एकात्मता के सिद्धान्त को तोड़ने का प्रयत्न करने वाले निरन्तर मुंह की खाते आए हैं। स्वतन्त्रता के नाम पर भारत का विखण्डन एक गहरा घात था। जो तत्कालीन कांग्रेस नेतृत्व की अदूरदर्शिता का परिणाम था।

सामाजिक समरसता हिन्दू समाज के लिए एक ऐसा संकल्प है जिसे प्राण-प्रण से पूरा करना होगा। सम्पूर्ण हिन्दू समाज जब तक समरस भाव से भारत माता के आंगन में एक सूत्र में बंधा दिखाई नहीं देगा। तब तक उसकी चुनौतियां समाप्त नहीं होंगी। अनेक लोग राजनीतिक स्वार्थ के लिए समरसता के मार्ग में बाधा डाल रहे हैं। वह नहीं जानते कि यदि हिन्दू समाज विखण्डित हुआ तो उनका राजनीतिक स्वार्थ अंधे कुएं में छलांग लगाने जैसी भूल सिद्ध होगी। भारत को तोड़ने का प्रयत्न करने वाली शक्तियों के मानस में यह बात घर कर चुकी है कि 17 से 20 प्रतिशत मुस्लिम और ईसाई समाज मिलकर जब एक ओर खड़ा होगा तो स्वार्थी हिन्दू राजनीतिक नेता अपने जमघट लेकर उनके संग आ मिलेंगे। ऐसी स्थिति में हिन्दू एकात्मता, समरसता, राष्ट्रीयता और अखण्डता जैसे शब्द विलुप्त हो जाएंगे। तब भारत में एक बार फिर से परकीय षड्यंत्रकारी शक्तियां अपनी छद्म सत्ता स्थापित करने में सफल हो जाएंगी। ऐसी कुचेष्टाओं को कुचलने का एकमेव मार्ग सांस्कृतिक विविधता को एकात्मता के सूत्र में पिरोकर समरसता के मंत्र के साथ अजेय बनाना है। इस मार्ग पर चल कर सफल होने का सामर्थ्य भारत की युवा पीढ़ी में है। यह प्रसन्नता की बात है कि भारत की वर्तमान युवा पीढ़ी कुटिल जातीय विभेदों के छद्म व्यूहों से सजग हो चुकी है। समय की मांग है कि भारतीय समाज का प्रत्येक घटक राष्ट्र और अपने स्वत्व की अवधारणा को वरीयता देकर आगे बढ़े। भारतीय समाज ने ऐसी एकात्मता तानाशाही स्थापित करने के इन्दिरा गांधी के प्रयासों को ध्वस्त करने के लिए प्रदर्शित की थी। सम्पूर्ण राष्ट्र प्रेमी समरस भाव से एकजुट होकर लोकतंत्र की रक्षा के लिए पत्थर की दीवार बनकर खड़े दिखायी दिए थे। तब सारा संसार भारतीय समाज की एकात्मता और समरसता देखकर चमत्कृत हो उठा था। ■

# सामाजिक समरसता के मूल तत्व

**अशोक कुमार सिन्हा**
सचिव, विश्व संवाद केन्द्र, अवध

भारतीय संस्कृति की मूल आत्मा है सर्वांगीण विकास, सबका विकास। भारतीय संस्कृति स्पृश्य-अस्पृश्य का विचार नहीं करती। हिन्दू-अहिन्दू, आर्य-अनार्य का भेद नहीं करती। सभी प्राणियों को प्रेम और विकास के साथ आलिंगन करके ज्ञानमय व भक्तिमय कर्म का अखण्ड आधार लेकर यह संस्कृति मांगल्य सागर सच्चे मोक्ष समुद्र की ओर ले जाने वाली है। यह महान संस्कृति हमारे पूर्वजों के ज्ञान का परिणाम है। विश्व में हमारी विशिष्ट प्राचीन ऐतिहासिक पहचान भारतीय संस्कृति के कारण है। ईश्वर एक है और समस्त प्राणियों में उसका ही अंश है- यह हमारी संस्कृति की मूल अवधारणा है। आदि नगरी काशी में आदि शंकराचार्य को एक चाण्डाल ने यही भाव समझाया था। अतः उन्होंने उस चाण्डाल को अपना गुरु बना लिया था, क्योंकि वे उसके तर्कों से ज्ञान प्राप्त कर चुके थे और साष्टांग दण्डवत् कर चाण्डाल के प्रति आदर प्रगट किया था।

**एक दूसरे में प्रेम, आदर और समकार्य का भाव उत्पन्न करने के लिए हमें अपने मूल भारतीय सांस्कृतिक चिंतन को आधार बनाना होगा। सभी की सम्मिलित शक्ति से सब कुछ सम्भव है। सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया की मूल अवधारणा पर समाज को ले जाने के लिए हमें अपने सनातन मूल्यों को बल प्रदान करना ही होगा।**

अनेकता में एकता का भाव एक उच्च सांस्कृतिक अहसास है, क्योंकि सबकी भलाई और हित हमारा व्यवहार रहा है। आत्मवत् सर्व भूतेषु। और परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्।। एक ही परमात्मा पूरे चराचर जगत में व्याप्त है। वह सबकी आत्मा में समाया हुआ है। 'वसुधैव कुटुंबकम्' में हम सभी विश्वास रखते हैं कि धरती मेरी माँ है और हम सब उनकी संतान हैं। इस प्रकार हम सभी भ्राता-भगिनी हैं। उपासना पद्धति भिन्न हो सकती है परन्तु हम एक ही ईश्वर की उपासना में रत हैं। सभी संस्कृतियां प्रेम, सेवा और बंधुत्व की मूल आधारशिला पर अवस्थित हैं और सबका उद्देश्य मानव कल्याण है। हिन्दू दर्शन अनेक पंथ में होने पर भी कभी यह दावा नहीं करता है कि केवल उसका ही मार्ग सही है।

हिन्दू संस्कृति को पूरे विश्व में अनूठी इसलिए माना जाता है कि हम सामाजिक, आर्थिक, पंथिक या राजनैतिक आधिपत्य स्थापित करने में विश्वास नहीं करते। हम समतामूलक समाज में विश्वास रखते हैं। परिवार और शरीर की प्रकृति के आधार पर समता का भाव है। बच्चा छोटा है-वह माता-पिता को आदर देता है लेकिन बच्चे के

बारे में बड़ों के मन में ऊंच-नीच का भाव नहीं होता। समाज में आर्थिक या प्रतिभा या बुद्धिमत्ता के आधार पर अन्तर हो सकता है परन्तु इस कारण व्यवहार या परस्पर प्रेम की दृष्टि से ऊंच-नीच का भाव न हो- यह हिन्दू संस्कृति का मूलभूत दृष्टिकोण है।

यह सब होते हुए विचित्र बात यह है कि विश्व में शायद ही ऐसी कोई संस्कृति व धर्म हो जिसमें मानवीय उच्चता, समानता, समरसता के इतने महान आदर्श सामने रखे गये हों, परन्तु यह भी उतना ही सच है कि विश्व में शायद ही कोई दूसरा समाज होगा जिसमें अपने ही समाज के लोगों के प्रति केवल जन्म एवं जाति के आधार पर इतने अमानवीय भेदभाव अपनाये गये हों। एकता का भाव यदि संस्कृति है तो विकृति भी यह है कि जाति प्रथा नष्ट करने की उक्ति और कृति में भारत में जितना अन्तर पाया जाता है, उतना पूरे विश्व में कहीं नहीं दिखाई पड़ता। जाति के कारण मनुष्य की दृष्टि साफ नहीं रहती है। वरिष्ठ जाति के गुनाह माफ किये जाते हैं और उनके द्वारा किया हुआ अन्याय चुपचाप सहा जाता है। वरिष्ठ जातियां अपना राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक वर्चस्व बनाये रखना चाहती हैं। इसलिए उच्च वर्ण कनिष्ठ वर्ण की उपेक्षा और तिरस्कार करता है और कनिष्ठ वर्ण वरिष्ठ वर्ण से द्वेष करता है। यह स्थिति उचित नहीं हैं। वंचित जाति आपसी संघर्ष में रत है, उनमें परस्पर एकजुटता नहीं हैं। अतः उनका वास्तविक विकास अवरुद्ध है। भेदभाव एवं विषमता पर आधारित जाति व्यवस्था नष्ट होने के लिए सभी को समरसता की भावना से कार्य करना चाहिए। राजनैतिक आधार पर हम एकात्मता उत्पन्न नहीं कर सकते। राजनीति जोड़ने का कम और तोड़ने का कार्य अधिक करती है। सांस्कृतिक एवं धार्मिक आधार पर ही द्वेष में एकता व समरसता का भाव उत्पन्न हो सकता है। इसी कारण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की बात करता है।

स्वामी विवेकानंद ने इसी हिन्दू संस्कृति और वेदान्त का गहन चिन्तन-मनन करके कहा था कि ''हे भारत! मत भूल कि नीच, अज्ञानी, दरिद्र, अनपढ़, मेहतर सब तेरे रक्त-मांस के हैं, वे सब तेरे भाई हैं। ओ वीर पुरुष! साहस बटोर, निर्भीक बन और गर्व कर कि तू भारतवासी है। गर्व से घोषणा कर कि 'मैं भारतवासी हूं प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है। मुख से बोल 'अज्ञानी भारतवासी दरिद्र और पीड़ित भारतवासी ब्राह्मण भारतवासी, चाण्डाल भारतवासी सभी मेरे भाई हैं। तू भी एक चीथड़े से अपने तन की लज्जा को ढक ले और गर्वपूर्वक उच्च स्वर में उद्घोष कर 'प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है। भारतवासी मेरे प्राण हैं भारत के देवी देवता मेरे ईश्वर हैं। भारतवर्ष का समाज मेरे बचपन का झूला मेरे यौवन की फुलवारी और बुढ़ापे की काशी है। मेरे भाई! कह भारत की मिट्टी मेरा स्वर्ग है। भारत के कल्याण में ही मेरा कल्याण है। अहोरात्र जपा कर हे गौरीनाथ हे जगदम्बे! मुझे मनुष्यत्व दे! हे शक्तिमयी मां मेरी दुर्बलता को हर लो मेरी कापुरुषता को दूर भगा दो और मुझे मनुष्य बना दो माँ।"

भारतीय संस्कृति अपने सर्वोत्कृष्ट रूप में नरोत्तम नागरिकों का निर्माण करती है, परन्तु विभिन्न कालखण्डों के प्रवाह से गुजरने के बाद हमारी श्रेष्ठता, सांस्कृतिक परम्पराएं होने के बाद भी विकृति एवं कुरितियों की शिकार हो गईं। इस कारण एकता का भाव कम हुआ और यह समाज 12 सौ वर्षों की पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ गया। इसमें यह कुरीतियां और परवान चढ़ी तथा दासत्व के कारण भी अनेक विकृतियां हमें ग्रसित करने में सफल हुईं। आज आवश्यकता है कि हम सबल बने सजग और समरस समाज के मूल्यों की पुनर्स्थापना कर समृद्ध तेजोमय जीवन क्षेत्र की रचना करें। इसके लिए हमें अपने सांस्कृतिक मूल्यों में ही रास्ता तलाशना होगा।

**भारतीय संस्कृति अपने सर्वोत्कृष्ट रूप में नरोत्तम नागरिकों का निर्माण करती है। परन्तु विभिन्न कालखण्डों के प्रवाह से गुजरने के बाद हमारी श्रेष्ठता, सांस्कृतिक परंपराएं होने के बाद भी विकृति एवं कुरीतियों की शिकार हो गईं। इस कारण एकता का भाव कम हुआ।**

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक मा. माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर ने इसी भारतीय संस्कृति के उच्च आदर्शों को संतों महात्माओं के समक्ष रखा और सतत प्रयास करके प्रयाग कुंभ के अवसर पर धर्म संसद में घोषणा करवाई कि

**हिन्दवः सोदराः सर्वे, न हिन्दूः पतितो भवेत्।**
**मम दीक्षा हिन्दू रक्षा, मम मंत्रः समानता॥**

हिन्दू कभी पतित नहीं होता-यह वाक्य संतों के मुख से कहलाया गया। संघ तो इस मंत्र को 1925 से आचरण में क्रियान्वित कर रहा है। वर्तमान काल में शिक्षा, धर्म, संस्कृति ने एक दूसरे के प्रति नफरत, घृणा और छुआछूत की भावना को कम किया है। नौजवान पीढ़ी जो रोजगार के लिए प्रतिस्पर्द्धात्मक युग में प्रवेश कर गई है। उसके लिए सभी सामाजिक विकृतियां शिथिल हो गई है। राजनीति हिन्दू मुसलमान जाति व्यवस्था को भड़काकर भेद खड़ा करने में लगी है। परन्तु एक दूसरे में प्रेम, आदर और समकार्य का भाव उत्पन्न करने के लिए हमें अपने मूल भारतीय सांस्कृतिक चिंतन को आधार बनाना होगा। जनता की सम्मिलित शक्ति से सब कुछ सम्भव है। ''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया" की मूल अवधारणा पर समाज को ले जाने के लिए हमें अपने प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों को बल प्रदान करना ही होगा। ■

# ऐतिहासिक यात्रा में एकत्व भाव के पद चिन्ह

ऋतु सारस्वत
प्रोफेसर, समाजशास्त्र

भारतीय संस्कृति की अभूतपूर्व एवं अद्वितीय विशेषता 'एकत्व भाव' है। स्नेह सिक्त, इसका प्रवाह मानव मन को सदैव तृप्त करता आया है। यह निर्विवाद है कि 'एकत्व' भाव किसी भी राष्ट्र की सुदृढ़ता को अक्षुण्ण रखता है। इसलिए भारत सदैव ही अपनी संस्कृति की अनुपम आभा से विश्व को प्रकाशमय करता रहा है। जिस भारत के कण-कण में समरसता व्याप्त रही आज वहां वैमनस्य तथा स्नेहरिक्तता दृष्टिगोचर होती है। इसमें किंचित भी संदेह नहीं कि विदेशी आक्रांताओं की सुनियोजित रणनीतियों ने अलगाव, द्वेष और भेदभाव के जो विषैले बीज रोपित किए आज वे कंटक बन भारत के हृदय को आहत कर रहे हैं। उनकी साजिश से भारत के भौतिक स्वरूप को ही क्षति नहीं पहुंची अपितु इसने हमारे गौरवभाव 'समरसता' को भी विषमय कर दिया। सामाजिक समरसता एक ऐसी संकल्पना है जो पंथ, मत, क्षेत्र, भाषा, जाति, विचार एवं दर्शन के आधार पर भेदभाव का निषेध करती है तथा एकत्व भाव का आह्वान करती है। भारतीय वाङ्.मय में प्राचीन से लेकर आद्यकाल के प्रत्येक अध्याय में इस भाव के प्रवाह को सरलता से अनुभूत किया जा सकता है।

**भारतीय संस्कृति की अभूतपूर्व एवं अद्वितीय विशेषता 'एकत्व भाव' है। स्नेह सिक्त, इसका प्रवाह मानव मन को सदैव तृप्त करता आया है। यह निर्विवाद है कि 'एकत्व' भाव किसी भी राष्ट्र की सुदृढ़ता को अक्षुण्ण रखता है। इसलिए भारत सदैव ही अपनी संस्कृति की अनुपम आभा से विश्व को प्रकाशमय करता रहा है।**

**'सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इलस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर।।'**

ऋग्वेद की इस ऋचा में समरसता की उत्कृष्ट व्याख्या है। यह उद्‌भाषित करती है कि 'प्रभु (परम सत्ता) समस्त सुखों की वर्षा करने वाले सबके पिता हैं और पितृत्व के आधार पर सब प्राणियों में समरसता, प्रकृति का अपेक्षित नियम है तो स्वभावतः कोई भेदभाव संभव नहीं है। "सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।" यह ऋचा उल्लिखित करती है कि उस भाव को जो समरसता का मूल है समष्टि की भावना से प्रेरित होकर सभी कार्यों को साथ-साथ करें, जैसा जगत् की समस्त देवशक्तियां करती हैं, उन्हीं का हम भी अनुकरण करें। भारतीय दर्शन सदैव ही 'सं वो मनांसि' का आह्वान करता है अर्थात 'हमारे मन एक हों।' ध्यान रहे कि समरसता का दर्शन केवल आध्यात्मिक दर्शन नहीं है अपितु यह व्यावहारिक चिंतन भी है। यह अद्वैत की स्थापना करता है और असहिष्णुता व असमानता का सर्वत्र नाश करता है। निश्चित ही यह एक सर्वमंगलकारी दार्शनिक चिंतन है और चिंतन का केंद्र मनुज कल्याण है।

**'सहृदयं सामनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।।**

यह समस्त विवरण स्पष्ट रूप से भारतीय वेद शास्त्रों में मानव समाज में समरसता की अपरिहार्यता को ठीक उसी प्रकार उकेरता है जिस प्रकार ग्रीष्म ऋतु के पश्चात् धरती को वर्षा जल की आवश्यकता होती है। भारतीय संस्कृति सदैव ही इस सिद्धांत पर विश्वास

करती रही है कि सभी में परम तत्व विद्यमान है तो फिर कैसे भारत वर्तमान विघटन और विलगाव का साक्षी बनने को विवश हो गया। इस यक्ष प्रश्न का उत्तर उस सत्य को स्वीकारने पर ही प्राप्त हो सकेगा जो तथ्य यह स्थापित करता है कि राष्ट्र की अवनति 'विभाजक रेखा' से ही संभव है। एकत्व भाव का लोप एवं अहम् की उत्पत्ति स्नेह और अपनत्व के भाव को क्षीण कर देती है। यह भी निर्विवाद है कि किसी भी समाज के वास्तविक स्वरूप का मापदंड उसके धार्मिक ग्रंथों और सामाजिक परंपराओं के आख्यान में है। यह 'पथ प्रदर्शक' एवं 'पथ निर्देशक' दोनों की ही भूमिका ग्रहण करते हैं। भारत के अपार वैभव को लीलने के लिए भारतीय आख्यानों को मनगढ़ंत रूप देकर समाज को विभक्त करके, आक्रमणकारियों ने सुनियोजित प्रयास किए जो कि फलीभूत भी हुए। ब्रिटिश आक्रांता यह भली-भांति समझ चुके थे कि जब तक प्रभुत्व के आधार पर विभेद का विष नहीं घोला जाएगा तब तक उनके लिए भारत पर शासन करने का प्रयास अधूरा रहेगा।

राइज एंड फॉल ऑफ ग्रेट पावर्स में पॉल कैनेडी अर्थशास्त्री पॉल बेरोज का हवाला देते हुए कहते हैं कि 1750 ईस्वी में पूरी दुनिया के विनिर्माण उत्पादन में भारत की भागीदारी लगभग 24.5 प्रतिशत तक थी जो 1900 ईस्वी में 1.7 प्रतिशत तक पहुंच गई। ब्रिटिश आक्रांताओं ने बड़े ही सुनियोजित तरीके से भारत की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक व्यवस्था पर कुठाराघात किया। यह सर्वविदित सत्य है कि जब व्यक्ति अपनी पहचान को लेकर गौरवान्वित न हो तो उसको परतंत्र करना बहुत सहज हो जाता है। कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था के स्वरूप यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र को उन्होंने अपनी सुविधानुसार परिभाषित किया और अपने असत्य को सत्य सिद्ध करने हेतु मनगढ़ंत व्याख्याएं की। यही नहीं विभिन्न पंथावलंबियों के बीच भी उन्होंने येन्-केन् प्रकारेण मनभेद और मतभेद उत्पन्न किए। वे इस तथ्य से भली भांति परिचित थे कि समभाव का लोप भारतीय समाज को पूर्ण रूप से बिखेर देगा और तब उनके लिए भारत में साम्राज्य विस्तार करना संभव हो पाएगा। उन्होंने भारत के स्वर्ण अंकित अतीत को अपनी जिह्वा और कलम दोनों से ही स्याह करने का षड़यंत्र किया और दुर्भाग्यवश उन्हें इसमें सफलता भी प्राप्त हुई। भारत के धर्मभीरू जन के मन में उन्होंने संशय और अनास्था की उस विभाजनकारी रेखा को खींचा जहां उन्हें (भारतीयों) यह प्रतीत होने लगा कि वेद, उपनिषद्, पुराण और विभिन्न धार्मिक ग्रंथों में स्तरीकरण के क्रम में उत्पादक वर्ग को कमतर आंका गया। उनके भीतर संशय का यह भाव इतना गहरा हो गया कि वह स्वयं को हीन मानने लगे वहीं दूसरी ओर अन्य वर्णों में अहंकार पनपने लगा और वह स्वयं को श्रेष्ठ मानने की भूल करने लगे। जिसकी परिणीति यह हुई कि समाज में विद्वेष और अलगाव का भाव उत्पन्न हो गया।

बाशम (1954) 'द वन्डर दैट वाज इण्डिया' में लिखते हैं कि 'मध्य युग के पूर्व भारत में जातिव्यवस्था तरल थी। बहुत से उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं जहां वर्ग परिवर्तित होता रहा है। कार्य को बदलने पर सामाजिक स्थिति बदलती रहती है। वैदिक वाङ्.मय और प्राचीन संस्कृत साहित्य में कहीं भी जाति व्यवस्था या अस्पृश्यता के उदाहरण परिलक्षित नहीं होते हैं। इसमें किंचित भी संशय नहीं कि भारत पर हुए बाहरी आक्रमणों से पूर्व अपने उत्पादन कार्यों के प्रतिफल के स्वरूप एक वर्ग का समाज में आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण से उच्च स्थान था इसलिए कामन्दक नीतिसार में कहा गया है कि राजा को नया नगर बसाते समय पर शूद्र जो कि विभिन्न मूल्यवान वस्तुएं उत्पादित करते हैं उन्हें व वैश्य जो उन वस्तुओं के व्यापार से आय उत्पन्न करके राजस्व बढ़ाते हैं उन्हें अधिक संख्या में बसाना चाहिए। इस तरह जिस वर्ग के पास कौशल और परिश्रम की निधि थी, जिसे औद्योगीकरण के प्रभाव ने समाप्त कर दिया और परिणामस्वरूप रोजगार के अभाव ने उनकी आर्थिक विपन्नता को जन्म दिया। अंग्रेजों द्वारा उन्हें यह विश्वास निरंतर दिलाया गया कि उनके साथ जो कुछ भी नकारात्मक हुआ है और हो रहा है उसका कारण श्रेष्ठ वर्ग हैं। असत्य को निरंतर दोहराने पर वह सत्य प्रतीत होने लगता है। जातिगत भेद का यह विष समाज को शनैः-शनैः बिखेरने लगा यद्यपि भक्तिकाल में ऐसे अनेकानेक संत हुए जिन्होंने जातिगत और पंथ के आधार पर उपजे भेदभाव का विरोध किया।

**वेद हमारी रक्तवाहिनी हैं। वह निरंतर यह उच्चारित करते रहे हैं कि सभी के भीतर परम तत्व है और मानव-मानव के मध्य भेदभाव का प्रश्न ही नहीं उपज सकता।**

**"दृते दृंह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे"।।**

अर्थात् हे परमेश्वर! हम सम्पूर्ण प्राणियों में अपनी ही आत्मा को समाया हुआ देखें, किसी से द्वेष न करें और जिस प्रकार एकत्रित एक मित्र दूसरे मित्र का आदर करता है वैसे ही हम भी सदैव सभी प्राणियों का सत्कार करें। सम्पूर्ण समाज आपस में परस्पर भेदभाव रहित व समरस व्यवहार करें। भारतीय संस्कृति में समरसता का मूल सामूहिक एकता में है।

**"समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति"।।**

अर्थात् हमारा उद्देश्य एक हो, हमारी भावनाएं सुसंगत हो। हमारे विचार एकत्रित हो। जैसे इस विश्व के, ब्रह्मांड के विभिन्न पहलुओं और क्रियाकलापों में तारतम्यता व एकता है। जो वेद हमारी रक्तवाहिनी हैं वह निरंतर यह उच्चारित करते रहे हैं कि सभी के भीतर परम तत्व है और मानव-मानव के मध्य भेदभाव का प्रश्न ही नहीं उपज सकता। अस्तु हमारे स्मृति पटल पर यह सदैव अंकित रहना चाहिए कि समभाव सभी का अपने समान मानना दूसरों का ही नहीं स्वयं का भी संरक्षण करना है। ■

# समरसता के कर्मयोगी

**पूरे विश्व में भारत ही ऐसा देश है, जहां महापुरुषों, साधु-संतों और कर्मयोगियों की समरस दृष्टि के कारण ही समाज एकसंघ रहा है। इसी का परिणाम है कि विषम परिस्थितियों के झंझावतों से निकलकर राष्ट्र एक बार फिर अपने आदर्शों और मूल्यों की ओर अग्रसर है।**

**डॉ. रमेश माधवराव पांडव**
केन्द्रीय टोली सदस्य

प्रभु रामचंद्र जी कहते हैं- स्वर्णमयी लंका न मिले माँ। अवधपुरी की धूलि मिले।। इस भूमि का यह गुण, विचार और व्यवहार को पूर्णत्व की ओर ले जाता है। पानी की बूंद सागर में समा जाने को तरसती है, तो साधना पथ देखते हुए गीत गाने को मन करता है, साधना के देश में, अब पथिक विश्राम कैसा? जो प्रभु रामचंद्र के पथ पर चले, ऐसे पुरुष और महिलाएं भारत में केवल अपवाद मात्र नहीं हैं। हर सदी में अध्यात्म और उससे जुड़ा वर्ग समरस समाज के विचार और व्यवहार से मार्गदर्शन करता रहा है। इनकी प्रेरणा से ही अनुप्राणित दिशा और राह तीर्थ मार्गदर्शक रही है। विदेशियों के कुटिल चंगुल से बाहर निकलने के बाद वर्तमान में परम वैभव की पुनर्स्थापना के लिए जनमानस दृढसंकल्पित दिखाई देता है। समरसता के कर्मयोगी इस मार्ग को प्रशस्त करते रहे हैं। हालांकि स्वतंत्रता के पूर्व से ही यह प्रबोधन युग शुरू हुआ जिसमें महात्मा फुले, छत्रपति शिवाजी महाराज के वंशज छत्रपति शाहू जी महाराज, भारतरत्न डॉ. भीमराव आंबेडकर, केरल के संत श्री नारायण गुरु, असम के लोहित पुत्र संत श्री शंकरदेव, बंगाल से स्वामी विवेकानंद, तमिलनाडु के श्री सुब्रमण्य भारती, गुजरात से महर्षि दयानंद, आंध्र प्रदेश से संत सेवालाल, छत्तीसगढ़ से गुरु घासीदास जैसे अनेक महापुरुषों ने समरसता की अलख जगायी।

इसी क्रम में डॉ. हेडगेवार जी ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की नींव रखी और कहा कि संगठन का अर्थ सुधार होता है। तत्कालीन प्रचलित भेदाभेद संगठन का आधार नहीं हो सकते इसलिए सुधार की प्रक्रिया आवश्यक है। सभी हिंदुओं में समान भाव चाहिए। इसी तत्व को समता कहते हैं। संघ में बौद्धिक वर्गों में यह विषय सहज आता है। इतना ही नहीं शारीरिक वर्ग में भी 'समता' नाम से की जाने वाली एक प्रक्रिया पद्धति में रखी गयी जो आज भी शारीरिक वर्ग का अभिन्न अंग है। समता और शाखा पद्धति में स्वयंसेवकों में छोटा-बड़ा, अमीर-गरीब, ऊंच- नीच, स्पृश्य -अस्पृश्य का कोई भाव ही नहीं रह जाता है, यह सभी तथाकथित विभेद स्वयंसेवकत्व में तिरोहित हो जाते हैं। इसके बावजूद भी समाज में जहां संघ शाखा नहीं है, उस समाज तक व्यक्तिगत पहुंचने की व्यवस्था होती है। गट अर्थात स्वयंसेवकों के छोटे समूह तैयार किये जाते हैं जो अपने-अपने क्षेत्र में समरसता भाव के जागरण हेतु सक्रिय रहते हैं। फिर भी समाज का एक बड़ा वर्ग इस समरसता भाव से अनभिज्ञ रहता है। इसलिए कुछ कार्यकर्ताओं ने अलग से समरसता के लिए विशेष कार्य शुरू किया। शुरू में सैद्धांतिक पक्ष दत्तोपंत ठेंगडी जी ने संभाला, बाद में दामु आण्णा दाते (पुणे), भिकूजी इदाते (दापोली), रमेश पतंगे (मुंबई), सुखदेव नाना नवले (संभाजीनगर), श्रीरंग दादा लाड (परभणी), नामदेवराव घाटगे (पुणे), मोहनराव गवंडी (पुणे), गिरीश प्रभुणे (पिंपरी-चिंचवाड), विश्वनाथ व्यवहारे (किनवट), किरण कांबले (अंबाजोगाई), प्रमोद मिराशी (इचलकरंजी, जि. कोल्हापूर), शिवाजी सानप (मुंबई), गुरूदेव सोरदे (नागपुर), शंकरराव बानखेडे (नागपुर), संजय सराफ (नागपुर), अशोक मेंढे (नागपुर), देवीदास डाहे (वर्धा), दामोदर परकाले (शेगाव), विश्वनाथ सुतार (मुंबई), डॉ. शाम अत्रे (डोंबिवली), प्राचार्या सुवर्णा रावल (भिवंडी ठाणे), डॉ.अशोक मोडक (मुंबई), अनिरुद्ध देशपांडे (पुणे), रमेश महाजन (जलगांव), दामोदर परकाले (बुलढाणा), रविंद्र पवार (मुंबई) उपरोक्त समरसता कर्मयोगियों ने कमान संभाली और समरसता के लिए अपने त्याग और समर्पण से नई किरण को बिखेरा।

**समरसता की संकल्पना :** समरसता का अर्थ है अपने हिंदू समाज के अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सुख-दुख में सब लोगों को सम्मिलित और एकरूप होना चाहिए। इनके दु:खों को दूर करना ही समरसता का कार्य है। समरसता का कार्य किसी भी जाति का व्यक्ति कर सकता है। शर्त यह है कि उसके मन में अपने स्वयं की जाति तथा वर्ण का अहंकार न हो। वर्णभेद, जातिभेद, विषमता, अस्पृश्यता इनका पालन करना अधर्म है। धर्म शास्त्र इन अधर्मों का समर्थन नहीं करते हैं। इन अधर्मों का निर्मूलन करना राष्ट्र कार्य है। इस तरह समतायुक्त, शोषणमुक्त समाज निर्माण करने का राष्ट्र कार्य करने से समरस भाव से हिंदू राष्ट्र बलवान होगा इसके लिए समर्पित भाव से कार्य करने वाले कुछ कर्मयोगियों का विवरण निम्न है।

**रमेश पतंगे :** मुंबई में निवासरत, संघ के महानगर कार्यवाह रह चुके हैं। गंभीर स्वभाव, गहरी सोच, अध्ययन में विशेष रुचि, साहित्यिक प्रवृत्ति और वैचारिक लेखन के धनी पतंगे जी ने समरसता के सैद्धांतिक पक्ष को अपने भाषणों और कृतियों द्वारा सिद्ध किया। अपने बच्चों का अंतरजातीय विवाह कराकर समरसता का जीवंत संदेश दिया। उनकी कुछ पुस्तकें- मैं मनु और संघ, समरसता- डॉ. हेडगेवार, डॉ आंबेडकर आदि हैं। हिंदुस्थान प्रकाशन संस्था के अध्यक्ष रह चुके पतंगे जी ने संविधान विषय पर आठ पुस्तकें लिखी हैं। साप्ताहिक विवेक के संपादक बनने के बाद उन्होंने अपनी पुस्तक 'हम और हमारा संविधान' में संविधान के अर्थ पर व्यापक चर्चा की है। आप पद्मश्री से सम्मानित हैं। अस्सी वर्ष की आयु में भी वह सक्रिय हैं।

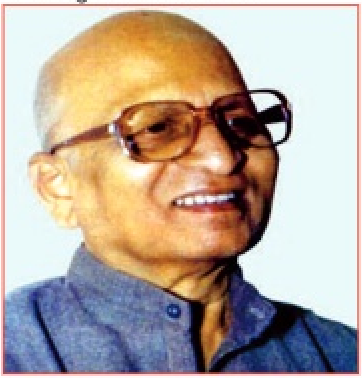

**दामू आण्णा दाते** (1927-2002) मूलतः मुंबई के रहने वाले विद्युत अभियंता साथ ही आजीवन संघ प्रचारक, समरसता के भाष्यकार रहे। समरसता मंच की स्थापना होते ही समरसता की गतिविधियों से जुड़ गये। इनका बौद्धिक प्रेरणादायी और परिवर्तनकारी होता था। दामु आण्णा जी ने ओजस्वी वक्तव्य में कहा है कि 'संघ स्थान पर वायुमंडल बड़ा उत्साह से भरा हुआ रहता है। उसके कारण जाति के आधार पर बसी हुई बस्ती में से भी अपनी जाति भूलकर उस उत्साह भरे वायुमंडल में शामिल होने के लिए लोग आते थे। क्योंकि एकरस, एकात्म हिन्दू समाज के निर्माण से ही राष्ट्र एकत्व भाव से सुदृढ़ होगा।

**भिकूजी (दादा) इदाते** महाराष्ट्र के कोंकण विभाग की तहसील दापोली शहर में रहने वाले दादा जी स्कूली शिक्षा के समय से ही संघ शाखा में जाने लगे। आजीवन समरसता के लिए समर्पित रहे। उनकी पुस्तकें - 'वंचित वर्गो के प्रश्न और रा.स्व.संघ!', 'आरक्षण' यानि रिजर्वेशन है। साथ ही आपने महाराष्ट्र प्रांत,रा.स्व.संघ के कार्यवाह के रूप में अनेक वर्षों तक काम किया। समरसता मंच का प्रांत का दायित्व भी संभाला। आप पद्मश्री से सम्मानित हैं। आपके घुमन्तू समाज, सरोदे जाति की प्रगति और दलित समस्या आदि विषयों पर लेख और व्याख्यान हैं। घुमन्तू समाज के लिए भारत सरकार का जो केंद्रीय कमीशन था, आप उसके चेयरमेन रह चुके हैं। पिछड़ी जातियों के प्रति अगाध प्रेम और उनके निश्छल मन ने कई कार्यकर्ताओं को कर्मपथ पर अग्रसर किया। डॉ.बाबासाहब आंबेडकर के पैतृक गांव 'आंबावडे' में एक शिक्षा संस्थान खड़ा किया। अपने पुत्रों के अंतरजातीय विवाह करवाए हैं।

**गिरीश प्रभुणे :** पुणे के नजदीक 'पिंपरी-चिंचवाड' नामक एक स्थान है, यहां अधिकतर क्षेत्र में कारखानें हैं। क्रांतिकारी

चापेकर बंधु जिन्होंने ब्रिटिश कमिश्नर वाल्टर चार्ल्स रैंड को गोलियों से भूना, इसी शहर के थे। ऋषि स्वभाव के गिरीश जी पढ़ाई के बाद घुमन्तू समाज के उन्नयन के लिए विकास कार्यों में जुट गये। धाराशिव जिले के तुलजापुर नामक तीर्थ क्षेत्र के पास यमगरवाडी नाम का देहात है। बंजर जमीन होने के बावजूद तुलजापूर के निवृत्त मुख्याध्यापक मा. रावसाहेब कुलकर्णी, नजदीकी गांव काकरंबा के निवृत्त मुख्याध्यापक मा. महादेवराव गायकवाड, सोलापूर के मा. यशवंत गाडेकर और मा.मधुसूदन व्हटकर, सुवर्णा रावल ने टोली बनाकर एक निवासी पाठशाला प्रारंभ की। इस तरह अनेक वर्षों से पैंतीस घुमन्तू समाज के तीन सौ से अधिक छात्र छात्राएं अध्ययनरत हैं। इनमें से कई छात्र आज अच्छे स्थान पर हैं और अनेक क्षेत्रों में अहम भूमिका निभा रहे हैं। निवासी शिक्षा के बाद उन्होंने अपने पिंपरी-चिंचवड शहर मे एक 'समरसता गुरुकुलम्' खोला। यह संस्थान विगत डेढ़ दशक से विद्यार्थियों को जीवन उपयोगी शिक्षा देते हुए नई उम्मीद बना है। उनकी एक किताब 'पालावरचं जिणं' (झुग्गियों का जीवन) है। जो सारगर्भित है।

**बिखरे सुमन पड़े हैं अगणित।**
**स्नेहसूत्र में कर ले गुंफित।।**

इस भाव से सामाजिक संगठनों के अनेक कर्मयोगी निस्वार्थ भाव और अथक प्रयास से समाज में विभिन्न आयामों के जरिये समरसता के सेतु बनकर समाज में एकत्व भाव का निर्माण कर रहे हैं। आप पद्मश्री से सम्मानित हैं।

# सनातन का मूल दर्शन

**संघ अपने स्थापना काल से ही अपने विभिन्न आयामों और स्वयंसेवकों के जरिए समाज में सभी वर्गों और लोगों के बीच बंधुत्व को बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्पित है। इसी पर डॉ. दिलीप बेहरा, सदस्य, सामाजिक समरसता, केन्द्रीय टोली से प्रेरणा विचार पत्रिका की टीम ने बातचीत की। प्रस्तुत है संपादित अंश-**

**डॉ. दिलीप कुमार बेहरा**
सदस्य, सामाजिक समरसता, केन्द्रीय टोली

**राष्ट्रीय मुद्दों के जागरण में समरसता की क्या भूमिका है?**

राष्ट्र में अनेक समस्याएं हैं और सभी समस्याओं का समाधान एक मंच या एक संगठन द्वारा नहीं किया जा सकता। सामाजिक समरसता मंच का उद्देश्य जाति आधारित असमानताओं और अस्पृश्यता को दूर करना है। इन दोनों समस्याओं को दूर करके हम समाज को एकजुट कर सकते हैं और हिंदुओं में भाईचारा पैदा कर सकते हैं। जब सभी लोगों की भागीदारी से बंधुत्व होगा तो राष्ट्र प्रगति की ओर अग्रसर होगा। समरसता के माध्यम से राष्ट्रीय विकास हो सकता है।

**संघ की शाखाओं में लाखों स्वयंसेवक सामाजिक समरसता के मूल मंत्र को स्थापित करते हैं। इस पर आपका क्या विचार है?**

संघ की स्थापना 1925 में हुई थी और तब से संघ बंधुत्व में विश्वास करता है। इसलिए भाईचारा केवल एक नारा नहीं है, बल्कि यह व्यवहार में शामिल है। संघ में हर रोज नए लोग शामिल होते हैं। नए लोगों में इस भाईचारे को विकसित करना एक बड़ा काम है। यह स्थापना से लेकर आज तक जारी है। स्वयंसेवकों को अपने आचरण से समाज को प्रभावित करना चाहिए। समाज के सभी लोगों में भाईचारा होना चाहिए। समानता चाहने वाले बहुत से लोग हैं, लेकिन इस दिशा में काम करने वाले बहुत कम हैं। समरसता मंच का दायित्व समाज में बंधुत्व स्थापित करने में समाज को शामिल करना है।

**भारत एवं हिन्दू विरोधी ताकतों के निशाने पर संघ ही क्यों रहता है?**

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ समाज के किसी भी वर्ग के खिलाफ नहीं है। देश में और देश के बाहर ऐसी कई ताकतें हैं, जिनका उद्देश्य समाज को विभाजित और कमजोर करना है। संघ का उद्देश्य राष्ट्र को एकजुट करना और राष्ट्र को मजबूत करना है जबकि इसलिए स्वाभाविक रूप से राष्ट्र विरोधी ताकतें संघ के खिलाफ हैं। अगर संघ मजबूत होता है तो राष्ट्र विरोधी ताकतें कमजोर होंगी।

**सामाजिक हितों के किन बिंदुओं पर काम करके समरसता बढ़ाई जा सकती है?**

सामाजिक समरसता के क्रियान्वयन हेतु तथाकथित उच्च जाति के लोगों की मानसिकता और व्यवहार में बदलाव लाया जाना चाहिए। तथाकथित हाशिए पर पड़े या दबे-कुचले लोगों को भागीदारी के लिए आमंत्रित करना चाहिए। अतीत में जाति आधारित भेदभाव के साथ बहुत सी घटनाएं हुई हैं और अगर हम पुरानी चीजों की बात कर रहे हैं और पुरानी पीढ़ी के लोगों को कोस रहे हैं तो इसे स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। अगर अच्छी चीजें हो रही हैं तो हमें उनका समर्थन करना चाहिए। सामाजिक परिवर्तन न केवल वृहद स्तर पर बल्कि सामाजिक संगठनों और सरकारी कार्यों के माध्यम से सूक्ष्म स्तर पर भी आना चाहिए। चार स्तरों पर बदलाव होना चाहिए-

1. व्यक्तिगत स्तर
2. परिवार स्तर
3. कॉलोनी/गांव स्तर
4. कार्यस्थल स्तर

**सनातन संस्कृति के मूल में समरसता है फिर भी क्यों एक विशेष वर्ग इसकी आलोचना करता है?**

समरसता सनातन धर्म का मूल गुण है, दर्शन है। लेकिन दर्शन और व्यवहार के बीच बहुत बड़ा अंतर है, अगर कोई उपेक्षित वर्ग समानता की मांग करता है तो उसमें गलत क्या है? समरसता को व्यवहार में व्यक्त होना चाहिए यही हमारा उद्देश्य है। ■

# 'छह शब्दों से कुटुंब प्रबोधन'

**व्यक्तिवाद और उपभोक्तावाद के दौर में कुटुंब ही वह सामाजिक इकाई है जो सांस्कृतिक, आर्थिक और समृद्धि की वाहक बनकर एकल को फिर से सयुंक्त में बदल सकती है। इसी विषय पर अखिल भारतीय कुटुंब प्रबोधन गतिविधि के संयोजक रविंद्र जोशी जी से विस्तार से चर्चा की कार्यकारी संपादक डॉ. प्रियंका सिंह ने। प्रस्तुत है संपादित अंश-**

**भारतीय संस्कृति में क्या कुटुंब और परिवार अलग हैं ?**

थोड़ा शब्दों में बोल सकते हैं। हमारे पूर्वजों की दृष्टि इतनी विशाल थी कि इस धरती पर रहने वाले सारे लोग एक ही परिवार के हैं। इस भावना से हमें रहना है। संस्कृति में कुटुंब है और हिन्दी में परिवार चलता है। कुटुंब में अपने रक्त से संबंधित जो रिश्तेदार हैं, उनका विचार और परिवार में व्यापक रूप में जैसे हमारे अड़ोस-पड़ोस के हैं, हमारा घर चलाने में जिनका सहयोग मिलता है, वे भी अपने ही परिवार के हैं। ऐसा उनके साथ प्रेम, आदर, विश्वास का व्यवहार करना और केवल मनुष्य नहीं, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी अपने घर में, यदि किसी के घर में गाय है तो वह भी अपने परिवार की ही है। ऐसा व्यवहार हमारे यहां रहा है। हम सबने चंदा मामा वाली बात सुनी है ऐसे सारे विश्व के साथ यह जो नाता जोड़ने की दृष्टि है, भारत की विशेषता है।

**संघ के शताब्दी वर्ष में पंच परिवर्तन में से एक है कुटुंब प्रबोधन, संघ की दृष्टि में यह क्या है?**

उसमें एक बात ऐसी है कि जो भी परिवार के सदस्य हैं उन सबको कम से कम सप्ताह में एक बार एकत्रित होना है। भोजन करना है, ईश्वर का स्मरण करना है और उसके बाद एक डेढ़ घंटा अच्छी गपशप करना है। अब सहज रूप से प्रश्न आ सकता है कि गपशप की बातें क्या रहेंगी? तो एक छोटा सा वाक्य हमने बताया है कि जो आठ से पंद्रह दिन में हम कहीं घूमकर आयें हैं। क्या अच्छा देखा, सुना, पढ़ा, सीखा है? इसके अपने सारे अनुभव साझा करना। साथ ही अपने परिवार में माँ की ओर से तीन चार पीढ़ियां, पिताजी की ओर से तीन चार पीढ़ियां उनकी कुछ विशेषताएं हो सकती हैं और वह आपस में बताना है। घर में वातावरण बनाना, भक्ति, शक्ति, आनंद में अपना घर बनाना इसकी बातें करते हैं।

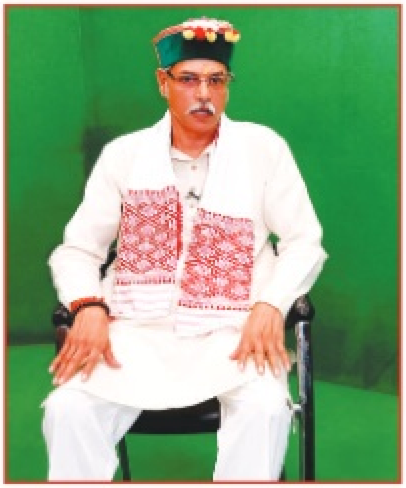

**रविंद्र जोशी**
**संयोजक, अखिल भारतीय कुटुम्ब प्रबोधन गतिविधि**

**बदलते हुए वैश्विक और वर्तमान परिदृश्य में कुटुंब प्रबोधन की आवश्यकता क्यों है?**

हम सबको पता है कि आज सारे समाज पर ही नहीं पूरे विश्व पर भोगवाद का प्रभाव दिखाई देता है। उपभोक्तावाद कहते हैं या थोड़ी उच्छृंखलता है। भारत की विशेषता यानी भारत की जीवनदृष्टि, जीवन मूल्य हैं। उसके आधार पर जीवन व्यवहार है तो उसमें थोड़ा क्षरण आ रहा है। उसके सामने समस्याएं निर्माण हुई हैं बाहर के वातावरण के कारण। इसलिए इस बात की ओर ध्यान आकर्षित करना है। हम बात करते हैं कि छह शब्द है भजन, भोजन, भाषा, भूषा, भवन और भ्रमण। ये छह बातें हम अपने भारतीय दृष्टिकोण से जीवन व्यवहार में करते हैं। यह करने से कुटुंब में एक अच्छा वातावरण रहता है।

**आज जिस तरह से कुटुंब में संवादहीनता खत्म हो रही है, इसको आप किस तरह से देखते हैं?**

मूल समस्या यही है कि व्यक्तिवाद और करियर के प्रभाव से परिवार बिखर रहे हैं। सहज रूप से परिवार में एक साथ बैठना यही उसका उत्तर है। हमारी भारतीय संस्कृति की जो विशेषता है कि सभी कामों का अधिष्ठान अपना अध्यात्म है, ईश्वर है। इसलिए ईश्वर का स्मरण करते हुए सारी बातें करना तो घर में पहले से वातावरण बनाना, एक साथ बैठना, यह करने के बाद दूसरे के मन में क्या है, यह समझने के लिए थोड़ा सा अपना मन बनाना। आजकल लोग बाहर से आने के बाद

घर में भी सब गैजेट्स से जुड़े रहते हैं। उसके स्थान पर जब हम बैठेंगे तो यह मोबाइल और टीवी बाजू में रखना है। एक बहुत अच्छी संकल्पना विकसित हुई है मोबाइल पार्किंग। हमको स्कूटर पार्किंग, कार पार्किंग मालूम है। हमारे गोवा में एक बहन हैं तो उन्होंने कहा कि पहले बड़ी समस्या थी आपस में संवाद नहीं करना, बात नहीं करते थे। तो इसका उत्तर बताया मोबाइल पार्किंग। घर में और सामूहिक रूप से भी जब हम इकट्ठा होते हैं तो अभी यह आदत विकसित हो रही है कि मोबाइल को थोड़ा अलग रख देना और बात करने के लिए बैठना। उसके माध्यम से एक संवाद के लिए अनुकूलता का निर्माण होता है।

**पीढ़ी दर पीढ़ी परम्परागत रूप से विकसित होती आई भारतीय जीवन शैली कुटुंब व्यवस्था की ही देन है इस पर प्रकाश डालिए?**

हां, कुटुंब प्रबोधन का विषय ऐसा है कि केवल संघ के स्वयंसेवक ही काम करें, ऐसा नहीं है। अपने भारतवर्ष में सर्वप्रथम यह स्वामीनारायण संप्रदाय के जो प्रमुख स्वामी थे, उन्होंने इस विषय को 1975 में प्रारंभ किया। फिर आज हम देखते हैं कि गायत्री परिवार है, चिन्मय मिशन है, गीता परिवार है और कई संत सत्पुरुष, माता अमृतानंदमयी हैं। परंपराओं को हमारे भारत में सहजता से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी पर ले जाना यह बहुत सहजता से होता है। यह सभी लोग इसे कर रहे हैं। मैं महाराष्ट्र नागपुर से हूं तो वहां का एक उदाहरण लेता हूं। एक बहुत बड़े व्यापारी हैं। चित्रा मिठाई वाले पूना में रहते हैं। उनकी चौथी पीढ़ी से मैं मिला, तो उनकी जो पहली पीढ़ी के व्यक्ति जिन्होंने यह सारा व्यवसाय विकसित किया, उनका नाम था भास्कर। उनको जब अपनी जिम्मेदारी दूसरी पीढ़ी को देनी थी तब उन्होंने कहा कि जब आपके मन में दूध में पानी मिलाना ऐसा विचार आएगा तो यह चित्रा मिठाई दुकान बंद कर देंगे।

> **अपने परिवार के लोगों के लिए एक अच्छा समय देना, उनके साथ समय बिताना चाहिए। इस क्रम में छोटे-छोटे खेल हो सकते हैं। कहानियां बताना हो सकता है ऐसा करने से वे अपनी संस्कृति और संस्कार ग्रहण करेंगे। बड़ों के प्रति आदर का भाव निर्माण करना है जो हमको करना चाहिए।**

**बच्चों के सही मार्गदर्शन और पालन-पोषण में कुटुंब प्रबोधन की क्या भूमिका है?**

सारे परिवार, विशेष रूप से दोनों कमाने वाले जहां है, वहां तो यह समस्या बहुत अधिक है। पहली बात समझना बहुत आवश्यक है। आज की पीढ़ी में जो नए बालक आ रहे हैं, वे बहुत बुद्धिमान हैं। इसका भी एक अलग प्रकार से अध्ययन होना चाहिए। लेकिन यह भावना और संस्कार वाली है। इसमें मैं पूना का एक अनुभव आपको बताता हूं। ऐसे ही एक परिवार में सब लोग कमाने वाले थे, बाहर जाने वाले थे। चार वर्ष का छोटा बालक था जिसे सबके मोबाइल के पैटर्न्स मालूम थे। मोबाइल कैसे खोलना, देखना सब आता था जिससे उसके पिताजी और दादाजी बड़े परेशान थे। अब इसका उपाय क्या करना? पहला उपाय उन्होंने यह किया कि सबके पैटर्न बदल डाले, तब उसको खोलने में दिक्कत आने लगी तो चिड़चिड़ापन होने लगा। लेकिन उसी के साथ वह कैरम लेकर आए और भोजन के पहले या बाद में उसके साथ बैठकर कैरम खेलना शुरू कर दिया। अब वह बालक मोबाइल को पूछता भी नहीं है। इसलिए ध्यान में आता है कि हम जो बातें कर रहे हैं तो अपने परिवार के लोगों के लिए एक अच्छा समय देना, उनके साथ समय बिताना चाहिए। इस क्रम में छोटे-छोटे खेल हो सकते हैं। कहानियां बताना हो सकता है ऐसा करने से वे अपनी संस्कृति और संस्कार ग्रहण करेंगे। बड़ों के प्रति आदर का भाव निर्माण करना है जो हमको करना चाहिए। भारत में संस्कृति की दृष्टि से वह सहजता से आएगा। छोटे-छोटे त्यौहार रहते हैं। उसमें आजकल सारा रेडीमेड लेकर आना है, ऐसा चलता है। कुटुंब प्रबोधन गतिविधि के माध्यम से जैसे गणेश जी का त्यौहार हुआ तो चर्चा में ऐसी बातें निकली कि घर में ही मिट्टी के गणेश जी बनाना, गणेश जी की मूर्ति बनाने की थोड़ी सी कला सिखाना, तो उसके कारण एक अलग वातावरण बनता है। गणेश जी की सजावट सबको मिलकर करनी है। इस प्रकार का घर में एक वातावरण बने और यदि एक-एक, दो-दो, अड़ोस-पड़ोस के कई परिवार मिलकर इकट्ठा आएं वह करें तो उसका भी अनुभव हमको बहुत अच्छा आता है।

**संगठन के माध्यम से कुटुंब प्रबोधन के संबंध में किस तरह की गतिविधियां हो रही हैं?**

मेरे पास पूरे भारत का अखिल भारतीय संयोजक ऐसा दायित्व है। ऐसे भारतवर्ष में अपने 45 प्रांत हैं। इसमें अधिकतर प्रांतों के संयोजक नियुक्त हैं। उनके माध्यम से आयु अनुसार कुछ उपक्रम अपने-अपने स्थान पर करते रहते हैं। लेकिन अखिल भारतीय स्तर पर हमने दो उपक्रमों को सोचा है। एक है 14 अगस्त से 29 अगस्त तक। यानी हमारा देश स्वाधीन हुआ 15 अगस्त को। भारत का इतिहास देखेंगे तो बार-बार इस राष्ट्र पर आक्रमण हुए, राज्य गया, फिर से आया। ऐसे कई बार हुआ है पिछले दो हजार वर्षों में। लेकिन देश का विभाजन नहीं हुआ था। यदि 500 वर्ष बाद राम का मंदिर निर्माण हो

सकता है तो इस राष्ट्र के अंदर अखंड भारत के प्रति भी एक जागृति यदि हम कायम रखेंगे तो एक दिन जरूर ऐसा आएगा। हम सबको पता है कि महर्षि अरविंद का जन्म 15 अगस्त को हुआ था। 15 अगस्त 1947 का उनका जो रेडियो का भाषण है, उसमें महर्षि अरविंद ने कहा है कि "आज इस देश का विभाजन हुआ है, लेकिन यह देश अखंड होकर रहेगा। इसकी कई कीमत चुकानी पड़ेगी। आपको संघर्ष करना होगा, सारी बातें होंगी, लेकिन एक दिन ऐसा आएगा, यह अखंड होगा।" उस बिंदु को हमने पकड़ा है कि घर-घर में अपने परिवार के अड़ोस-पड़ोस के लोगों को इकट्ठा करना। यह जो 14 अगस्त से 29 अगस्त का कालखंड है, 29 अगस्त को अपने देश के एक महान खिलाड़ी मेजर ध्यानचंद का जन्मदिन है। उनका जीवन भी बहुत प्रेरणादायी है। उनके जीवन की कहानियां, ऐसे ही अपने राष्ट्र को जिन्होंने उन्नत किया, स्वतंत्रता संग्राम में सहभाग लिया। मेरठ से 1857 की क्रांति का शंखनाद ऐसी सारी बातों पर नयी पीढ़ी के साथ बैठकर चर्चा करना। अच्छे छोटे-छोटे खेल खेलना। उसके लिए हमने खेल का एक ऐप भी बनाकर पूरे भारतवर्ष में भेजा है। इसमें यह भी है कि घर में बनाया हुआ भोजन पूरे परिवार को मिलकर करना है। विचार विमर्श के लिए एक साथ बैठना है। ऐसा कार्यक्रम पूरे भारतवर्ष के लिए है। स्वामी विवेकानंद जी जब अमेरिका, यूरोप का प्रवास करके भारत आए तो उस समय के मद्रास में उनका भाषण हुआ है। उस भाषण में पहली बार उन्होंने भारत माता पूजन का विषय रखा। उनका जन्मदिन 12 जनवरी को मनाया जाता है। हमारा देश स्वतंत्र हुआ, उसके बाद 26 जनवरी को गणतंत्र के रूप में मान्यता मिली। हमने भी एक संविधान को स्वीकार किया है। इसलिए 12 जनवरी से 26 जनवरी तक इसी प्रकार का सारे देश में ऐसी छोटी-छोटी इकाई में एक परिवार, उसको हम

बोलते हैं कुटुंब मित्र, वह अपने अड़ोस-पड़ोस के परिवारों के साथ इकट्ठा बैठेंगे और घर में भारत माता की प्रतिमा की पूजा करेंगे। स्वामी विवेकानंद ने जैसे उस भाषण में कहा है कि "पूजा करने का अर्थ केवल फूल चढ़ाना नहीं है। इसका भाव है कि यह सारे मनुष्य, अमीर-गरीब, किसी भी जाति या किसी भी भाषा के बोलने वाले हैं? मेरे अपने हैं। इसके साथ ही पशु, पक्षी, पौधे इन सबके प्रति प्रेम, आदर, विश्वास, भक्ति, श्रद्धा रखना ही पूजा है।" वर्ष में दो बार तो इस भाव से हम सबको मिलकर इस राष्ट्र की उन्नति के बारे में, सर्वांगीण उन्नति के बारे में सोचना है। केवल सोचना ही नहीं बल्कि अच्छे नागरिक बनकर हम अपने स्थान पर क्या योगदान दे सकते हैं? ऐसा एक वातावरण बनाना है। छोटी इकाई में हर घर के माध्यम से निर्माण करने का यह एक प्रयास, उपक्रम है। ऐसा हमने बताया है। बाकी यह जो जिला इकाई है, नगर हैं, छोटे-छोटे, यह जो कुटुंब मित्र हैं, वह अपनी-अपनी प्रेरणा से करते रहते हैं। इसके अलावा अलग-अलग त्यौहार आते हैं। यथा तुलसी विवाह आदि वर्षभर कुछ न कुछ उनका चलता रहता है। नवदंपत्ति का विषय है या विवाह योग्य आयु के युवक युवती हैं, तो आयु अनुसार ऐसे उनको छोटी इकाई में इकट्ठा करना। यानी ऐसे छोटे समूह में उनके साथ बातचीत करना, नवदंपत्ति को भी बहुत बड़ी संख्या में नहीं? ऐसी 10–20 एक साथ बैठकर वैवाहिक जीवन यानी क्या है? इसकी चर्चा करना।

भारत में कश्मीर से, कन्याकुमारी तक, कच्छ से कामरूप तक में विवाह में सात फेरे, सप्तपदी या सात वचन यह सभी तरफ दिखाई देता है। विवाह होने के पहले उसका बोध जगाना, जानकारी देना, ऐसे छोटे-छोटे उपक्रम करना है। यदि आयु से बड़े हो गए हैं, प्रौढ़ लोग हैं, तो उनके भी साथ बैठकर अपने परिवार की भलाई के लिए सोचना मेरे स्वभाव में कुछ परिवर्तन करना है। मेरा क्या योगदान हो सकता है? छोटे बच्चों को इसी तरह कुछ कहानियां बता सकते हैं। ऐसे उपक्रम सारे देश में लगातार पूरे वर्ष भर चलते रहते हैं। ■

**महर्षि अरविंद ने कहा है कि आज इस देश का विभाजन हुआ है, लेकिन यह देश अखंड होकर रहेगा। इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। आपको संघर्ष करना होगा, सारी बातें होंगी, लेकिन एक दिन ऐसा आएगा, यह अखंड होगा।**

# भारत की वसुधैव कुटुंबकीय व्यवस्था

**डॉ. बलराम सिंह**
**इंस्टिट्यूट ऑफ एडवांस्ड साइंसेज**
**डार्टमाउथ, मेसाचुसेट्स, यूएसए**

**भारतीय परंपरा में वसुधैव कुटुंबकम् की धारणा है। एक कुटुंब धारणा में समस्या किसी की हो, समाधान देना मेरा कर्तव्य है, ऐसे भाव का बाहुल्य होता है। इस प्रकार परिवार के प्रत्येक सदस्य को अपने कर्तव्य का पालन करते हुए समाधान प्रदान करने का अधिकार होता है। जिससे समाज कर्तव्य बोध से स्वत: अनुप्राणित होता है।**

हमारे यहां लोग अक्सर कहते हैं, कि "एकं सद्विप्राः बहुधा वदन्ति" (ऋग्वेद 1.164.46) यह एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण है, क्योंकि किसी भी चीज को हम कई दृष्टिकोण से देखेंगे तभी वह वैज्ञानिक सत्य होगा। वैज्ञानिक सत्य की परिभाषा है कि अकाट्य और वस्तुनिष्ठ होना चाहिए। इसे करने के लिए जब तक हम सारे लोगों की बातों को समझेंगे नहीं, समझाएंगे नहीं, तब तक उस तथ्य तक हम नहीं पहुंच सकते। इसका यह मतलब होता है लेकिन एकं सत्, (एक सत्य तो सही है), विप्राः बहुधा वदन्ति, (बहुत तरह से कहा भी जा सकता है), लेकिन कौन कह सकता है? यह बहुत रोचक विषय है। यह वही कह सकता है जो कि विप्र हो। हम लोग जानते ही हैं कि "जन्मना जायते शूद्रः" (गीता) जन्म से सभी शूद्र होते हैं, इसमें कोई बुराई नहीं है, हम सारे लोग ऐसे होते हैं। शूद्र की बड़ी अच्छी परिभाषा है, लेकिन जो व्यक्ति पढ़ता है समझता है, जिसको वेद का ज्ञान होता है वह विप्र होता है। हमको उस स्तर पर पहुंचना चाहिए जहां पर हम एक ही बात को कई तरह से कह सकते हैं। इससे हम सबसे जुड़ जाएंगे, सबसे अलग नहीं होंगे। ये योग का एक उद्देश्य होता है।

कभी कभी लोग अंग्रेजी में बोलते हैं कि सत्य एक है, लोग उसे अनेक कहते हैं, सत्य का मतलब यह नहीं हो सकता कि जैसे लोकतंत्र में ये नहीं हो सकता कि सारे लोग बुद्धिमान हैं। जैसे सारे लोगों को वोट देने का अधिकार है, हमारे यहां जो व्यवस्था है, उनको लोग भड़का कर, भेदभाव दिखाकर, उनका वोट लेकर खुद बैठे हुए हैं, बाकी लोगों की समस्या यथावत बनी रहती है। इससे काम नहीं चल सकता। इस तरह से भीड़तन्त्र नहीं बनाया जा सकता है। अगर भीड़तन्त्र है तो यह हमारे यहां का तन्त्र नहीं है। मैं प्रजातन्त्र में विश्वास करता हूं और प्रजातन्त्र का विषय एक गहरी चर्चा का विषय है। मेरा यह कहना है कि जो बोलने वाला हो, समझने वाला हो, उसको वह भाव आना चाहिए जिस भाव से वह किसी चीज को कई दृष्टिकोण से देख सकता हो, जैसा वैज्ञानिक लोग अक्सर किया करते हैं।

दूसरी हमारे यहां की एक और बात, जिसे लोग अक्सर कहा करते हैं, कि वह है 'वसुधैव कुटुंबकम्' यह एक उपनिषद् (महोपनिषद्, 4.71) का मंत्र है, बाद में इसे हितोपदेश और पञ्चतन्त्र में भी कहा गया है। अब प्रश्न उठता है कि वसुधैव कुटुंबकम् कैसे

करेंगे? अर्थात ये मेरा है, ये तेरा है। ये छोटी-छोटी बातें हैं, ये बातें छोटी बुद्धि के लोग करते हैं। जिनके अन्दर योग का अभ्यास है, ज्ञान है वो किसी चीज को अलग मानते ही नहीं। उनके लिए मेरा-तेरा कुछ है ही नहीं। जब हम प्रणाम करते हैं, इसी संस्कृति से ये पता लगता है कि हमारे और आपके अन्दर का जो देवत्व है वह एक ही है, तो इसमें भेदभाव करने का प्रश्न ही नहीं उठता। उसी तरह से हम वसुधैव कुटुंबकम् तभी मान पाएंगे जब हम सबको बराबर और ईश्वरमय मानें। तभी यह हो सकता है। इसको करने के लिए अभ्यास करना पड़ता है।

सर्वप्रथम माता ही सबसे पहले प्रेम करने का ज्ञान देती है। जैसी हमारे भारत की संयुक्त परिवार की परम्परा रही है, उसमें ये तेरा मेरा समाप्त हो जाता है। हम सब एक दूसरे को अपना मानते हैं। वसुधैव कुटुंबकम् तो बहुत दूर है, उसमें सांप, बिच्छू, शेर, बाघ, बन्दर, चीते, कीड़े-मकोड़े होते हैं उसको हम अपना कुटुंब कैसे मानेंगे? जब हमने अभ्यास किया ही नहीं। इसलिए पहला अभ्यास आप अपने परिवार में कीजिए, फिर अपने समाज में, फिर अपने देश में और फिर सारे संसार में, तब कहीं वसुन्धरा की बात आएगी। क्योंकि हमारे यहां योग यह बताता है कि हम कैसे सारे ब्रह्माण्ड से जुड़ें।

तीसरी बात है "अहं ब्रह्मास्मि" जो कि भारत में कही जाती है। यह भी वेद का ज्ञान है। अहं ब्रह्मास्मि से हमें ये पता लगता है कि जब योग से हमें यह ज्ञान हो जाएगा कि ये जो सारा ब्रह्माण्ड है जो भी कुछ दिखाई पड़ता है, वह हम ही हैं। हमारे अन्दर ही है- यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे। जो हमारे अन्दर है वही बाहर है। पर जब हम उसको अपना मानेंगे। कैसे मानेंगे? जब तक हम योग का अभ्यास नहीं करेंगे, तब तक नहीं। भारतीय संस्कृति योग की संस्कृति है, उस पर हमें बहुत ध्यान देना चाहिए। भारतीय परंपरा में वसुधैव कुटुंबकम् की धारणा है। एक कुटुंब धारणा में समस्या किसी की हो, समाधान देना मेरा कर्तव्य है, ऐसे भाव का बाहुल्य होता है। इस प्रकार परिवार के प्रत्येक सदस्य को अपने कर्तव्य का पालन करते हुए समाधान प्रदान करने का अधिकार होता है। इस तरह से सम्बन्ध शब्द की उत्पत्ति होती है, जिसमें हम समान रूप से एक दूसरे से बंधते हैं। इस बंधन की कड़ी कर्तव्य से निर्धारित होती है।

**जब हम प्रणाम करते हैं, इसी संस्कृति से ये पता लगता है कि हमारे और आपके अन्दर का जो देवत्व है वह एक ही है, तो इसमें भेदभाव करने का प्रश्न ही नहीं उठता। उसी तरह से हम वसुधैव कुटुंबकम् तभी मान पाएंगे जब हम सबको बराबर और ईश्वरमय मानें।**

इसके विपरीत जब हम औरों की समस्या उनकी मानकर उन्हें दोषी मानने लगते हैं, तब समस्या का समाधान तो होता नहीं, बल्कि दुराव होने लगता है। इस तरह उनकी समस्याओं के समाधान निकालने की उनकी क्षमता ही लुप्त हो जाती है। वहीं पर यदि कुटुंब मानकर काम करें तो सभी की समस्याओं के समाधान का आधार हम स्वयं बन सकते हैं। आजकल कुटुंब भाव कम और कुटिल भाव अधिक हो गया है। आगम ज्ञान जन साधारण द्वारा किए गए अनुभवों तथा परम्पराओं पर प्रतिपादित होता है। चूंकि जन साधारण के विचार स्थानीय पर्यावरण एवं परिस्थितियों से निर्धारित होते हैं। आगम ज्ञान की रीति रिवाज में काफी विभिन्नताएं होती हैं। चूंकि विभिन्नता प्रकृति का नियम है। आगम ज्ञान व्यवस्था सत्य के शाश्वत रूप को अधिक सरलता से दर्शाती है। अतएव शैवागम शास्त्रों में शिव के अनेकानेक रूप देखने को मिलते हैं। कश्मीर में शैव से लेकर केरल के शंकराचार्य तक भारत देश शैवागम से ओतप्रोत हैं। संसार में जो भी सम्भव है - पत्थर, पानी, प्राण से लेकर सारी पूजा विधियां या परम धाम की धारणाएं, सभी शिव शक्ति के ही रूप हैं। जो कुछ सम्भव है, वह शिव है। ऐसे मानकर जगत की व्युत्पत्ति एवं विनाश दोनों को यौगिक जोड़ी मानकर समझा जा सकता है। शैवागम में प्रथम रुद्र को इस तरह से शम्भु भी कहा गया है। शिव का रुद्र रूप परिस्थितियों के अनुसार दुख निवारण रूप धारण करता है।

कई भारतीय शास्त्रों में, जैसे शैवागम, महाभारत, पुराण में रुद्र के विवरण आते हैं। रुद्र एक अवस्था है जिसकी उत्पत्ति पीड़ा, प्रताड़ना एवं अन्याय के प्रति आक्रोश से होती है। यही आक्रोशित अभिव्यक्ति रुदन के रूप में प्रकट होती है, पर इसमें पराभव का भाव न होकर पराक्रम का भाव जगता है। कुछ कर सकने की या मर मिटने की भावना से प्रेरित व्यक्ति अपने आदि रूप के आवेग में आ जाता है। वह आदि रूप ही शिव हैं, जो हर पीड़ा और प्रताड़ना को दूर करने वाले हैं। उनकी शक्ति किसी के भीतर जगने से व्यक्ति में अपार बल आ जाता है, अतः वह शत्रु को रौंदकर उसे ही रुला देता है, अर्थात् शत्रु को प्रवित कर देता है। अहिंसावादी विचार पनप जाते हैं, एक रूपांतरण हो जाता है। इस प्रक्रिया से वसुधा पर एकत्व भाव कुटुंब रूप में पल्लवित होता है, वही जब पूरे ब्रह्मांड में प्रसारित हो जाता है, तो अहं ब्रह्मास्मि के रूप प्रकट हो जाता है। भारतीय परम्परा में यह कड़ी, संयुक्त परिवार से प्रारम्भ होकर, वसुधैव कुटुंबकम् के माध्यम से, अहं ब्रह्मास्मि का बोध कराती है। ■

# कुटुंब प्रबोधन : आर्थिक समृद्धि में सर्वोपरि

प्रो. आलोक कुमार चक्रवाल
कुलपति, गुरु घासीदास केन्द्रीय विश्वविद्यालय
बिलासपुर, छत्तीसगढ़

**मनुष्य के सर्वांगीण विकास और सतत् प्रेरणास्पद जीवन हेतु 'कुटुंब प्रबोधन' सबसे आवश्यक है। भारत की सनातन संस्कृति वैदिक काल से ही मानव की सामाजिक चेतना कुटुंब को एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में अंगीकार करती है। यह न केवल सामाजिक कारणों से है वरन् इसके मूल में मनोवैज्ञानिक और आर्थिक पक्ष भी हैं।**

भारत सदियों से अपनी समृद्ध, सांस्कृतिक विरासत और पारिवारिक मूल्यों के लिए जाना जाता है। परिवार या 'कुटुंब' भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है, जो न केवल भावनात्मक और सामाजिक समर्थन प्रदान करता है, बल्कि आर्थिक स्थिरता का भी आधार है। कुटुंब प्रबोधन अर्थात् परिवार के सदस्यों के बीच सामंजस्य और जागरूकता को बढ़ावा देना, एक ऐसी परंपरा है जो न केवल सामाजिक भागीदारी को बढ़ाती है, बल्कि उसे आर्थिक बल भी प्रदान करती है। भारत की वैभवशाली एवं गौरवशाली ज्ञान परंपरा में कुटुंब प्रबोधन को क्षमतावान, समृद्ध और युवाओं के लिए प्रेरणा स्थली के रूप में स्थापित किया गया है। 'वसुधैव कुटुंबकम' के भाव से अनुप्राणित भारत की सनातन संस्कृति में वैदिक काल से ही मानव की सामाजिक चेतना कुटुंब को एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप अंगीकार करती है। यह न केवल सामाजिक कारणों से है वरन् इसके मूल में मनोवैज्ञानिक और आर्थिक पक्ष भी है।

कुटुंब में पारिवारिक-सामाजिक दायित्व बोध और राष्ट्रीय स्वत्व के प्रति जागरूकता, एकता और संस्कारों में वृद्धि तब और प्रबल हो जाती है, जब आर्थिक सुदृढ़ता का आधार कुटुंब हो। गंभीरता से चिंतन करने से यह ध्यान में आता है कि भारतीय संस्कृति परंपराओं और सनातन धार्मिक मान्यताओं के प्रति सम्मान और उन्हें अपने जीवन में अपनाने की प्रेरणा संस्कार और मूल्य-संवर्धन का आधार कुटुंब-प्रबोधन और आर्थिक स्थायित्व है। कुटुंब के प्रत्येक सदस्य का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सशक्तिकरण राष्ट्रीय एकता और अखंडता में सहायक है।

आर्थिक समृद्धि के संदर्भ में कुटुंब की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि परिवार न केवल आर्थिक गतिविधियों का केंद्र होता है, बल्कि वह एक ऐसा संगठित प्रयत्न है जहां संस्कार, शिक्षा, और आर्थिक प्रबंधन की नींव रखी जाती है, जिसका वर्णन निम्न बिंदुओं पर किया जा सकता है-

**संगठित प्रयत्न :** परिवार एक इकाई के रूप में एकत्रित संसाधनों और प्रयासों का केंद्र बिंदु होता है। जब परिवार के सभी सदस्य एकजुट होकर आर्थिक उन्नति के लिए काम करते हैं, तो यह उनके प्रयासों का संगठित और अधिक प्रभावी उपयोग सुनिश्चित करता है। परिवार के संसाधनों का सही ढंग से प्रबंधन करने, निवेश करने और आय-व्यय का ध्यान रखने से आर्थिक समृद्धि बढ़ाई जा सकती है।

**संयुक्त निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया**

कुटुंब के माध्यम से परिवार के सभी सदस्यों को आर्थिक निर्णयों में शामिल किया जाता है। परिवार के सदस्यों के बीच खुली बातचीत और विचार-विमर्श से वे बेहतर निर्णय लेने में सक्षम होते हैं। जब परिवार में आर्थिक मुद्दों पर चर्चा होती है, तो सभी सदस्य अपने ज्ञान और अनुभव के आधार पर विचार प्रस्तुत करते हैं, जिससे एक सटीक और संतुलित निर्णय लिया जा सकता है।

**संस्कार और शिक्षा :** कुटुंब बच्चों और युवा पीढ़ी को आर्थिक प्रबंधन, बचत, निवेश और दायित्व बोध के महत्व के बारे में शिक्षित करता है। संस्कारों के माध्यम से, परिवार अपने सदस्यों को मेहनत, ईमानदारी, और कर्तव्यनिष्ठा जैसे गुणों को सिखाता है, जो आर्थिक सफलता के लिए आवश्यक होते हैं। एक संस्कारित कौटुंबिक परिवेश में पले-बढ़े बच्चे वित्तीय दायित्व को प्रभावी ढंग से समझते हैं और उनका समुचित उपयोग करना जानते हैं।

**सुरक्षा और सहयोग :** परिवार आर्थिक सुरक्षा का एक स्रोत होता है। एक व्यक्ति के जीवन में जब भी आर्थिक या अन्य संकट आता है, तो परिवार उसे आवश्यक मदद और सहयोग प्रदान करता है। यह सहयोग संकट से उबरने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यथा कोरोना काल खंड में उत्पन्न स्वास्थ्य और आर्थिक संकट को भारतवर्ष अच्छी कुटुंब व्यवस्था होने के कारण आसानी से हरा पाया। इसके साथ ही, यदि परिवार के सदस्य मिलजुल कर कार्य करते हैं, तो वे एक दूसरे के आर्थिक उन्नयन में योगदान कर सकते हैं, जैसे कि परिवार के किसी सदस्य का व्यापार में सहयोग करना या नई योजनाओं में निवेश करना।

**सामुदायिक और सामाजिक सहयोग :** परिवार एक व्यापक समुदाय का अंश होता है। एक समृद्ध परिवार न केवल अपनी इकाई की आर्थिक समृद्धि में योगदान देता है, बल्कि समुदाय और समाज के अन्य लोगों के साथ भी आर्थिक सहयोग और सहभागिता बढ़ाता है। इसके माध्यम से, स्थानीय और क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

**मूल्य, संस्कार और अनुशासन** आर्थिक प्रबंधन में अनुशासन की बड़ी भूमिका होती है और यह अनुशासन परिवार के संस्कारों से ही शुरू होता है। परिवार अपने सदस्यों को बचत करने, अनावश्यक खर्चों से बचने और धन का सही उपयोग करने का महत्व सिखाता है। अनुशासनबद्ध परिवार अपने संसाधनों का सही प्रबंधन कर सकते हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत होती है और दीर्घकालिक समृद्धि की सुनिश्चितता अधिक होती है।

**मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक आत्म नियंत्रण :** आर्थिक समृद्धि के लिए मानसिक और भावनात्मक संतुलन की आवश्यकता होती है। परिवार अपने सदस्यों को न केवल भावनात्मक सहयोग प्रदान करता है, बल्कि मानसिक स्थिरता भी देता है। यह स्थिरता व्यक्ति के धैर्य और आत्म-संयम से आर्थिक चुनौतियों का सामना करने की शक्ति देती है। जब परिवार में भावनात्मक समर्थन होता है, तो व्यक्ति आर्थिक निर्णयों को अधिक विवेकपूर्ण ढंग और धैर्य से लेने में सक्षम होता है।

**कुटुंब में अहम् का लोप और सामूहिकता का भाव :** अहम् या 'मैं' की भावना का अर्थ व्यक्ति के स्वयं के प्रति अति आग्रह और स्वार्थ से है। जब व्यक्ति अपने अहम् के वशीभूत होता है, तो वह अपने निजी स्वार्थ और हितों को सर्वोपरि मानता है, जिससे सहयोग, सामंजस्य और सामूहिक प्रयासों में कमी आ जाती है। इसके विपरीत, जब व्यक्ति अपने अहंकार को त्याग कर सामूहिकता का भाव अपनाता है, तो वह समाज, कुटुंब और संगठन के हितों को अपने व्यक्तिगत हितों से ऊपर रखता है। यही भावना कुटुंब में आर्थिक उन्नति के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि सामूहिकता के आधार पर प्रयासों का सामंजस्य होता है, जो आर्थिक सफलता का मार्ग प्रशस्त करता है।

**कुटुंब केवल एक सामाजिक इकाई नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक-आर्थिक समृद्धि का स्तंभ भी है। परिवार के सदस्य मिलकर संसाधनों का सही उपयोग, अनुशासन, और सम्यक प्रबंधन से अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत कर सकते हैं। संस्कारों और शिक्षा के माध्यम से, परिवार एक दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता और समृद्धि की दिशा में सफलतापूर्वक आगे बढ़ सकता है।**

**पारिवारिक व्यवसाय और उद्यमिता** कई परिवार पारंपरिक रूप से व्यवसाय और उद्यमिता में पीढ़ी दर पीढ़ी लगे होते हैं। परम्परागत पारिवारिक व्यवसाय आर्थिक स्थिरता और समृद्धि का स्रोत होते हैं। एक परिवार की सामूहिक उद्यमशीलता उनके व्यवसाय को सफल बनाने और उसे वृहद स्तर पर विस्तारित करने में मदद करती है। इससे न केवल उस परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है, बल्कि समाज में रोजगार के अवसर भी उत्पन्न होते हैं।

**समय प्रबंधन और यथोचित कार्य विभाजन :** परिवार के सदस्यों के बीच कार्य विभाजन होने से आर्थिक उत्पादकता बढ़ती है। जब सभी सदस्य मिलकर अपने दायित्व का कार्य संपादित करते हैं, तो परिवार की सामूहिक कार्य क्षमता बढ़ती है और समय का कुशल प्रबंधन होता है। यह समय की बचत के साथ-साथ संसाधनों के अधिकतम उपयोग को सुनिश्चित करता है, जिससे आर्थिक उन्नति होती है।

**सामाजिक पूंजी का निर्माण :** कुटुंब के माध्यम से सामाजिक संबंधों को भी सम्बल मिलता है। सामाजिक पूंजी, जैसे विश्वास, सहयोग और संबंधों का नेटवर्क, आर्थिक समृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। परिवार के अन्य लोगों के साथ मजबूत संबंध होने से व्यापार, नौकरी और आर्थिक अवसरों में सहायता मिलती है। कुटुंब केवल एक सामाजिक इकाई नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक-आर्थिक समृद्धि का स्तंभ भी है। परिवार के सदस्य मिलकर संसाधनों का सही उपयोग, अनुशासन और सम्यक प्रबंधन से अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत कर सकते हैं। संस्कारों और शिक्षा के माध्यम से, परिवार एक दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता और समृद्धि की दिशा में सफलतापूर्वक आगे बढ़ सकता है। इसलिए, आर्थिक समृद्धि में कुटुंब की भूमिका न केवल महत्वपूर्ण है, बल्कि अनिवार्य भी है। ■

# सनातन संस्कृति में परिवार

डॉ. आज्ञाराम पांडेय
आचार्य और संकायाध्यक्ष, जनसंचार विभाग
गलगोटिया विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा


**भारतीय दर्शन में परिवार को मानव जीवन की आधारशिला माना गया है। हिन्दू धर्म में, परिवार को गृहस्थाश्रम के रूप में देखा जाता है, जो जीवन के चार महत्वपूर्ण आश्रमों में से एक है।**

परिवार या कुटुंब प्रबोधन भारतीय दर्शन और सांस्कृतिक मूल्यों से गहराई से जुड़ा हुआ है। भारतीय परंपरा में परिवार को समाज की नींव के रूप में देखा जाता है, जहां प्रत्येक सदस्य का विकास और कल्याण परिवार के ढांचे के माध्यम से होता है। कुटुंब प्रबोधन का अर्थ है परिवार को शिक्षित और संगठित करना ताकि वह समाज और राष्ट्र के निर्माण में अपना योगदान दे सके। हमारे यहां 16 संस्कारों की बात की गई है। जन्म से लेकर अंतिम सांस तक जीवन संस्कारों से जुड़ा है और इन्हीं संस्कारों से सामाजिकता और इसके महत्व को समझा जा सकता है। जिसे हम परंपरा कहते हैं, दरअसल वह कुटुंब प्रबोधन से ही जीवित है। परिवार समाज के संरचनात्मक ढांचे के रूप में देखा जाता है। यह समाज में नैतिकता, संस्कृति और धर्म के प्रसार का प्रमुख साधन है। परिवार ही वह स्थान है जहां व्यक्ति के चरित्र का निर्माण होता है और जहां सही और गलत का भेद समझाने का काम किया जाता है। भारतीय समाज में परिवार को समाज की सबसे छोटी इकाई माना जाता है, लेकिन यह व्यक्ति के जीवन में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारतीय संस्कृति में, परिवार न केवल माता-पिता और बच्चों के बीच संबंधों का समूह है, बल्कि यह दादा-दादी, चाचा-चाची, भाई-बहन और अन्य रिश्तेदारों का एक जटिल नेटवर्क है। भारत के गांवों में कुटुंब प्रबोधन के अनेकानेक उदाहरण आज भी मिलते हैं जो समाज को दिशा देने में सक्षम हैं। जैसे उत्तर प्रदेश के गोंडा जिले के एक गांव में कोई भी विवाद पुलिस और अदालत में नहीं जाता है पूरा गांव एक परिवार की भांति अपनी समस्या स्वयं हल करता है।

परिवार प्रबोधन का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि प्रत्येक सदस्य अपने कर्तव्यों का पालन करें और समाज में सामंजस्य स्थापित करने में योगदान दें। परिवार प्रबोधन का उद्देश्य केवल आर्थिक या भौतिक कल्याण नहीं है, बल्कि यह मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास की ओर भी ध्यान देता है।

**भारतीय दर्शन में परिवार :** भारतीय संस्कृति में कुटुंब प्रबोधन का विचार वेदों, उपनिषदों, महाभारत, रामायण और अन्य धर्मग्रंथों में भी देखने को मिलता है। इन ग्रंथों में परिवार के महत्व, उसकी संरचना और उसमें रहने वाले सदस्यों के कर्तव्यों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

**अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।**
**उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुंबकम्॥**

महोपनिषद् (6.71) की उपरोक्त पंक्तियां बताती हैं कि संकीर्ण मानसिकता वाले लोग अपने और दूसरों के बीच भेदभाव करते हैं, लेकिन जो उदार विचारधारा वाले लोग होते हैं, वे पूरी पृथ्वी को एक परिवार मानते हैं।

**"मातृदेवो भव, पितृदेवो भव,**
**आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव।"**

तैत्तिरीय उपनिषद् (1.11.2) परिवार में माता-पिता, गुरु और अतिथि का सम्मान करने की शिक्षा देता है। परिवार के प्रत्येक सदस्य को अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए और बड़ों का सम्मान करना चाहिए। इसके अलावा परिवार में सामंजस्य के लिए बृहदारण्यक उपनिषद् (1.4.14) का मंत्र भारतीय समाज का मंत्र हो गया है जो आज भी समाज को निर्देशित करता।

**सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।**

**सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित् दुःखभाग्भवेत् ।।**

भगवद्गीता (3.35) में कर्तव्यपालन का महत्व समझाते हुये कहा गया है कि

**"स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।"** अर्थात् अपने कर्तव्यों का पालन करना सदैव कल्याणकारी होता है। कुटुंब प्रबोधन में यह शिक्षा दी जाती है कि हर सदस्य को अपने व्यक्तिगत और पारिवारिक कर्तव्यों का पालन करना चाहिए।

रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम और उनके परिवार के सदस्यों के बीच पारस्परिक सम्बन्धों, कर्तव्यों और आदर्शों का दर्शन है। इस तरह श्रीरामचरितमानस में तुलसीदास जी ने परिवार, समाज और कर्तव्यों के आदर्शों को बेहद सुन्दरता से प्रस्तुत किया है। जिसका अनुसरण आज भी हमारे समाज में परिलक्षित है। श्रीराम के चरित्र में पितृभक्ति और कर्तव्यपालन का आदर्श देखने को मिलता है। परिवार प्रबोधन के सिद्धांतों को श्रीरामचरितमानस की इन शिक्षाओं द्वारा गहराई से समझा जा सकता है, जो न केवल भारतीय दर्शन का हिस्सा है, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए प्रेरणास्रोत भी है।

भारतीय दर्शन में परिवार को मानव जीवन की आधारशिला माना गया है। हिन्दू धर्म में, परिवार को गृहस्थाश्रम के रूप में देखा जाता है, जो जीवन के चार महत्वपूर्ण आश्रमों में से एक है। गृहस्थाश्रम का मुख्य उद्देश्य परिवार और समाज की भलाई के लिए काम करना है। इसमें यह बताया गया है कि व्यक्ति को केवल अपने परिवार की चिंता नहीं करनी चाहिए, बल्कि उसे समाज और मानवता की भी सेवा करनी चाहिए। इसी क्रम में श्रीमद्भगवद्गीता में अर्जुन और कृष्ण के संवाद के माध्यम से भी परिवार और कर्तव्यों के बीच संतुलन बनाने का संदेश दिया गया है। परिवार को भारतीय संस्कृति में ऐसा स्थान प्राप्त है कि इसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, जैसे जीवन के चार पुरुषार्थों के साधन के रूप में देखा जाता है।

**परिवार की संरचना में बदलाव** आधुनिक समाज में परिवार की परिभाषा और संरचना में कुछ बदलाव आए हैं। परिवार अब केवल संयुक्त परिवार तक सीमित नहीं है, बल्कि एकल परिवार की अवधारणा भी प्रचलित हो गई है। फिर भी, भारतीय दर्शन के अनुसार परिवार की भूमिका और महत्व में कोई कमी नहीं आई है। हालांकि, कुटुंब प्रबोधन का सिद्धांत परिवार के आकार या प्रकार पर निर्भर नहीं करता। एकल परिवार में भी बड़ों का सम्मान और छोटों का संरक्षण कुटुंब प्रबोधन के आदर्श हैं जिन्हें अपनाया जा सकता है। संयुक्त परिवार की कमी से बच्चों में सामाजिक मूल्यों की कमी न हो, इसके लिए माता-पिता को विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए कि वे अपने बच्चों को भारतीय संस्कृति और नैतिक मूल्यों से अवगत कराएं। साथ ही तकनीकी युग और संचार के प्रभाव को जीवन और परिवार पर हावी न होने दें। इस स्थिति में कुटुंब प्रबोधन की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। इसलिए परिवार के साथ नियमित रूप से बातचीत करने और समय बिताने के लिए एक दिन या समय निर्धारित कर जैसे पारिवारिक गतिविधियां, खेल या सामूहिक भोजन के जरिये परस्पर संबंधों को प्रगाढ़ बना सकते हैं।

**महिलाओं की बदलती भूमिका** आधुनिक समय में महिलाओं की भूमिका घर के साथ-साथ बाहरी क्षेत्रों में भी बढ़ी है। इस बदलती भूमिका के साथ परिवार के कर्तव्यों का पुनः संतुलन जरूरी हो जाता है। कुटुंब प्रबोधन के सिद्धांतों के तहत, परिवार के सभी सदस्यों को समान रूप से जिम्मेदारियों में भाग लेना चाहिए। घर के कामकाज और बच्चों की देखभाल में केवल महिलाओं की जिम्मेदारी नहीं होनी चाहिए; यह पूरे परिवार की जिम्मेदारी है। परिवार के सभी सदस्यों को एक-दूसरे के करियर और व्यक्तिगत जीवन के प्रति समर्थन देना चाहिए, जिससे परिवार में समर्पण और सहयोग का भाव बढ़ सके। साथ ही आधुनिक युग में करियर और जीवन के अन्य क्षेत्रों में संतुलन बनाना एक बड़ी चुनौती है। इसलिए इसके कुप्रभाव से परिवार को बचाने के लिए परिवार के सदस्य आपस में समय बिताने के लिए योजना बनाकर एक दूसरे के पूरक के रूप में काम कर सकते हैं। सप्ताहांत पर परिवार के साथ सामूहिक गतिविधियां करना, छुट्टियों में यात्रा पर जाना या साधारण पारिवारिक उत्सव मनाना कुटुंब के प्रति समर्पण को मजबूत कर सकता है।

> **कुटुंब प्रबोधन की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे मूल्यों को पुनः स्थापित करें। बच्चों को भारतीय संस्कृति, परंपराएं, और नैतिक शिक्षाएं सिखाने के लिए परिवार के बड़ों को पहल करनी चाहिए। इसके लिए धार्मिक ग्रंथों, महापुरुषों के जीवन और भारतीय संस्कारों की शिक्षा दी जा सकती है।**

**नैतिक और सांस्कृतिक मूल्य :** आज के युवाओं में सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों का क्षरण हो रहा है, क्योंकि आधुनिक शिक्षा और पश्चिमी प्रभावों के चलते भारतीय दर्शन और परंपराओं की ओर कम ध्यान दिया जा रहा है। कुटुंब प्रबोधन की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे इन मूल्यों को पुनः स्थापित करें। बच्चों को भारतीय संस्कृति, परंपराएं, और नैतिक शिक्षाएं सिखाने के लिए परिवार के बड़ों को पहल करनी चाहिए। इसके लिए धार्मिक ग्रंथों, महापुरुषों के जीवन और भारतीय संस्कारों की शिक्षा दी जा सकती है। त्यौहारों, धार्मिक कार्यक्रमों और पारिवारिक आयोजनों के माध्यम से बच्चों में भारतीय मूल्यों के प्रति जागरूकता बढ़ाई जा सकती है। परिवार के सदस्य एक-दूसरे के साथ पारंपरिक गीत, कथा और धार्मिक संस्कारों को साझा कर सकते हैं, जिससे परिवार में भारतीय संस्कृति की जड़ें मजबूत होंगी। डिजिटल युग में भी परिवार की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे अपने बच्चों को सहनशीलता, समावेशिता और कर्तव्यबोध का महत्व सिखाएं। यह आधुनिक समय में परिवार की एक नई परिभाषा को आकार देने में सहायक होगा। ■

# टूटे नहीं, योजना से तोड़े गए परिवार

रामवीर श्रेष्ठ
एंकर, संसद टीवी

**अंग्रेजों ने एक ही दांव में हमारी पूरी सामाजिक व्यवस्था को चित कर दिया। कुटुंब टूटने लगे। धीरे-धीरे गांव की गांवियत मरने लगी। इसी से समाज में वंचित और सवर्ण जैसे शब्दों का उदय हुआ, जातिवाद का उदय हुआ और इससे सियासत के पंख लग गए। हम भूल गए कि कहां से चले थे, कैसे चले थे, किन शर्तों के साथ चले थे और अचानक से कहां आ गए?**

परिवार समाज की सबसे पहली इकाई है, यही वो इकाई है, जहां से मनुष्य के मनुष्य बनने का क्रम शुरू होता है। कई बार हम अपने आस-पास और कई बार अपने ही कुछ परिवार को दरकते हुए देखते हैं, दूध में दरार पड़ते देखते हैं। यह असहनीय होता है, तो कुछ के लिए स्वतंत्रता या करीब-करीब मुक्ति। कई खुले आसमान में उड़ना चाहते हैं, लेकिन वो नहीं जानते कि ईश्वर ने ये हुनर पक्षियों के अलावा किसी को नहीं दिया। इंसान एक सामाजिक प्राणी है और समाज के ताने बाने का हिस्सा बनने के बाद ही एक सुंदर तस्वीर बनती है। क्या आप जानते हैं कि एक समय ऐसा भी था जब हमारे गांव ही एक परिवार थे। सबसे पहले अंग्रेजों की नजर आपस में गुंथे हुए इस परिवार पर पड़ी और उनके एक ही वार से वो गांव जो अभी तक एक परिवार की तरह ही रहते आए थे, एक ही झटके में टूट गए। समय था सन् 1793, यही वो समय था जब अंग्रेजों ने परमानेंट सेटलमेंट एक्ट पास किया। इस कानून से तीन काम हुए।

पहला, जमीनों की नपाई शुरू हुई। गांवों की सीमाएं तय की गईं। आबादी कहां तक है, जोत की जमीन कहां तक है आदि। ये सब पता लगाकर जो अतिरिक्त जमीन मिली उसे उन्होंने वन विभाग की जमीन बताकर कब्जा लिया। दूसरा काम हुआ जमीनों को वंशानुगत करना। मतलब यह जानकर आज हैरान हो सकते हैं कि इस कानून के बनने से पहले तक जमीन किसी व्यक्ति के नाम नहीं थी, बल्कि वो गांव की थी। पूरा गांव एक परिवार की तरह से काम कर रहा था। जैसे बढ़ई, लुहार, कुम्हार आदि अपने-अपने काम कर रहे थे, वैसे ही किसान भी अपना काम करता था। फसल की बुआई या कटाई के वक्त गांव के

बाकी समूह किसानों के साथ हाथ बंटाते थे। लेकिन जैसे ही जमीन किसानों के नाम की गई, वैसे-वैसे समय के साथ उनका नजरिया भी बदलने लगा, जो आगे चलकर भूमिधर और भूमिहीनों में बदल गया।

हमारे बड़ों ने गांवों की सभी जरूरतों को गांवों में ही विकसित किया था। गांव में सब समुदाय सेवाओं के बदले निशुल्क सेवाएं देते थे। गांव समृद्ध थे, यहां सब कुछ था। ये गांव कृषि प्रधान ही नहीं, वरन उद्योग प्रधान भी थे। घर-घर में उद्योग थे, ये वो दौर था जब हमारे गांव, चमड़े, लोहे और कांसे से बनी वस्तुएं बनाते थे। ये वो समय था जब हमारे गांवों के परिवार कालीन, इत्र और कपड़ा बनाते थे, मसालों का उत्पादन करते थे। एक्सपोर्ट के इस काम को संभालने वाला पूरा एक समाज होता था जिसे बंजारा यानि वाणिज्यहारा कहा जाता था।

हिस्ट्री ऑफ वर्ल्ड इकोनॉमिक्स के अनुसार, पहली से 15 वीं शताब्दी तक इन्हीं गांवों की वजह से भारत पूरी विश्व अर्थव्यवस्था के लगभग 30 फीसदी हिस्से का मालिक बना रहा। लेकिन ग्लोबल पैरासाइट्स बने अंग्रेजों ने एक ही दांव में हमारी पूरी व्यवस्था को चित कर दिया। कुटुंब टूटने लगे। धीरे-धीरे गांव की गांवियत मरने लगी। किसान जमीन को अपनी मान बैठे, जिसे अभी तक खरीदा बेचा नहीं जा सकता था, जो अभी तक माँ थी, उसका भी व्यापार शुरू हुआ। उसकी भी कीमत लगने लगी। एक समय अपनी अपनी सेवाएं दे रहे समुदाय खेती की उपज पर अपना अधिकार मानते थे, लेकिन वक्त के साथ वो किसान के अहसान में बदलने लगा। इसी से समाज में वंचित और सवर्ण जैसे शब्दों का उदय हुआ, जातिवाद का उदय हुआ और इससे सियासत के पंख लग गए। हम भूल गए कि कहां से चले थे, कैसे चले थे, किन शर्तों के साथ, साथ-साथ चले थे और अचानक से कहां आ गए?

ये तो बात थी आजादी के पहले की,

> **आज अपने मूल रूप में देश का एक भी गांव नहीं बचा है। उसका सबसे बड़ा असर हुआ है, हमारे परिवारों पर। बची हैं तो सिर्फ धुंधली सी स्मृतियां, इन्हीं स्मृतियों के सहारे हमें अपने मूल तक जाने का संकल्प लेना होगा। संकल्प ऐसे परिवार को बसाने का, जो जीवन मूल्यों की विरासत में लिपटा हो। लेकिन इसके लिए जरूरी होगा कि सामाजिक प्रयास, नीतिगत सुधारों की भी मांग करें।**

मगर देखने में ये आया कि हम स्वाधीनता के बाद भी अपने परिवारों को बचाने में नीतिगत सुधार नहीं कर पाये। ऐसा ही एक मामला है, पर्सनल अकाउंट का। अब आप कहेंगे कि ये क्या बात हुई? दरअसल इस बात को समझने से पहले हमें परिवार की परिभाषा को जानना होगा। परिवार का मतलब होता है, ज्वाइंट प्रॉपर्टी और ज्वाइंट रिस्पांसबिलिटी। इस हिसाब से संपत्ति की हिस्सेदारी का भी सबसे आसान तरीका था हर सदस्य की संपत्ति में बराबर की हिस्सेदारी, लेकिन विदेश से आई बैंकिंग प्रणाली को हमने बिना सोचे समझे ही स्वीकार किया। परिवार की कसौटी कहती है कि एक परिवार एक अकाउंट, लेकिन हो गया पर्सनल अकाउंट। दरअसल बाजार ऐसा चाहता है, अब अगर आप तीन भाई हैं और एक की कमाई बढ़ी और उसे, उसने अपने पर्सनल अकाउंट में आपसे छिपाकर जिस दिन से रखा, मान लीजिए कि वो उसी दिन आपसे टूट गया। इसका मतलब ये है कि देश में करोड़ों लोग ऐसे हैं जो परिवार में रहते हुए टूटने की तैयारी में लगे हैं। ये दुखद है, वो इसलिए कि आप जैसी व्यवस्था बनाते हैं व्यक्ति और समाज का स्वभाव भी उसी के अनुरूप बदलने लगता है और यही हुआ।

तीसरी बात, राशन कार्ड। अब आप कहेंगे कि ये हमें कैसे अलग कर रहा है? हमें मालूम होना चाहिए कि जैसे ही आपके या मेरे बेटे की शादी होगी, वैसे ही सरकार उसे एक अलग परिवार मान लेगी, उसका अलग राशन कार्ड बनेगा। मतलब ये व्यवस्था भी मनोवैज्ञानिक तौर पर उसे एक अलग परिवार मानने के लिए प्रेरित करती है। ऐसे ही जैसे मान लिया मेरे पिताजी पर 30 बीघा जमीन है, हम तीन भाई हैं, हमने सोचा भी नहीं कि हम कभी अलग भी होंगे, लेकिन जब उनकी शादी के लिए उनके प्रोफाइल के बारे में पूछा जाएगा तो ये भी पूछा जाएगा कि लड़के के हिस्से में कितना बीघा जमीन आती है। इस तरह से परिवार में रहते हुए ही हम अपने-अपने हिस्सों को लेकर सतर्क हो जाते हैं, ये भारतीय परिवार परंपरा नहीं है।

आखिरी बात, पंचायत चुनाव। स्थानीय स्तर पर लोकतंत्र को लाना स्वागत योग्य कदम है। परंतु इन चुनावों में गोलबंदी पारिवारिक स्तर तक चली जाती है और ये ऐसी बात है जिसे लेकर मुझे ज्यादा बताने की जरूरत नहीं होनी चाहिए। समाज में इतनी गांठें पड़ जाती हैं जो पांच सालों तक नहीं खुलती और जब तक ढीली होना शुरू होती हैं तो अगला चुनाव आ जाता है। ये सब होते हुए मैं अपनी आंखों से देखता रहा हूं। सच तो ये है कि आज अपने मूल रूप में देश का एक भी गांव नहीं बचा है। उसका सबसे बड़ा असर हुआ है, हमारे परिवारों पर। बची हैं तो सिर्फ धुंधली सी स्मृतियां, इन्हीं स्मृतियों के सहारे हमें अपने मूल तक जाने का संकल्प लेना होगा। संकल्प ऐसे परिवार को बसाने का, जो जीवन मूल्यों की विरासत में लिपटा हो। लेकिन इसके लिए आवश्यक है समाज के सामूहिक प्रयास के साथ नीतिगत सुधार। ■

# दायित्वबोध से समृद्ध और सक्षम बनेगा भारत

राजीव सचान
एसोसिएट एडिटर, दैनिक जागरण

**किसी देश के नागरिक अपने कर्तव्यों के निर्वहन को लेकर तत्पर हो जाएं तो उसे आगे बढ़ने से कोई नहीं रोक सकता। कर्तव्यों के निर्वहन के मोर्चे पर नागरिकों की प्रतिबद्धता से भारत एक सक्षम, समृद्ध और समरस राष्ट्र बन सकता है।**

अपने अधिकारों के साथ स्वयं के कर्तव्यों के प्रति जागरूक नागरिक किसी भी समाज और देश के लिए एक बड़ी पूंजी होते हैं। प्रायः यह सुनने को मिलता है कि द्वितीय विश्व युद्ध में परमाणु बम हमले का शिकार होने और पराजय का सामना करने के बाद जापान यदि अपने पैरों पर खड़ा हो सका और एक उदाहरण स्थापित करने में सफल रहा तो इसके पीछे वहां के नागरिकों की नागरिक दायित्वों के प्रति प्रतिबद्धता रही। इस प्रतिबद्धता का प्रमाण विश्व के अन्य अनेक देशों के लोग भी देते हैं। यदि किसी देश के नागरिक अपने कर्तव्यों के निर्वहन को लेकर तत्पर हो जाएं तो उसे आगे बढ़ने से कोई नहीं रोक सकता। समय के साथ हमारे देश के नागरिक भी अपने अधिकारों के प्रति सचेत और मुखर हो रहे हैं, लेकिन कर्तव्यों के निर्वहन के मोर्चे पर अभी बहुत कुछ करना शेष है। यह जो शेष है, उसकी पूर्ति करके ही भारत को एक सक्षम, समृद्ध और समरस राष्ट्र बनाया जा सकता है। कोई सरकार कितनी भी समर्थ क्यों न हो, वह अपने बलबूते सभी समस्याओं का निदान नहीं कर सकती। कई समस्याएं तो ऐसी हैं, जिनका समाधान तब तक संभव ही नहीं जब तक सामान्य जन उसका सहयोग करने के लिए आगे न आएं। उदाहरणस्वरूप देश को साफ-सुथरा रखने का स्वच्छ भारत अभियान। इस अभियान ने पिछले 10 वर्षों में काफी कुछ हासिल किया है, लेकिन अभी बहुत कुछ हासिल करना शेष है। इससे कोई इनकार नहीं कर सकता कि स्वच्छता अभियान के चलते लोग साफ- सफाई के प्रति सचेत हुए हैं और उसके परिणामस्वरूप गलियां, सड़कें, पार्क और अन्य सार्वजनिक स्थान अपेक्षाकृत स्वच्छ नजर आने लगे हैं। कुछ शहरों ने तो स्वच्छता के मामले में मिसाल कायम की है, जैसे इंदौर।

एक लंबे अरसे से यह सुनने, पढ़ने और देखने में आ रहा है कि आधुनिक जीवन शैली के चलते भी पर्यावरण को क्षति पहुंच रही है और जल एवं वायु प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। पर्यावरण को साफ-सुथरा रखने के लिए सरकारों को अपने हिस्से की जिम्मेदारी का निर्वाह करने के लिए आगे आना ही होगा, लेकिन इसके साथ लोगों को भी सचेत होना होगा। यह हर नागरिक की जिम्मेदारी बनती है कि वह पर्यावरण की रक्षा के प्रति सचेत रहे। पॉलीथिन और प्लास्टिक पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने का काम कर रहे हैं। इसके चलते पॉलीथिन को प्रतिबंधित करने और सिंगल यूज प्लास्टिक के चलन को रोकने के लिए कदम भी उठाए जा रहे हैं, लेकिन बात बन नहीं पा रही है। यह इसलिए भी नहीं बन रही है, क्योंकि लोग पॉलीथिन और प्लास्टिक की वस्तुओं का इस्तेमाल करना कम नहीं कर रहे हैं। इसके पीछे यह धारणा भी है कि अन्य लोग तो कर ही रहे होंगे और यदि वह खुद नहीं करते हैं तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। कल्पना करें कि ऐसी ही धारणा सभी नागरिकों की हो तो फिर क्या होगा? लोग तनिक सा जतन करके पॉलीथिन और प्लास्टिक के उपयोग को यथासंभव कम कर सकते हैं। प्लास्टिक के कई सामान वर्षों बाद भी कचरा घरों, तालाबों, नदियों अथवा समुद्र या फिर जमीन पर पड़े होंगे, जो सबसे पहले चलन में थे। इसका कारण यह है कि प्लास्टिक का क्षरण होने में बहुत समय लगता है और क्षरण की इस प्रक्रिया के दौरान भी यह मिट्टी, पानी और हवा को दूषित करता है। प्लास्टिक की सभी वस्तुओं का उपयोग रातों-रात बंद नहीं किया जा सकता, लेकिन इनके उपयोग को सीमित अवश्य किया जा सकता है। जैसे प्लास्टिक के टूथब्रश के स्थान पर बांस का बना टूथब्रश बाजारों में उपलब्ध हैं, लेकिन अभी उनका बड़े पैमाने पर इस्तेमाल नहीं होता है। यह इस्तेमाल बढ़ाया जा सकता है और बढ़ाया भी जाना चाहिए, क्योंकि एक नागरिक के तौर पर हर किसी की जिम्मेदारी है कि वह पर्यावरण को क्षति पहुंचाने वाले उत्पादों से अपनी दूरी बनाए।

**देश के नागरिकों को यह आभास होना चाहिए कि उन्हें अपने दैनिक जीवन में नागरिक दायित्व बोध का परिचय देने की आवश्यकता है। ध्यान रहे कि दायित्व बोध की कमी ही अव्यवस्था, अराजकता, भ्रष्टाचार के साथ अन्य समस्याओं को जन्म देती है।**

नागरिक दायित्व बोध का परिचय हर क्षेत्र में दिया जाना चाहिए और वह हमारी दिनचर्या का अंग बनना चाहिए। अपने देश में बड़ी संख्या में मार्ग दुर्घटनाएं होती हैं। इनमें प्रतिवर्ष हजारों लोग मारे जाते हैं अथवा अपंग हो जाते हैं। कुछ वर्ष पहले तक सड़क दुर्घटनाओं में मरने वालों की संख्या सालाना एक लाख हुआ करती थी। अब यह बढ़कर डेढ़ लाख हो गई है। सड़क दुर्घटनाओं के कारणों में एक कारण है यातायात नियमों की अनदेखी और उपेक्षा अथवा उनका जानबूझकर किया जाने वाला उल्लंघन। यातायात नियमों की अनदेखी करना केवल अपनी ही नहीं, बल्कि दूसरों की जान को भी जोखिम में डालना है। यह जोखिम बढ़ता ही चला जा रहा है, क्योंकि लोग सीट बेल्ट और हेलमेट नहीं पहनते। इतना ही नहीं, हाईवे तक में उल्टी दिशा में वाहन चलाते हैं। इससे दुर्घटनाएं अधिक होती हैं। जैसे सड़क दुर्घटनाओं की खबरें रह-रहकर आती रहती हैं, वैसे ही इस आशय की खबरें भी जब-तब आती रहती हैं कि किसी सार्वजनिक कार्यक्रम और विशेष रूप से धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक आयोजन में भगदड़ मचने से इतने लोगों की मौत। ये मौतें इसीलिए होती हैं, क्योंकि कुछ लोग भीड़ भरे स्थलों में संयम और अनुशासन का परिचय देने से इनकार करते हैं। यह इनकार कई बार अपने अथवा दूसरों के लिए जानलेवा साबित होता है। यह भी किसी से छिपा नहीं कि बस स्टेशन, रेलवे स्टेशन और हवाई अड्डों के साथ-साथ सरकारी कार्यालयों में लोग पंक्तिबद्ध तरीके से खड़े होने में लापरवाही का परिचय देते हैं। यदि सार्वजनिक स्थलों में संयम और अनुशासन का परिचय नहीं दिया जाएगा तो अव्यवस्था को फैलने से रोका नहीं जा सकता।

वैसे तो हमारे संविधान में नागरिकों के दायित्व का भी उल्लेख किया गया है, लेकिन उनका जैसा प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए और लोगों को जिस तरह उनसे परिचित होना चाहिए, उसका अभाव दिखता है। देश के नागरिकों को यह आभास होना चाहिए कि उन्हें अपने दैनिक जीवन में नागरिक दायित्व बोध का परिचय देने की आवश्यकता है। ध्यान रहे कि दायित्व बोध की कमी ही अव्यवस्था, अराजकता, भ्रष्टाचार के साथ अन्य समस्याओं को जन्म देती है। दायित्व बोध के मोर्चे पर सब कुछ निराशाजनक नहीं है और इसका परिचय वे अनेक लोग दे रहे हैं, जो स्वेच्छा और स्वप्रेरणा से समाजसेवा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं। कोई गरीब बच्चों को शिक्षित कर रहा है अथवा उन्हें हुनरमंद बना रहा है। कोई लोगों की नशे की लत छुड़ा रहा है। कोई किशोर-किशोरियों को खेल के मैदानों की ओर खींच रहा है। कोई बालिकाओं को शिक्षित करने और महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सक्रिय है। इसी तरह कोई अकेले अथवा अपने संगठन के जरिये मरीजों की सहायता कर रहा है तो कोई समाज में मैत्री भाव का प्रसार कर रहा है। ऐसे काम सभी नहीं कर सकते, लेकिन जो कर रहे हैं, उनसे सीख तो अवश्य ही हर कोई ले सकता है। ■

# शिक्षा और कर्तव्य बोध

गुंजन राजपूत
उप-कुलसचिव, शिक्षाविद्
ऋषिहुड विश्वविद्यालय, हरियाणा

**समाज एवं सरकार मिलकर एक साथ एक ही दिशा में सोचें तो राष्ट्र निर्माण सरल हो जाता है। इसमें युवा पीढ़ी और नयी सोच की भूमिका सबसे महत्वूपर्ण है। विशेषकर भारत में जहां लगभग 50 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या 25 वर्ष से कम आयु की है, वहां के युवाओं में कर्तव्य बोध होना राष्ट्र की सर्वांगीण समृद्धि हेतु अपरिहार्य है।**

कर्तव्येन कर्ताभि रक्षयते"। अर्थात कर्तव्य ही कर्ता की रक्षा करता है। यदि समाज एवं सरकार मिलकर एक साथ एक ही दिशा में सोचें तो राष्ट्र निर्माण सरल हो जाता है। इसमें युवा पीढ़ी और नयी सोच से नए बदलाव की संभावनाएं प्रबल हो जाती हैं। इससे समाज प्रगतिशील बनता है। कल्पना कीजिए कि एक ऐसा राष्ट्र हो जो अपने युवा नागरिकों की जीवंत ऊर्जा से भरा हो, जो निष्क्रिय, मात्र मूकदर्शक न हों, बल्कि एक उज्ज्वल भविष्य के सक्रिय निर्माता हों। भारत में, जहां 50 प्रतिशत से अधिक आबादी 25 वर्ष से कम आयु की है और 65 प्रतिशत से अधिक 35 वर्ष से कम आयु की है, वहां युवा किसी शक्ति से कम नहीं हैं। परन्तु सबसे जरूरी है युवा स्वयं को एक नागरिक की भूमिका में रखकर अपने कर्तव्यों को समझें। नागरिक होने की जिम्मेदारी से ऊपर होता है कर्तव्य। परन्तु कर्तव्य "है" यह समझ पाने के लिए समझ होना जरूरी है। समझ आती है संस्कारों से, वातावरण से और पालन-पोषण से। कोई भी बच्चा पहले शिक्षार्थी बनता है और वहीं से नागरिक होने की समझ पाता है। वैसे तो पाठ्यक्रम में एक नागरिक के कर्तव्य एवं व्यवस्थाओं का विवरण वर्षों से है। शायद ही कोई युवा होगा जिसने नागरिक शास्त्र की शिक्षा नहीं ली होगी। पाठ्यक्रम का बोर्ड कोई भी हो परन्तु यह हर छात्र को सिखाया जाता है। लेकिन कितने छात्र इसको अपने जीवन में आत्मसात् कर पाते हैं। वह उच्च शिक्षा तक आते-आते अलग विचारधाराओं में विभाजित हो जाते हैं। इसका अर्थ है कि नागरिक सहभागिता एवं कर्त्तव्य पाठ्यपुस्तक के ज्ञान से परे हैं। स्कूल प्रणालियां अक्सर सरकारी संरचनाओं के बारे में छात्रों के आधार पर ज्ञान का परीक्षण करती हैं। इस बात पर विचार नहीं करती कि कौन सा ज्ञान, दृष्टिकोण और स्वभाव एक सक्रिय और संलग्न नागरिक जीवन का मार्गदर्शन

करने में सहायक हैं। यह समझना है कि नीतियां समुदायों को कैसे प्रभावित करती हैं? हमारी आवाज कैसे निर्णयों को आकार देती हैं और कैसे विविध दृष्टिकोण एक मजबूत सामाजिक ताने-बाने को बुनते हैं। परन्तु बदलाव लाने के लिए कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है।

**पाठ्यक्रम में बदलावः** कर्तव्यशील बनाने के लिए यह बहुत जरूरी है कि उच्च शिक्षा के द्वारा छात्रों को मात्र जॉब पाने के लिए तैयार न किया जाए। उनको सिखाया जाए कि जॉब करना जीविका चलाने से संबंधित है। परन्तु जीवन, जीविका चलाने से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि जीना समाज में ही होता है। कोई जॉब पर जाने से पहले और आने के बाद एक पूरी अर्थव्यवस्था से गुजरता है। सुबह टंकी में आने वाले पानी से लेकर, घर में सफाई वालों के भत्ते, सड़क के गड्ढे, जाम, हाईवे के टोल, रेस्टोरेंट में टैक्स, मेट्रो की टिकट और बाकी सब कार्य पूरी अर्थव्यवस्था के अंग हैं। एक समुदाय में रहना, मदद करना, बीमारी में साथ देना, त्यौहारों को मनाना एवं अन्य कार्य मनुष्य के जीवन के अहम अंग हैं। परन्तु हम विश्वविद्यलयों में केवल यह सोचते और करते हैं कि छात्र अच्छे अभियंता बनें, डॉक्टर बनें, शिक्षक बनें और समाज एवं देश में रहने के तरीके वह स्वयं सीख लेंगे। नतीजन युवा वही सीखते हैं जो उनको अपनी सहूलियत से समझ आता है। आजकल विश्वविद्यालयों के परिसरों में जहां ड्रग्स जैसी बीमारी बहुत आम है वहां यह युवा स्वयं सब सीख जाएंगे यह उम्मीद करना गलत है। फिर सवाल है कि बदलाव किस स्तर पर किया जाएं? बदलाव पढ़ाने-सीखने के स्तर पर होना जरूरी है। सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में होना चाहिए। क्योंकि युवाओं को सिखाने की जिम्मेदारी विश्वविद्यालयों पर है। पाठ्यक्रम में शिक्षा का उद्देश्य - 'स्व', समाज, देश, विश्व, धरा से अवगत कराना भी होना चाहिए। स्व अथवा स्वयं के अस्तित्व, क्षमताओं का ज्ञान। समाज के ढांचे का ज्ञान जो किसी एक अस्तित्व से शुरू होकर सबको जोड़ता है। देश एवं विश्व की समस्याओं, चुनौतियों का ज्ञान। धरा जहां स्वयं के

> **युवाओं को पहले सही रास्ते पर लाने के लिए कुछ प्रतिबद्ध नियमों से जोड़ा जाए। जिससे वो सही पथ का चयन कर पाएं, जैसे कि सैन्य सेवा। कई देशों के उदाहरण देखें तो वहां नागरिकों में कर्तव्यबोध की भावना को बढ़ावा देने के लिए सैन्य सेवा को अनिवार्य बनाया गया है। उन देशों में छात्रों या युवाओं के लिए अनिवार्य सैन्य सेवा है। जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय कर्तव्य, अनुशासन और देशभक्ति की भावना को जगाना होता है।**

अस्तित्व को बना पाएं, उसको बनाये रखने का ज्ञान। यह सभी बिन्दु किसी भी छात्र जीवन के लिए अमूल्य हैं। यह एक ऐसे युवा का निर्माण करते हैं, जो बदलते परिवेश में विचलित न हों, जो बदलाव को समझे और समझाएं।

**शोध के नतीजे** : 2005 से 2013 की अवधि में शोध एवं साहित्य को देखें तो युवाओं में नागरिक सहभागिता में बाधाओं की पांच व्यापक श्रेणियों की पहचान की गयी - संसाधन (जैसे, समय, परिवहन), ज्ञान/सूचना, भागीदारी (जैसे, वयस्क, सहकर्मी, संगठन), सामाजिक-भावनात्मक कारक (जैसे, आत्म-प्रभावकारिता, अपनेपन की भावना) और अवसर। इन जैसी बाधाओं को दूर करने के लिए, कैमिनो और जेल्डिन (2002) ने युवाओं में नागरिक सह -भागिता के तीन महत्वपूर्ण गुणों का सुझाव दिया है- स्वामित्व, युवा-वयस्क भागीदारी और सुविधाजनक नीतियां और संरचनाएं। परन्तु यहां भी बहुत सावधानी की आवश्यकता है जैसे की अभी तक होने वाले शोध एवं कक्षाओं का ज्ञान एक ही विचारधारा से प्रभावित है और सिर्फ उकसाने की प्रवृत्ति को दर्शाता है। जैसे की वेस्टहाइमर (2017) ने अपने एक शोध में पूछा; हमारे लोकतंत्र को किस प्रकार के नागरिक की आवश्यकता है? इसलिए हमें अच्छी तरह से सूचित युवाओं की आवश्यकता है जो कठिन प्रश्न पूछ सकें, विविध दृष्टिकोणों का मनोरंजन कर सकें और एक मजबूत लोकतांत्रिक जीवन से जुड़े ज्ञान, क्षमताओं और स्वभाव को प्राप्त कर सकें।

राष्ट्रीय मादक द्रव्य निर्भरता उपचार केंद्र के आंकड़ों के अनुसार नशीली दवाओं की लत वाले 10 में से नौ लोग 18 साल की उम्र से पहले ही मादक द्रव्यों का सेवन शुरू कर देते हैं। इससे स्थायी शारीरिक, मानसिक और स्वास्थ्य समस्याएं जन्म लेती हैं। जिससे समाज में अनेक गंभीर विकार समाज के लिए घातक सिद्ध होते हैं। ऐसे में सर्वप्रथम युवाओं को सही रास्ते पर लाने के लिए कुछ प्रतिबद्ध नियमों से जोड़ा जाए, जिससे वो सही पथ का चयन कर पाएं। जैसे कि सैन्य सेवा, कई देशों के उदाहरण देखें तो वहां नागरिकों में कर्तव्यबोध को बढ़ावा देने के लिए अनिवार्य सैन्य सेवा को माध्यम बनाया गया है। उन देशों में छात्रों या युवा नागरिकों के लिए सैन्य सेवा अनिवार्य है। जिसका उद्देश्य अक्सर राष्ट्रीय कर्तव्य, अनुशासन और देशभक्ति की भावना को बढ़ावा देना होता है। दक्षिण कोरिया, इजरायल, सिंगापुर, स्विट्जरलैंड, फिनलैंड और ग्रीस आदि देशों में युवाओं को सेवा, देशभक्ति की भावना जगाने और नागरिकों को राष्ट्रीय रक्षा के लिए तैयार करने के लिए यह एक व्यापक प्रयास का हिस्सा है। इस तरह के मॉडल अगर सम्पूर्ण रूप से न भी आएं तो इनके अच्छे अनुभवों से सीख लेकर उच्च स्तरीय पाठ्यक्रमों में इन्हें एक अहम अंग बनाया जा सकता है।

अंततः यह याद रखना होगा कि किसी शहर की कहानी मात्र उसके स्मारकों से नहीं लिखी जाएगी, बल्कि उसके लोगों की भावनाएं उन स्मारकों को जीवंत बनाएंगी। जब स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा कि गीता पढ़ने से महत्वपूर्ण हैं फुटबॉल खेलना तो उसका अर्थ युवाओं को पहले सक्षम बनाने से था। क्योंकि स्वस्थ तन ही स्वस्थ मन बनाता है और तब ही अर्थ भी समझ आ सकते हैं और अंततः कर्तव्य भी।

# मतदान : अधिकार और कर्तव्य

सतीश शर्मा
केशव भाग संघचालक
राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, नोएडा

**प्रत्येक मतदाता का कर्तव्य है कि वह लोकतंत्र की मजबूती के लिए मतदान करे। क्योंकि मतदान के जरिए ही राष्ट्र की समृद्धि और अपने देश की संस्कृति को सर्वोपरि बनाया जा सकता है। इसलिए देश के हर उस व्यक्ति को जिसे भी मतदान का अधिकार मिला है उसे लोकतंत्र के महान पर्व में जरूर हिस्सा लेना चाहिए। क्योंकि लोकतांत्रिक प्रणाली के तहत जितने भी अधिकार देश के नागरिकों को मिले हैं उनमें सबसे बड़ा अधिकार मतदान का है।**

मतदान हमारा अधिकार भी है और कर्तव्य भी, यह एक संवैधानिक अधिकार है। भारतीय संविधान के अनुसार देश के नागरिकों को अपने प्रतिनिधि निर्वाचित करने का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 326 के द्वारा मिला है। लोकतंत्र का अर्थ ही है जनता की, जनता के द्वारा, जनता के लिए। इसलिए मतदान का लोकतंत्र में बहुत महत्व होता है। भारतीय संविधान के अनुसार, 18 वर्ष से अधिक आयु के सभी भारतीय नागरिक जिन्होंने खुद को मतदाता के रूप में पंजीकृत किया है, वे मतदान करने के योग्य हैं। मतदाता सूची में पंजीकृत नागरिक राष्ट्रीय, राज्य, जिला और स्थानीय सरकारी चुनावों में मतदान कर सकते हैं। मतदाता केवल उसी निर्वाचन क्षेत्र में मतदान कर सकता है जहां उसने खुद को पंजीकृत किया है। मतदाताओं को उस निर्वाचन क्षेत्र में खुद को पंजीकृत करना होता है जहां वे रहते हैं, जिसके बाद उन्हें फोटो चुनाव पहचान पत्र जारी किया जाता है। यदि किसी व्यक्ति ने मतदाता सूची में नाम नहीं लिखवाया है तो उसे चुनावी प्रक्रिया में भाग लेने की अनुमति नहीं है। ये हमारा कर्तव्य है कि हम अपना नाम मतदाता सूची में लिखवाएं और समय-समय पर मतदाता सूची का अवलोकन कर ये सुनिश्चित करें कि हमारा नाम सूची में है।

भारतीय संविधान में मतदाताओं के कुछ अधिकार भी हैं। सभी नागरिकों को चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों के बारे में जानने का अधिकार है। यह अधिकार भारतीय संविधान की धारा 19 के तहत

मतदाताओं को दिया गया है। यह धारा मतदाताओं को उम्मीदवारों के चुनाव घोषणापत्र, उनकी कुल वित्तीय संपत्ति और उनके आपराधिक रिकॉर्ड (यदि कोई हो तो) से संबंधित जानकारी मांगने का अधिकार देती है। मतदाताओं को अपना मत न देने का अधिकार भी दिया गया है, जिसे सिस्टम में दर्ज किया जाता है। इसे NOTA (इनमें से कोई नहीं) वोट के रूप में भी जाना जाता है। मतदाता चुनाव में भाग लेता है लेकिन चुनाव लड़ रहे किसी भी उम्मीदवार को अपना मत नहीं देने का विकल्प चुनता है। इस प्रकार, मतदाता चुनावी प्रक्रिया में भाग ले रहे हैं और यह चुनने के अपने अधिकार का प्रयोग कर रहे हैं। जो मतदाता शारीरिक विकलांगता या अन्य दुर्बलता के कारण मतदान में असमर्थ हैं तथा डाक मतपत्र के माध्यम से अपना मत नहीं डाल सकते, वे निर्वाचन अधिकारी की सहायता ले सकते हैं, जो उनका मत दर्ज करेगा। सीमा पर नियुक्त या ऐसे कर्मचारी जिनकी चुनाव आयोग द्वारा उनकी सेवा मतदान वाले दिन चुनाव केंद्रों पर है वह सब डाक मतपत्र द्वारा मतदान कर सकते हैं। पहले एनआरआई (अनिवासी भारतीय) को मतदान की अनुमति नहीं थी। हालांकि 2010 में एक संशोधन किया गया था जो एनआरआई को मतदाता के रूप में खुद को पंजीकृत करने और चुनावों में मतदान करने की अनुमति देता है, भले ही वे किसी भी कारण से 6 महीने से अधिक समय तक देश में न रहे हों। लेकिन किसी अन्य देश की नागरिकता न ली हो। वर्तमान कानून के अनुसार कैदियों को अपने मताधिकार का प्रयोग करने की अनुमति नहीं है।

मतदान का बहुत महत्व है। विश्व में ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जब मात्र एक मत से सरकार नहीं बनी। एआईएडीएमके के समर्थन वापस लेने के बाद वाजपेयी सरकार को विश्वास प्रस्ताव रखना पड़ा। विश्वास प्रस्ताव के पक्ष में 269 और विरोध में 270 मत पड़े और अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार चली गई। राजस्थान विधानसभा के चुनाव में सीपी जोशी को 62,215 व कल्याण सिंह को 62,216 वोट मिले। जोशी मुख्यमंत्री पद के प्रमुख उम्मीदवार थे। गौर करने की बात है कि उनकी माँ, पत्नी व ड्राइवर ने मत नहीं डाला था। कर्नाटक विधानसभा चुनाव में जेडीएस पार्टी के एआर कृष्णमूर्ति को 40,751 मत मिले और कांग्रेस के आर ध्रुवनारायण को 40,752 मत मिले। ए आर कृष्णमूर्ति के ड्राइवर को छुट्टी न मिलने के कारण वह मतदान नहीं कर सका। साल 1885 में फ्रांस की राजशाही एक मत कम होने से खत्म हुई और लोकतंत्र का आगाज हुआ। अमेरिका को 1776 में एक मत के कारण जर्मन की जगह अंग्रेजी मातृभाषा मिली थी। अमेरिकी राष्ट्रपति पद के लिए हुए 1876 के चुनाव में रदरफोर्ड बी हायेस ने 185 मत हासिल किए थे और सैमुअल टिल्डेन को 184 मत मिले थे। एक और उद्धरण है कि एक मत से 1910 में रिपब्लिकन उम्मीदवार हार गया था। जर्मनी के लोग जानते हैं कि क्या होती है एक मत की ताकत? 1923 में एडोल्फ हिटलर एक मत से जीत कर नाजी दल का मुखिया बन गया था।

**साल 1885 में फ्रांस की राजशाही एक मत कम होने से खत्म हुई और लोकतंत्र का आगाज हुआ। अमेरिका को 1776 में एक मत के कारण जर्मन की जगह अंग्रेजी के रूप में उनको मातृभाषा मिली थी। अमेरिकी राष्ट्रपति पद के लिए हुए 1876 के चुनाव में रदरफोर्ड बी हायेस ने 185 मत हासिल किए थे और सैमुअल टिल्डेन को 184 मत मिले थे।**

आपके एक मत में महत्वपूर्ण बदलाव लाने की क्षमता है। आप बेहतर सरकार के लिए वोट कर सकते हैं। अगर आप मतदान नहीं करते हैं, तो वही पार्टी अगले पांच साल तक सत्ता में रहेगी जिसको आप बदलना चाहते हैं। अंत में, अगर देश में शासन ठीक से काम नहीं कर रहा तो यह लोगों की गलती है कि उन्होंने गलत तरीके से मतदान किया या बिल्कुल भी मत नहीं दिया। प्रत्येक मत का महत्व है और वो बदलाव ला सकता है। जब अधिकांश लोगों का मत यह हो जाये कि 'मेरे एक मत से कोई फर्क नहीं पड़ता' तो मतदान प्रतिशत कम होता है। इसलिए इस सोच को बदलना पड़ेगा। इस हेतु चुनाव आयोग भी विभिन्न समय पर मतदाताओं को जागरूक करने के लिए अनेक कार्यक्रम करता है। देश को विकास की ओर ले जाने वाली सरकार बने ये जिम्मेदारी हम सबकी है। अरस्तू ने कहा था कि जैसे राजतन्त्र तानाशाही में बदल जाता है वैसे ही लोकतंत्र भीड़तंत्र में बदल जाता है। लोकतंत्र भीड़तंत्र में न बदले ये हम सभी का कर्तव्य है। इसलिए मतदान करें और मतदान करने के लिए प्रेरित करें। ■

# नागरिक और डिजिटल सुरक्षा की चुनौतियां

**अनुज अग्रवाल**
**चेयरमैन, सेंटर फॉर रिसर्च ऑन साइबर क्राइम एण्ड साइबर लॉ**


**नागरिक कर्तव्य, सरकार और आम जन के बीच वो अदृश्य धागा है जो मजबूत हो तो निगरानी और प्रतिबंधों के बिना भी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और टेक्नोलॉजी से जुड़ी अनेक समस्याएं स्वत: ही समाप्त हो जाती हैं। यानी नैतिक दायित्व अवांछित गतिविधियों पर रोक लगाने के लिए सबसे ताकतवर कानून की तरह है और जवाबदेह भी।**

आज टेक्नोलॉजी के दौर में यदि साइबर सुरक्षा के लिए सबसे कठिन चुनौती की बात करें तो यह पूरे समाज और सत्ता दोनों के लिए चुनौती बन रही है। इसका सबसे बड़ा कारण है समाज के अंदर होने वाली गिरावट और लोगों का जागरूक न होना। क्योंकि अनजान लोग फोन करके कोई लालच या कोई धमकी देते हैं तो उस पर तुरंत भोले-भाले लोग विश्वास कर लेते हैं। उन्हें और उनके निर्देश को फॉलो करते हैं और उसी से होती है साइबर क्राइम की शुरुआत। यदि हम अनजान लोगों की बातों को न मानें और लालच या उनकी धमकियों में न फंसे तो साइबर क्राइम अपने आप ही बहुत कम हो जाएगा। इसलिए लोगों को समझाना और उन्हें जागरूक करना यह सरकार और समाज दोनों के लिए चुनौती है। हालांकि इस दिशा में प्रयास हो रहे हैं। तरह-तरह के कम्युनिकेशन के जरिये जैसे ईमेल, वीडियो, अखबार, विज्ञापन, नीतियों आदि के जरिये ये सब किया जा रहा है, लेकिन चुनौती अभी भी बनी हुई है। ऐसा इसलिए है क्योंकि आज भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा बाजार है। ऐसे में हर चीज ऑनलाइन होने से गोपनीयता की सुरक्षा करना काफी मुश्किल हो गया है।

सबसे पहले ये समझना जरूरी है कि गोपनीयता क्या है? गोपनीय वह चीज होती है जिसे व्यक्ति स्वयं किसी को बताना नहीं चाहता। जबकि अब तो सब कुछ दूसरों को बताना पड़ता है तो फिर उसका गोपनीय रह पाना बड़ा मुश्किल होता है। वर्तमान में स्थिति यह है कि जो देश में गोपनीयता से संबंधित जो कानून है, वह उतना प्रभावी नहीं है। भारत में डिजिटल डाटा प्रोटेक्शन कानून जो बना था 2023 में, लेकिन अभी तक लागू नहीं हुआ। उच्चतम न्यायालय ने 2018 में उसको बनाने के आदेश दिये थे। ऐसे में गोपनीयता की सुरक्षा की उम्मीद के लिए अभी समय का इंतजार है। इन सब चीजों को देखते हुए साइबर सुरक्षा तो पहले से ही कमजोर है और इसमें सबसे बड़ी बात है सरकारी तंत्र की सक्रियता में कमी। अगर कोई शिकायत की जाती हो तो उस पर प्रभावी कार्रवाई नहीं होती है। किसी किसी केस में लंबे समय के बाद छोटे मोटे फाइन लगाये जाते हैं। इसलिए साइबर फ्रॉड करने

वालों के मन में वो डर नहीं है जो होना चाहिए। लोगों को रामराज्य और भगवान कृष्ण के द्वारा दिए गए दंड आज भी याद हैं। श्रीकृष्ण ने भी शिशुपाल को सौ गालियों तक माफ किया, लेकिन 100 के बाद उन्होंने शिशुपाल की गर्दन सुदर्शन चक्र से काट दी। इसी तरह प्रभु राम ने भी रावण को दंड दिया जिससे लोग कांप गए। वहीं आज प्रभावी दंड प्रक्रिया नहीं है।

चूंकि आज हर चीज क्लाउड बेस है। इसलिए वेबसाइट या पोर्टल हर जगह हाईजैक कर डाटा चोरी की बात आम हो गई है। ऐसे में जब सरकारी संस्थानों में सेंध लग रही हो, तो आम जनता का चिंतित होना स्वाभाविक है। इसलिए जनता को यह जानना आवश्यक है कि उसे कहां और किसको, कितना डाटा देना है। लेकिन विडंबना ये है कि ऐसी संवेदनशील जानकारी जनता को मालूम ही नहीं है जैसे कि आधार कार्ड कहां देना है और कहां नहीं। कानूनी रूप से बात करें तो बैंक और टेलीकॉम कंपनी वाले आधार कार्ड मांग सकते हैं, लेकिन आज पोर्टल वाले, खोमचे वाले, होटल वाले सभी आईडी के नाम पर आपसे आधार कार्ड की मांग करते हैं जो कि सरासर गलत है। यदि आपको आईडी कार्ड दिखाना है तो सबसे सुरक्षित आईडी कार्ड आपका वोटर कार्ड है उसी को देना चाहिए। यहां तक पैन कार्ड भी किसी को नहीं देना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि लोगों के पास अभी पर्याप्त जानकारियां नहीं हैं। जबकि सरकार विभिन्न माध्यमों के जरिये लोगों को मुफ्त जानकारी दे रही है। यदि इस पूरी प्रक्रिया में साइबर सुरक्षा के प्रति नागरिकों में कर्तव्य बोध की भावना बढ़ जाए तो लोग एक दूसरे के लिए स्वतः ही जागरूक हो जाएंगे और फ्रॉड की घटनाओं में कमी आनी शुरू हो जाएगी।

साइबर सुरक्षा एक निजी मामला है। इसलिए इसमें एक दूसरे के प्रति विशेष कर्तव्य निभाने का दायरा बेहद सीमित है। इस तरह व्यक्ति को साइबर धोखाधड़ी से बचने के लिए स्वयं ही जागरूक होना पड़ेगा। क्योंकि साइबर सिक्योरिटी में सेंधमारी बेहद कम समय में होती है। ऐसे में आप अपने स्तर से ही स्वयं को बचा सकते हैं। यदि मान लीजिए कोई किसी के बहकावे में आकर ओटीपी बता रहा है तो आप निजी स्तर पर उसे कैसे रोकेंगे? ट्रांजेक्शन से पहले न वह आपसे बताएगा और न आप उसका सहयोग कर सकते हैं। इसलिए यह एकदम निजी मामला है। वैसे भी कोई व्यक्ति अपने द्वारा किए जा रहे ट्रांजेक्शन को किसी दूसरे को बताने के लिए बाध्य भी नहीं है। वह ट्रांजेक्शन कर रहा है, किसी को अपना डाटा दे रहा है, कोई होटल में जाकर रुका है, कोई एयरलाइन से टिकट ले रहा है। यह किसी भी प्रकार से सामाजिक कार्य में नहीं आता है। यह पूर्णतः निजी और गोपनीय कार्य है। इसलिए समाज का इसमें एक दूसरे के प्रति कर्तव्य की जवाबदेही का स्थान बेहद कम है।

साइबर से जुड़ी चुनौती यह है कि आज दुनिया तेजी से दौड़ रही है। वह डिजिटल ट्रांजैक्शन, डिजिटल खरीद कर रही है। एक उदाहरण से समझें तो पहले आपको सौ रुपये निकालने के लिए भी फॉर्म भरना पड़ता था। बैंक में जांच के बाद आपको रुपये मिलते थे। वहीं आज एक सेकेंड में लाखों रुपये एक क्लिक से ट्रांसफर हो जाते हैं। इसलिए टेक्नोलॉजी ने सुविधा के साथ ही चुनौतियों का अंबार भी दे दिया है। मैं लोगों से यही कहना चाहूंगा कि यह जागरुकता का विषय है। आपको दिखावे से बचना होगा। जैसे बहुत सारे लोगों को न कभी विदेश जाना है और न गए हैं। फिर भी इंटरनेशनल डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड ले लेते हैं। इस डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड से विदेशों से ठगी होने की संभावना बढ़ जाती है।

इस तरह साइबर फ्रॉड की चुनौतियों से बचने के लिए दो-तीन उपाय बेहद कारगर सिद्ध हो सकते हैं। यदि आपसे कोई दबाव डालकर या लालच देकर ट्रांजैक्शन के लिए कहता है तो ओटीपी को बिल्कुल शेयर नहीं करना चाहिए। वह आपके साइबर खजाने की चाबी है। इसलिए किसी भी स्थिति में आपको इससे बचना होगा। इसी तरह अनजान लिंक को क्लिक न करें। साथ ही कुछ खतरनाक वेबसाइट के जरिये फाइनेंशियल ट्रांजेक्शन कभी न करें। अगर इन छोटी-छोटी बातों का अनुसरण करें तो साइबर क्राइम में फंसने की संभावना अपने आप ही 90 प्रतिशत कम हो जाएगी। ■

**कोई दबाव डालकर या लालच देकर ट्रांजैक्शन के लिए कहता है तो ओटीपी को बिल्कुल शेयर नहीं करना चाहिए। वह आपके साइबर खजाने की चाबी है। इसलिए किसी भी स्थिति में आपको इससे बचना होगा। इसी तरह अनजान लिंक को क्लिक न करें। साथ ही कुछ खतरनाक वेबसाइट के जरिये फाइनेंशियल ट्रांजैक्शन कभी न करें। अगर इन छोटी-छोटी बातों का अनुसरण करें तो साइबर क्राइम में फंसने की संभावना अपने आप ही 90 प्रतिशत कम हो जाएगी।**

# जलवायु परिवर्तन : मानव अस्तित्व पर गंभीर संकट

डॉ. अनिल कुमार निगम
वरिष्ठ पत्रकार

**पर्यावरण का जो भी संकट आज दिख रहा है, उसके प्रति सबसे ज्यादा जवाबदेही विकास की उस अवधारणा की है, जिसके मुताबिक प्रकृति एक भोग्या सामग्री से ज्यादा कुछ नहीं है। मानव चाहता है कि उसे प्रकृति से सब कुछ मुफ्त में अनंत काल तक प्राप्त होता रहे और वह मनमाने तरीके से प्रकृति का दोहन और दुरुपयोग करता रहे। लेकिन वह अपनी भावी पीढ़ियों के लिए भी प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की कोई जिम्मेदारी नहीं लेना चाहता है।**

भारतीय दर्शन में 'विश्वस्वम् मातरमोषधीनाम्' यानि पृथ्वी को साक्षात् माता कहा गया है। अथर्ववेद के भूमि सूक्त में मनुष्य और प्रकृति के नैतिक साहचर्य का अत्यंत सुंदर तरीके से वर्णन किया गया है।

**'सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यक्षः**
**पृथ्वी धारयन्ति।**
**सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्नयुः**
**लोकं पृथ्वी कृणोतु'।।**

कहने का आशय है कि यही समय है कि हम प्रकृति के प्रति भौतिकवादी और भोगवादी नजरिए को छोड़कर नैतिकवादी रवैये को अपनायें। प्रकृति के साथ हमारा सहोदर भाव, सहअस्तित्व और सौमनस्यता का रिश्ता कमजोर होना जलवायु परिवर्तन की मुख्य वजह माना जा रहा है। औद्योगिक विकास के गलाकाट आधुनिक युग में प्रकृति के बेरहम दोहन की प्रवृत्ति ने आज ऐसी परिस्थितियां कर दी हैं कि जल, जंगल, जमीन, वायु, अंतरिक्ष, आकाश, जन और जानवर के सामने अस्तित्व का गंभीर संकट पैदा हो गया है।

मौसम की बेरुखी, वायुमंडल में बढ़ता तापमान और मौसम के बदलते स्वभाव की वजह से कहीं अतिवृष्टि, तो कहीं अनावृष्टि, कहीं बाढ़, तो कहीं सूखा के रूप में हमारे सामने विकट परिस्थितियां पैदा हो गयी हैं। भारत ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में जलवायु परिवर्तन का विषय चिंता और चिंतन का है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि वर्तमान में जलवायु परिवर्तन वैश्विक समाज के समक्ष मौजूद सबसे बड़ी चुनौती है। इस गंभीर समस्या से निपटना वर्तमान समय की सबसे बड़ी मांग है। आंकड़ों के अनुसार,19वीं सदी के अंत से अब तक पृथ्वी की सतह का औसत तापमान लगभग 1.62 डिग्री फॉरेनहाइट अर्थात् लगभग 0.9 डिग्री

सेल्सियस बढ़ चुका है। इसके अलावा पिछले सौ वर्षों में समुद्र के जल स्तर में भी लगभग 8 इंच की बढ़ोतरी दर्ज की गई है।

भारत के संदर्भ में देखें, तो 1971 में सबसे ज्यादा तापमान 44.9 डिग्री सेल्सियस दर्ज किया गया था, जो 2024 में बढ़कर 52 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा हो गया है। यानी 53 वर्षों में तापमान में आठ डिग्री सेल्सियस तापमान की वृद्धि हो चुकी है। बढ़ते तापमान से जलवायु परिवर्तन के कारण मौसमी घटनाओं में तो वृद्धि होती ही है, इससे जैव-विविधता को भी भारी नुकसान पहुंच रहा है। पर्यावरण का जो भी संकट आज दिख रहा है, उसके प्रति सबसे ज्यादा जवाबदेही विकास की उस अवधारणा की है, जिसके मुताबिक प्रकृति एक भोग्या सामग्री से ज्यादा कुछ नहीं है। मानव चाहता है कि उसे प्रकृति से सब कुछ मुफ्त में अनंत काल तक प्राप्त होता रहे और वह मनमाने तरीके से प्रकृति का शोषण-दोहन-दुरुपयोग करता रहे। लेकिन वह अपनी भावी पीढ़ियों के लिए भी प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की कोई जिम्मेदारी नहीं लेना चाहता है।

मानव गतिविधियों के चलते हमारी धरती अनेक प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रही है। असंतुलित विकास और प्रकृति के अंधाधुंध दोहन से पृथ्वी का संकट गहरा रहा है। यही कारण है कि आए दिन किसी न किसी हिस्से में प्राकृतिक तबाही होती रहती है। जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणाम वर्ष भर नये-नये रूप में प्रकट हो रहे हैं। महासागर हों या पहाड़, नदियां हों या खेती की जमीन सब जगह प्रकृति कराह रही है। अनेक देशों में पहाड़ी क्षेत्रों के जलाशय सूख रहे हैं और वन क्षेत्र सिकुड़ रहे हैं। इसी कारण आए दिन जब जंगली जानवर अपनी प्यास बुझाने बाहर आते हैं तो मानव के साथ उनका संघर्ष होता है। उत्तर प्रदेश के बहराइच में भेड़ियों के आदमखोर बनने का मामला इसका जीवंत उदाहरण है।

तापमान में वृद्धि और वनस्पति पैटर्न में बदलाव ने कुछ पक्षी प्रजातियों को विलुप्त होने के लिए मजबूर कर दिया है। विशेषज्ञों के अनुसार, पृथ्वी की एक-चौथाई प्रजातियां वर्ष 2050 तक विलुप्त हो सकती हैं। वर्ष 2008 में ध्रुवीय भालू को उन जानवरों की सूची में जोड़ा गया था जो समुद्र के स्तर में वृद्धि के कारण विलुप्त हो सकते थे। जंगलों में घटती नमी और अत्यधिक तापमान के कारण जंगलों में आग लगने के मामले बढ़ रहे हैं। बरसाती नदियां सूख रही हैं तो बड़ी नदियों में पानी की मात्रा लगातार घट रही है। खेती वाली जमीन में कार्बन तत्व लगातार घट रहा है। इससे अन्न उत्पादन पर भी असर पड़ा है। इससे एक ही देश के अलग-अलग हिस्से सूखे और बाढ़ की चपेट में आ रहे हैं।

**तापमान में वृद्धि और वनस्पति पैटर्न में बदलाव ने कुछ पक्षी प्रजातियों को विलुप्त होने के लिए मजबूर कर दिया है। विशेषज्ञों के अनुसार, पृथ्वी की एक-चौथाई प्रजातियां वर्ष 2050 तक विलुप्त हो सकती हैं। वर्ष 2008 में ध्रुवीय भालू को उन जानवरों की सूची में जोड़ा गया था जो समुद्र के स्तर में वृद्धि के कारण विलुप्त हो सकते थे। जंगलों में घटती नमी और अत्यधिक तापमान के कारण जंगलों में आग लगने के मामले बढ़ रहे हैं। बरसाती नदियां सूख रही हैं तो बड़ी नदियों में पानी की मात्रा लगातार घट रही है। खेती वाली जमीन में कार्बन तत्व लगातार घट रहा है। इससे अन्न उत्पादन पर भी असर पड़ा है। इससे एक ही देश के अलग-अलग हिस्से सूखे और बाढ़ की चपेट में आ रहे हैं।**

पिछले कुछ दशकों में बाढ़, सूखा और बारिश आदि की अनियमितता काफी बढ़ गई है। यह सभी जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप ही हो रहा है। कुछ स्थानों पर बहुत अधिक वर्षा हो रही है, जबकि कुछ स्थानों पर पानी की कमी से सूखे की संभावना बन गई है। वैश्विक स्तर पर ग्लोबल वार्मिंग के चलते ग्लेशियर पिघल रहे हैं जिसके कारण समुद्र का जल स्तर ऊपर उठता है इससे समुद्र के आस-पास के द्वीपों के डूबने का खतरा भी बढ़ गया है। मालदीव जैसे छोटे द्वीपीय देशों में रहने वाले लोग पहले से ही वैकल्पिक स्थलों की तलाश में हैं।

जानकारों ने अनुमान लगाया है कि भविष्य में जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप मलेरिया और डेंगू जैसी बीमारियां और अधिक बढ़ेंगी तथा इन्हें नियंत्रित करना मुश्किल होगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन के आंकड़ों के अनुसार, पिछले दशक से अब तक हीट वेव्स के कारण लगभग 150,000 से अधिक लोगों की मृत्यु हो चुकी है। वातावरण में ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन कम कर देना जलवायु परिवर्तन का स्थायी हल नहीं है, और न ही इसका स्थायी समाधान किसी सरकार व टेक्नोलॉजी के पास है। इसका स्थायी समाधान सिर्फ किसानों के पास है, क्योंकि किसान ही हैं, जिनका सीधा संबंध मिट्टी से होने के कारण, जैव-विविधता, जल, पशु-पक्षी आदि से भी सम्बंध होता है।

इस ग्लोबल वार्मिंग को रोकने के लिए दुनिया भर के नीति निर्माताओं को ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी पर भी विशेष ध्यान देना होगा। इसके लिए जरूरी है कि कॉप-28 में जो निर्णय लिए गए, उनका बेहतर ढंग से पालन किया जाए। हमें प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन पर रोक लगानी होगी। इसके अलावा, 'सह-अस्तित्व' के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए पूरे विश्व में पर्यावरणीय नियम-कानून लागू किए जाने चाहिए। ■

# मीडिया भी सोचे पानी के सवाल पर

**मीडिया का काम है लोकमंगल के लिए सतत् सक्रिय रहना। पानी का सवाल भी एक ऐसा संवेदनशील मुद्दा बन गया है जिस पर समाज, सरकार और मीडिया तीनों की सामूहिक सक्रियता जरूरी है।**

**प्रो. संजय द्विवेदी**
जनसंचार विभाग
माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता
एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल

**रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।**
**पानी गए न ऊबरे, मोती, मानुष, चून।।**

प्रकृति के साथ निरंतर छेड़छाड़ ने मनुष्यता को कई गंभीर खतरों के सामने खड़ा कर दिया है। देश की नदियां, ताल-तलैये, कुएं सब हमसे सवाल पूछ रहे हैं। हमारे ठूंठ होते गांव और जंगल हमारे सामने एक प्रश्न बनकर खड़े हैं। पर्यावरण के विनाश में लगी व्यवस्था और उद्योग हमें मुंह चिढ़ा रहे हैं। इस भयानक शोषण के फलित भी सामने आने लगे हैं। मानवता एक गंभीर संकट को महसूस कर रही है और कहा जाने लगा है कि अगला विश्व युद्ध पानी के लिए होगा। पंद्रह से बीस रुपये में पानी खरीद रहे हम, क्या कभी अपने आप से ये सवाल पूछते हैं कि आखिर हमारा पानी इतना महंगा क्यों है? जब हमारे शहर का नगर निगम जलकर में थोड़ी बढ़त करता है तो हम आंदोलित हो जाते हैं, राजनीतिक दल सड़क पर आ जाते हैं। लेकिन पंद्रह रुपये में एक लीटर पानी की खरीदारी हमारे मन में कोई सवाल खड़ा नहीं करती। आज भारत बोतलबंद पानी की खपत के मामले में दुनिया के दस शीर्ष देशों में शामिल है। लेकिन ये पानी क्या हमारी आम जनता की पहुंच में है? यह दुर्भाग्य है कि हमारे गांवों में मल्टीनेशनल कंपनियों के पेय पदार्थ पहुंच गए किंतु आजतक हम आम लोगों को पीने का पानी सुलभ नहीं करा पाए। उस आदमी की स्थिति का अंदाजा लगाइए जो इन महंगी बोतलों में बंद पानी तक नहीं पहुंच सकता।

पानी की चिंता आज सब प्रकार से मानवता की सेवा में सबसे बड़ा काम है। आंकड़े चौंकाने वाले हैं किंतु ये खतरे की गंभीरता का एहसास भी कराते हैं। देश के कई राज्यों के लोग आज भी दूषित जल पीने को मजबूर हैं। पानी को लेकर सरकार, समाज और मीडिया तीनों को सक्रिय होने की जरूरत है। स्वाधीनता के इतने सालों के बाद पानी का सवाल यदि आज और गंभीर होकर हमारे सामने है तो हमें सोचना होगा कि आखिर हम किस दिशा की ओर जा रहे हैं। पानी की सीमित उपलब्धता को लेकर हमें सोचना होगा कि आखिर हम अपने समाज के सामने इस चुनौती का क्या समाधान रखने जा रहे हैं।

**मीडिया की जिम्मेदारी :** मीडिया का जैसा विस्तार हुआ है उसे देखते हुए उसके सर्वव्यापी प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता। मीडिया सरकार, प्रशासन और जनता सबके बीच एक ऐसा प्रभावी माध्यम है जो ऐसे मुद्दों पर अपनी खास दृष्टि को संप्रेषित कर सकता है। कुछ मीडिया समूहों ने पानी के सवाल पर जनता को जगाने का काम किया है। वह

चेतना के स्तर पर भी है और कार्य के स्तर पर भी। ये पात्र समूह अब जनता को जगाने के साथ उनके घरों में वाटर हार्वेस्टिंग सिस्टम लगाने तक में मदद कर रहे हैं। इसी तरह भोपाल की सूखती झील की चिंता को जिस तरह भोपाल के अखबारों ने मुद्दा बनाया और लोगों को अभियान में शामिल किया उसकी सराहना की जानी चाहिए। इसी तरह हाल में नर्मदा को लेकर स्व.अमृतलाल वेगड़ से लेकर स्व. अनिल दवे तक के प्रयासों को इसी नजर से देखा जाना चाहिए। अपनी नदियों, तालाबों झीलों के प्रति जनता के मन में सम्मान की स्थापना एक बड़ा काम है जो बिना मीडिया के सहयोग से नहीं हो सकता। जलपुरुष राजेंद्र सिंह जैसे लोग भी हमारे समाज में अलख जगा रहे हैं। पानी को लेकर अनेक सामाजिक संगठन बहुत अच्छा काम कर रहे हैं।

उत्तर भारत की गंगा-यमुना जैसी पवित्र नदियों को भी समाज और उद्योग की बेरुखी ने काफी हद तक नुकसान पहुंचाया है। दिल्ली में यमुना जैसी नदी किस तरह एक गंदे नाले में बदल गयी तो लखनऊ की गोमती का क्या हाल है किसी से छिपा नहीं है। देश की नदियों का जल और उसकी चिंता हमें ही करनी होगी। मीडिया ने इस बड़ी चुनौती को समय रहते समझा है, यह बड़ी बात है। उम्मीद की जानी चाहिए कि इस सवाल को मीडिया के नियंता अपनी प्राथमिक चिंताओं में शामिल करेंगें। ये कुछ बिंदु हैं जिन पर मीडिया निरंतर अभियान चलाकर पानी को बचाने में मददगार हो सकता है -

1.पानी का राष्ट्रीयकरण किया जाए और इसके लिए एक अभियान चलाया जाए।

2.छत्तीसगढ़ की शिवनाथ नदी को एक पूंजीपति को बेचकर जो शुरुआत हुयी थी, उसे दृष्टिगत रखते हुए नदी बेचने की प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाए।

3. उद्योगों के द्वारा निकला कचरा हमारी नदियों के साथ पर्यावरण को भी नष्ट कर रहा है। उद्योग प्रायः प्रदूषण रोधी संयंत्रों की स्थापना तो करते हैं पर बिजली बिल के नाते उसका संचालन नहीं करते। उद्योगों की हैसियत के मुताबिक प्रत्येक उद्योग का प्रदूषण रोधी संयंत्र का मीटर अलग हो और उसका न्यूनतम बिल तय किया जाए। ताकि इसे चलाना उद्योगों की मजबूरी बन जाएगा।

4. केंद्र सरकार द्वारा नदियों को जोड़ने की योजना को तेज किया जाना चाहिए।

5. बोतल बंद पानी के उद्योग को हतोत्साहित किया जाना चाहिए।

6. सार्वजनिक पेयजल व्यवस्था को दुरुस्त करने के सचेतन और निरंतर प्रयास किए जाने चाहिए।

7. गांवों में स्वजलधारा जैसी योजनाओं को तेजी से प्रचारित करना चाहिए।

8. परंपरागत जल स्रोतों का संरक्षण किया जाना चाहिए।

9. आम जनता में जल के संयमित उपयोग को लेकर लगातार जागरूकता अभियान चलाए जाने चाहिए।

10. सार्वजनिक नलों से पानी के दुरुपयोग को रोकने के लिए मोहल्ला समितियां बनाई जा सकती हैं। जिनकी सकारात्मक पहल को मीडिया रेखांकित कर सकता है।

11.बचपन से पानी के महत्व और उसके संयमित उपयोग की शिक्षा नई पीढ़ी को देने के लिए मीडिया बच्चों के लिए निकाले जा रहे अपने साप्ताहिक परिशिष्टों में इन मुद्दों पर बात कर सकता है। साथ ही स्कूलों में पानी के महत्व पर आयोजन करके नई पीढ़ी में संस्कार डाले जा सकते हैं।

12. वाटर हार्वेस्टिंग को नगरीय क्षेत्रों में अनिवार्य बनाया जाए, ताकि वर्षा के जल का सही उपयोग हो सके।

**हम जल के सवाल को एक बड़ा मुद्दा बनाते हुए समाज में जन चेतना ला सकते हैं। यही रास्ता हमें बचाएगा और हमारे समाज को एक पानीदार समाज बनाएगा। पानीदार होना कोई साधारण बात नहीं है, क्या हम और आप इसके लिए तैयार हैं?**

13. जल प्रबंधन की सरकारी योजनाओं की कड़ी निगरानी की जाए साथ ही बड़े बांधों के उपयोगों की समीक्षा भी की जाए।

14.गांवों में वर्षा के जल का सही प्रबंधन करने के लिए इस तरह के प्रयोग कर चुके विशेषज्ञों की मदद से इसका लोकव्यापीकरण किया जाए।

15. समय-समय पर लगने वाले सभी कृषि और किसान मेलों में जल प्रबंधन का मुद्दा भी शामिल किया जाए, ताकि फसलों और खाद के साथ पानी को लेकर हो रहे प्रयोगों से किसान भी अवगत हो सकें और सही जल प्रबंधन कर सकें।

16. विभिन्न धर्म गुरुओं और प्रवचनकारों से निवेदन किया जा सकता है कि वे अपने सार्वजनिक समारोहों और प्रवचनों में जल प्रबंधन को लेकर अपील जरूर करें। हर धर्म में पानी को लेकर सार्थक बातें कही गयी हैं उनका सहारा लेकर धर्मप्राण जनता में पानी का महत्व बताया जा सकता है।

17. केंद्र और राज्य सरकारें पानी को लेकर लघु फिल्में बना सकती हैं जिन्हें सिनेमाहॉल में फिल्म के प्रसार से पहले या मध्यांतर में दिखाया जा सकता है।

18. पारंपरिक मीडिया के प्रयोग से गांव-कस्बों तक यह संदेश पहुंचाया जा सकता है।

19. पानी को लेकर पत्रिकाओं के विशेष अंक निकाले जा सकते हैं जिनमें दुनिया भर में पानी को लेकर हो रहे प्रयोगों की जानकारी दी जा सकती है।

20. राज्यों के जनसंपर्क विभाग अपने नियमित विज्ञापनों में गर्मी और बारिश के दिनों में पानी के संदेश दे सकते हैं।

ऐसे अनेक विषय हो सकते हैं जिसके द्वारा हम जल के सवाल को एक बड़ा मुद्दा बनाते हुए समाज में जनचेतना ला सकते हैं। यही रास्ता हमें बचाएगा और हमारे समाज को एक पानीदार समाज बनाएगा। पानीदार होना कोई साधारण बात नहीं है, क्या हम और आप इसके लिए तैयार हैं?

# सनातन संस्कृति को परिभाषित करता है पर्यावरण में भारत का अंतरराष्ट्रीय योगदान

**डॉ. दिलीप कुमार**
**क्षेत्रीय निदेशक एवं एसोसिएट प्रोफेसर**
**आईआईएमसी, जम्मू**

**भारत की पर्यावरण संरक्षण की कहानी एक प्रेरणादायक यात्रा है, जो दिखाती है कि एक राष्ट्र की संवेदनशीलता, निष्ठा और सतत् प्रयास वैश्विक पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। भारत का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण में योगदान न केवल उसकी प्राचीन गौरवशाली सनातन संस्कृति को परिभाषित करता है, बल्कि यह वैश्विक पर्यावरणीय स्थिरता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।**

भारत ने अपनी प्राचीन सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धरोहर को संजोते हुए वैश्विक पर्यावरण संकट के प्रति अपनी गहरी चिंता और सक्रिय योगदान को स्पष्ट किया है। भारत की यह यात्रा अद्वितीय रही है, जिसमें प्राचीन ज्ञान और आधुनिक नीतियों से लेकर अंतरराष्ट्रीय पहल तक, हर पहलू ने उसे एक वैश्विक पर्यावरणीय संरक्षक के रूप में स्थापित किया है।

प्राचीन भारतीय परंपराओं ने पर्यावरण के प्रति सम्मान और संतुलन की एक मजबूत नींव रखी थी। वेदों में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश को देवी-देवताओं के रूप में पूजा जाता था (ऋग्वेद)। इसी तरह उपनिषदों में जीवन के हर पहलू में प्रकृति के महत्व को रेखांकित किया गया है। हिन्दू धर्म के अनुसार, सभी जीवों में एक दिव्य तत्व होता है और इसलिए सभी जीवों के साथ सम्मान पूर्वक पेश आना आवश्यक है (श्रीमद्भगवद्गीता)। इसी क्रम में जैन धर्म (जैन आगम) में अहिंसा का सिद्धांत पर्यावरण संरक्षण के महत्व को दर्शाता है, जिसमें सभी जीवों की सुरक्षा की बात की जाती है।

जब भारत स्वतंत्रता के बाद एक नई यात्रा पर निकला, तो पर्यावरण संरक्षण के प्रति उसकी प्रतिबद्धता एक अद्वितीय दृष्टिकोण और दृष्टि के साथ प्रकट हुई। 1972 में स्टॉकहोम सम्मेलन में भारत ने वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दों को मान्यता दी और संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) की स्थापना में भाग लिया। इस सम्मेलन ने भारत को वैश्विक पर्यावरणीय चर्चा में एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाया और पर्यावरण के प्रति उसकी जिम्मेदारी को सुदृढ़ किया। समय के साथ, भारत ने जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर अपनी सक्रियता को और भी बढ़ाया है। 2009 में कोपेनहेगन सम्मेलन के दौरान समझौते के तहत भारत ने अपने कार्बन उत्सर्जन को प्रति इकाई जीडीपी 20–25 प्रतिशत तक घटाने का लक्ष्य निर्धारित किया। यह पहल न केवल भारत की जिम्मेदारी को दर्शाती है बल्कि वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय संकल्प के प्रति उसकी प्रतिबद्धता भी है। 2015 में, पेरिस जलवायु समझौते पर हस्ताक्षर करके, भारत ने 2030 तक अपनी कुल ऊर्जा में 50 प्रतिशत गैर-फॉसिल ईंधन का योगदान सुनिश्चित करने और 2005 के स्तर की

तुलना में 33–35 प्रतिशत तक उत्सर्जन में कमी लाने का लक्ष्य तय किया। इस समझौते ने भारत को वैश्विक जलवायु कार्यों में एक महत्वपूर्ण भागीदार बना दिया।

भारत की अक्षय ऊर्जा के प्रति प्रतिबद्धता ने वैश्विक ऊर्जा सुरक्षा के इस दृष्टिकोण को प्रभावित किया। इसी क्रम में 2010 में शुरू किए गए नेशनल सोलर मिशन का उद्देश्य 2022 तक 20 गीगावाट सौर ऊर्जा उत्पादन था। इस पहल ने न केवल भारत को सौर ऊर्जा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी बनाया बल्कि वैश्विक ऊर्जा सुरक्षा के दृष्टिकोण को सुदृढ़ता दी। इसके अलावा, 2015 में स्थापित अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन ने सौर ऊर्जा के प्रसार को बढ़ावा देने के लिए एक नया मंच भी प्रदान किया। इसका उद्देश्य विकासशील देशों में सौर प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देना और वैश्विक सौर ऊर्जा बाजार को प्रोत्साहित करना है।

स्वच्छता और जल संरक्षण के क्षेत्र में भी भारत ने महत्वपूर्ण पहल की है। 2014 में स्वच्छ भारत अभियान (स्वच्छ भारत मिशन) की शुरुआत का उद्देश्य भारत को स्वच्छ और खुले में शौच से मुक्त बनाना था। इस अभियान ने न केवल देश में स्वच्छता के प्रति जागरूकता बढ़ाई, बल्कि वैश्विक स्तर पर स्वास्थ्य और स्वच्छता के लक्ष्यों को भी समर्थन दिया। जल संरक्षण की दिशा में भारत ने कई योजनाएं लागू की हैं। नमामि गंगे परियोजना, जिसका उद्देश्य गंगा नदी की सफाई और उसके प्रवाह को पुनर्स्थापित करना है, ने गंगा किनारे के राज्यों में जल गुणवत्ता में सुधार किया है। यह परियोजना एक अंतरराष्ट्रीय उदाहरण प्रस्तुत करती है कि कैसे नदियों के संरक्षण के लिए बड़े पैमाने पर प्रयास किए जा सकते हैं।

वनों और जैव विविधता की रक्षा के लिए भी भारत ने कई महत्वपूर्ण पहल की हैं। राष्ट्रीय वन नीति के तहत, भारत ने अपने वन क्षेत्र को 33 प्रतिशत तक बढ़ाने का लक्ष्य निर्धारित किया है। प्रोजेक्ट टाइगर, जो

**अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही है। जलवायु परिवर्तन पर अंतरराष्ट्रीय पैनल (आईपीसीसी) के साथ सक्रिय सहयोग करके, भारत ने वैश्विक जलवायु नीति निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके अलावा, भारत ने कई वैश्विक पर्यावरणीय संधियों पर हस्ताक्षर किए हैं, जैसे बायोडायवर्सिटी कन्वेंशन और स्टॉकहोम कन्वेंशन, जो पर्यावरणीय संरक्षण के लिए एक मजबूत कानूनी ढांचा प्रदान करते हैं।**

1973 में शुरू किया गया था, ने भारत के टाइगर रिजर्व क्षेत्रों की सुरक्षा को सुनिश्चित किया और बाघों की प्रजातियों के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसी तरह, प्रोजेक्ट एलीफेंट ने भी भारतीय हाथियों की सुरक्षा और उनके प्राकृतिक आवासों की रक्षा के लिए एक ठोस रणनीति अपनाई है। इन परियोजनाओं ने न केवल भारत की जैव विविधता को संरक्षित किया है बल्कि अन्य देशों के लिए भी संरक्षण के मॉडल प्रस्तुत किए हैं।

अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही है। जलवायु परिवर्तन पर अंतरराष्ट्रीय पैनल (आईपीसीसी) के साथ सक्रिय सहयोग करके, भारत ने वैश्विक जलवायु नीति निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके अलावा, भारत ने कई वैश्विक पर्यावरणीय संधियों पर हस्ताक्षर किए हैं, जैसे बायोडायवर्सिटी कन्वेंशन और स्टॉकहोम कन्वेंशन, जो पर्यावरणीय संरक्षण के लिए एक मजबूत कानूनी ढांचा प्रदान करते हैं। भारत ने प्राकृतिक आपदाओं के प्रबंधन में भी अपनी भूमिका निभाई है, जैसे कि एशियन डेवलपमेंट बैंक के साथ सहयोग और आपदा राहत प्रयासों में भागीदारी। भारत की आपदा राहत टीमों ने अनेक अवसर पर विभिन्न देशों में आपदाओं के समय सहायता प्रदान करते हुए अंतरराष्ट्रीय मानवतावादी प्रयासों में सक्रिय भागीदारी की है।

भविष्य में, भारत की बढ़ती जनसंख्या, औद्योगीकरण और शहरीकरण के दबाव के बीच पर्यावरणीय संकट का सामना करना होगा। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए, भारत को अपने मौजूदा प्रयासों को और भी मजबूत करना होगा और वैश्विक पर्यावरणीय लक्ष्यों के साथ तालमेल बनाए रखना होगा। हालांकि भारत ने पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है किन्तु भविष्य में भी कई चुनौतियां हमारे सामने हैं। इस तरह भारत की पर्यावरण संरक्षण की कहानी एक प्रेरणादायक यात्रा है, जो दिखाती है कि एक राष्ट्र की संवेदनशीलता, निष्ठा और सतत् प्रयास वैश्विक पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। भारत का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण में योगदान न केवल उसकी प्राचीन गौरवशाली सनातन संस्कृति को परिभाषित करता है, बल्कि यह वैश्विक पर्यावरणीय स्थिरता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। ■

# भारत में ई-कचरा निस्तारण और प्रबंधन

**डॉ. विनीत उत्पल**
समन्वयक, डिजिटल मीडिया कोर्स
भारतीय जनसंचार संस्थान, जम्मू

**भले ही भारत सरकार अपनी ओर से तमाम प्रयत्न कर रही है लेकिन जब तक देश का आम जन ई-अपशिष्ट के प्रति जागरूक नहीं होगा, प्लास्टिक के प्रयोग से खुद को दूर नहीं करेगा तब तक इसका निष्पादन करना संभव नहीं है।**

भारत ई-कचरा यानी ई-अपशिष्ट उत्पादन के मामले में दुनिया में तीसरे नंबर पर है। पहले और दूसरे स्थान पर क्रमशः चीन और अमेरिका हैं। बिजली के घरेलू, ऑफिस के इलेक्ट्रॉनिक सहित संचार के तमाम पुराने उपकरण इस श्रेणी में आते हैं। सबसे अधिक ई-अपशिष्ट कंप्यूटर, लैपटॉप, मोबाइल और टेलीविजन सेट से पैदा होते हैं। सामान्य तौर पर ई-अपशिष्ट के तीन रूप होते हैं, पहला बड़े घरेलू उपकरण, दूसरा आईटी एवं टेलीकॉम और तीसरा ग्राहक उपकरण। बड़े घरेलू उपकरण के तहत रेफ्रिजरेटर और वाशिंग मशीन आते हैं, आईटी एवं टेलीकॉम के तहत पर्सनल कंप्यूटर, लैपटॉप और मॉनिटर आते हैं जबकि ग्राहक उपकरण के तहत टेलीविजन आते हैं। हालांकि ई-अपशिष्ट के दायरे में पुराने मोबाइल, प्रिंटर, रेडियो, कैलकुलेटर, कंप्यूटर बैटरी और लेड एसिड बैटरी, प्रिंटेड सर्किट बोर्ड, कैपेसिटर्स, ट्रांसफॉर्मर्स, केबल इन्सुलेटर्स, चिकित्सा उपकरण आदि आते हैं। इसमें कई खतरनाक रसायन मसलन सीसा, कैडमियम, पारा, निकिल आदि होते हैं, जो पर्यावरण और स्वास्थ्य को हानि पहुंचाते हैं।

आंकड़े बताते हैं कि भारत के कुल 65 ऐसे शहर हैं जो भारत के कुल ई-अपशिष्ट का 60 प्रतिशत उत्पादन करते हैं, जबकि दस राज्य इसका 70 प्रतिशत उत्पादन करते हैं। भारत में मुंबई, दिल्ली, बेंगलूरु, चेन्नई, कोलकाता, अहमदाबाद, हैदराबाद, पुणे, सूरत और नागपुर में सबसे अधिक ई-अपशिष्ट पैदा होता है। भारत सरकार के आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2017–2018 के मुकाबले 2021–2022 का ई-अपशिष्ट दोगुना से अधिक हो गया है और यह लगातार बढ़ता जा रहा है।

संयुक्त राष्ट्र व्यापार और विकास की रिपोर्ट के अनुसार, 2010 और 2022 के बीच स्क्रीन, कंप्यूटर और छोटे आईटी और दूरसंचार उपकरण (एससीएसआईटी) से इलेक्ट्रॉनिक कचरा उत्पन्न करने में भारत में वैश्विक स्तर पर सबसे अधिक 163 प्रतिशत की वृद्धि थी। '2024 डिजिटल इकोनॉमी रिपोर्ट : पर्यावरण की दृष्टि से टिकाऊ और समावेशी डिजिटल भविष्य को आकार' के मुताबिक भारत की दुनिया में ई-अपशिष्ट उत्पादन में हिस्सेदारी वर्ष 2010 में 3.1 प्रतिशत से दोगुनी होकर वर्ष 2022 में 6.4 प्रतिशत थी। रिपोर्ट के अनुसार, एशिया में 2022 में इस तरह का अधिकांश कचरा

उत्पन्न हुआ, जिसमें चीन का योगदान लगभग आधा था।

वहीं, भारत प्लास्टिक कचरे के उत्पादन के मामले में दुनिया में पांचवें नंबर पर है। प्रत्येक वर्ष भारत करीब 5.8 मिलियन टन प्लास्टिक जलाता है। सिंगल-यूज प्लास्टिक के मामले में भारत दुनिया में तीसरे पायदान पर है और इसका योगदान 5.5 मिलियन टन का है। भारत सरकार के आवास एवं शहरी मामलों के मंत्रालय की रिपोर्ट के मुताबिक उत्पादित प्लास्टिक का केवल 60 प्रतिशत ही पुनर्चक्रित किया जाता है, शेष 9400 टन प्लास्टिक पर्यावरण में अप्राप्य छोड़ दिया जाता है जिससे भूमि, वायु और जल प्रदूषण फैलता है। पैकेजिंग में उपयोग होने वाला कुल 70 प्रतिशत प्लास्टिक कुछ ही समय में प्लास्टिक कचरे में परिवर्तित हो जाता है।

ई-अपशिष्ट के निस्तारण के लिए कई गलत प्रक्रिया अपनाई जाती हैं। जैसे भूमि पर या जल निकायों में डंपिंग करना, नियमित कचरे के साथ-साथ लैंडफिलिंग, खुले में रखना, जलाना या गर्म करना, एसिड डालना, प्लास्टिक कोटिंग्स को अलग करना या टुकड़े करना अथवा इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को मैन्युअल रूप से अलग करना आदि। इन गतिविधियों से पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि वे जहरीले प्रदूषक छोड़ते हैं, जो रीसाइक्लिंग स्थलों और वातावरण यथा हवा, मिट्टी, धूल और पानी को दूषित करते हैं।

दूसरी ओर, प्लास्टिक को जलाने से कैंसर, एंडोमेट्रियोसिस, तंत्रिका संबंधी क्षति, अंतःस्रावी व्यवधान, जन्म दोष और बच्चों में विकासात्मक विकार, प्रजनन क्षति, प्रतिरक्षा क्षति, अस्थमा और एकाधिक अंग हानि जैसी बीमारियां मनुष्य को हो सकती है। प्लास्टिक कचरे में मौजूद हानिकारक रसायन जैसे कि बिस्फेनॉल-ए (बीपीए) और पैथलेट्स मानव स्वास्थ्य के लिए खतरे पैदा करते हैं। प्लास्टिक कचरे के कारण समुद्री जीवन, जल स्रोत और मिट्टी में प्रदूषण बढ़ रहा है। हर साल लगभग आठ मिलियन टन प्लास्टिक समुद्रों में पहुंच जाता है, जिससे समुद्री जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

वर्ष 2022 के आंकड़ों के अनुसार, भारत में लगभग 3.2 मिलियन टन ई-अपशिष्ट उत्पन्न होता है। यह संख्या 2025 तक 5.2 मिलियन टन तक पहुंचने का अनुमान है। भारत में ई-अपशिष्ट का केवल पांच प्रतिशत ही सही तरीके से रिसाइकिल किया जाता है, जबकि 95 प्रतिशत ई-अपशिष्ट असंगठित क्षेत्र में नष्ट हो जाता है या लैंडफिल में चला जाता है। भारत में औद्योगिक और चिकित्सा क्षेत्रों से हर साल 1.3 मिलियन टन खतरनाक कूड़ा उत्पन्न होता है। केवल 30 प्रतिशत खतरनाक कूड़ा सही तरीके से प्रबंधित किया जाता है, जबकि बाकी 70 फीसदी असंगठित तरीके से नष्ट किया जाता है। वहीं, भारत में हर साल लगभग 3.5 मिलियन टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न होता है। यह मात्रा बढ़ती जा रही है, और इसके 2030 तक 10 मिलियन टन तक पहुंचने का अनुमान है।

### भारत में ई-अपशिष्ट का आंकड़ा

| वित्तीय वर्ष | उत्पादन (टन में) |
|---|---|
| 2017-18 | 7,08,445.00 |
| 2018-19 | 7,71,215.00 |
| 2019-20 | 10,14,961.21 |
| 2020-21 | 13,46,496.31 |
| 2021-22 | 16,01,155.36 |

भारत सरकार ने ई-अपशिष्ट से निस्तारण के लिए कई कानून बनाये हैं। ई-अपशिष्ट (प्रबंधन) नियम, 2022 के तहत ई-अपशिष्ट प्रबंधन प्रक्रिया को डिजिटल बनाने और दृश्यता बढ़ाने पर जोर है। यह बिजली और इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के निर्माण में खतरनाक पदार्थों (जैसे सीसा, पारा और कैडमियम) के उपयोग को भी प्रतिबंधित करता है जो मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। इसके तहत ई-अपशिष्ट एटीएम को सार्वजनिक स्थानों पर स्थापित करने पर भी जोर दिया गया है। यहां व्यक्ति पुराने इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को जमा कर सकते हैं और बदले में सार्वजनिक परिवहन या आवश्यक वस्तुएं छोटे वित्तीय प्रोत्साहन या वाउचर प्राप्त कर सकते हैं।

**ई-अपशिष्ट ट्रैकिंग और प्रमाणीकरण**

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के संपूर्ण जीवन चक्र को ट्रैक करने के लिए ब्लॉकचेन-आधारित प्रणाली की स्थापना करने पर जोर दिया गया है। प्रत्येक उपकरण के साथ एक डिजिटल प्रमाणपत्र संलग्न करने पर जोर दिया गया है जो उसके विनिर्माण, स्वामित्व और निपटान इतिहास को रिकॉर्ड करेगा।

जुलाई, 2023 में केंद्रीय मंत्री अश्विनी वैष्णव ने संसद में कहा था कि ई-अपशिष्ट का उत्पादन देश में बड़े पैमाने पर हो रहा है। इससे पहले ई-अपशिष्ट (प्रबंधन) नियम, 2016 भी लागू किया गया था। इस कानून के तहत 21 तरह के इलेक्ट्रिकल एंड इलेक्ट्रॉनिक इक्विपमेंट पुराने हो जाने पर ई-अपशिष्ट के दायरे में आते हैं। उन्होंने संसद में एक आंकड़ा पेश किया था जिसके तहत वर्ष 2017—2018 में जहां 7.08 लाख टन ई-कचरा पैदा होता था, वहीं 2021—22 तक यह आंकड़ा 16.01 टन हो गया। गौरतलब है कि ई-अपशिष्ट (प्रबंधन) नियम, 2022 को 1 अप्रैल, 2023 से लागू किया गया।

ऐसे में आवश्यक है कि भले ही भारत सरकार अपनी ओर से तमाम प्रयत्न कर रही है लेकिन जब तक देश का आम जन इस ई-अपशिष्ट के प्रति जागरूक नहीं होगा, प्लास्टिक के प्रयोग से खुद को दूर नहीं करेगा तब तक इसका निष्पादन करना संभव नहीं है। यदि हमें ई-अपशिष्ट मुक्त भारत या विश्व बनाना है तो हर व्यक्ति की जिम्मेदारी है कि वह खुद भी इसके दुष्प्रभाव की जानकारी रखे और दूसरों को भी इसके बारे में बताये। ■

# हरित योद्धाओं के साथ दो कदम

पूनम कुमारी
सहायक प्राध्यापक, आईएमएस, गाजियाबाद

**पर्यावरण के गंभीर मुद्दों पर चर्चा को बढ़ावा देने के लिए, प्रेरणा विचार की टीम ने कुछ समर्पित हरित योद्धाओं से बातचीत की, जो पर्यावरण संरक्षण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। इस पहल का उद्देश्य यह जानना था कि ये योद्धा किस तरह से पर्यावरण को संरक्षित कर रहे हैं, ताकि आम नागरिक उनके योगदान को समझकर, उनसे प्रेरणा लेकर पर्यावरण संरक्षण के प्रति अपनी जिम्मेदारियों का अहसास कर सकें।**

पर्यावरण संरक्षण एक ऐसा मुद्दा है जो न केवल वर्तमान पीढ़ी के लिए बल्कि आने वाली पीढ़ियों के अस्तित्व के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। पर्यावरण हमारे चारों ओर की प्राकृतिक दुनिया को संदर्भित करता है, जिसमें हवा, पानी, मिट्टी, पेड़-पौधे और जीव-जंतु शामिल हैं। मानव जीवन की समृद्धि और स्वास्थ्य सीधे तौर पर पर्यावरण के संतुलन पर निर्भर है। लेकिन, औद्योगीकरण, शहरीकरण और आधुनिक जीवनशैली की बढ़ती मांगों ने पर्यावरण को असंतुलित और दूषित कर दिया है। पर्यावरण का संकट केवल एक देश या राज्य की समस्या नहीं बल्कि वैश्विक समस्या है। ऐसे में इसके समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) जैसा अंतरराष्ट्रीय संगठन भी समय-समय पर देशों को आगाह कर रहा है। साथ ही कार्बन एमिशन को कम करने की सिफारिश भी कर रहा है। विकास और शहरीकरण के लिए तेजी से हो रही वनों की कटाई से न केवल जैव विविधता खतरे में है, बल्कि कार्बन-डाइऑक्साइड का बढ़ता स्तर भी चिंताजनक है। इससे न केवल ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्या हमारे सामने है बल्कि बदलते मौसम ने भयावह भविष्य का संकेत लगभग दे दिया है।

पर्यावरण के गंभीर मुद्दों पर चर्चा को बढ़ावा देने के लिए, प्रेरणा विचार की टीम ने कुछ समर्पित हरित योद्धाओं से बातचीत की, जो पर्यावरण संरक्षण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। इस पहल का उद्देश्य यह जानना था कि ये योद्धा किस तरह से पर्यावरण को संरक्षित कर रहे हैं, ताकि आम नागरिक उनके योगदान को समझ कर उनसे प्रेरणा ले सकें और पर्यावरण संरक्षण के प्रति अपनी जिम्मेदारियों का अहसास कर सकें। इन हरित योद्धाओं के अनुभव और प्रयास लोगों को जागरूक करने के साथ-साथ इस दिशा में कार्य करने के लिए भी प्रेरित करेंगे। इससे हर नागरिक को यह समझने में मदद मिलेगी कि पर्यावरण को बचाने में उनका भी अहम योगदान हो सकता है और यह जिम्मेदारी केवल कुछ व्यक्तियों की नहीं, बल्कि सभी की है।

**देवेंद्र सूरा** - साल 2011 से चंडीगढ़ पुलिस में सिपाही के पद पर कार्यरत हैं। उनका कहना है कि एक आदर्श गांव वही

होता है, जहां पर्यावरण शुद्ध हो। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर पर्यावरण संरक्षण के लिए उन्होंने एक पौधारोपण अभियान शुरू किया। इसको सफल बनाने के लिए, उन्होंने छह बार बैंक से लोन लिया और जनता नर्सरी की स्थापना की, जहां हर साल लगभग 20,000 से 25,000 पौधे तैयार किए जाते हैं। ये पौधे लोगों को मुफ्त में वितरित किए जाते हैं, ताकि अधिक से अधिक लोग पौधारोपण कर सकें और पर्यावरण संरक्षण में योगदान दे सकें। उन्होंने अपने इस अभियान से लोगों को जोड़ते हुए 26 ऑक्सीजन बागों की स्थापना की, जिनमें से 16 अकेले सोनीपत में लगाए गए हैं। ऑक्सीजन बाग एक विशेष वनस्पति उद्यान है, जहां बड़ी संख्या में पेड़-पौधे लगाए जाते हैं, जो अधिक मात्रा में ऑक्सीजन का उत्पादन करते हैं। यह पहल विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों के लिए महत्वपूर्ण है, जहां वायु प्रदूषण और ऑक्सीजन की कमी जैसी गंभीर समस्याएं होती हैं। देवेंद्र सूरा का कहना है कि इन बागों से न केवल पर्यावरण शुद्ध होता है, बल्कि इससे मानव जीवन की गुणवत्ता में भी सुधार आता है।

वह युवाओं को संदेश देते हैं कि पर्यावरण प्रदूषण एक गंभीर समस्या है और आज की युवा पीढ़ी की जिम्मेदारी है कि वे पर्यावरण संरक्षण के लिए सक्रिय प्रयास करें। उनका सुझाव है कि हर व्यक्ति अपने जन्मदिन पर कम से कम पांच पौधे लगाए और उनकी देखभाल करे, ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक बेहतर और हरित भविष्य सुनिश्चित किया जा सके।

**अमिताभ दुबे -** इसी क्रम में रायपुर के सीए अमिताभ ने पेड़ों के संरक्षण के लिए 'ग्रीन आर्मी' की स्थापना की है। उनकी यह पहल इस बात से प्रेरित है कि हर साल हजारों पौधे लगाए जाते हैं, लेकिन केवल 20 प्रतिशत ही जीवित रह पाते हैं, जबकि बाकी पेड़ बारिश और तूफान व देखभाल के अभाव में नष्ट हो जाते हैं। ग्रीन आर्मी का मुख्य उद्देश्य है इन पेड़ों को संरक्षित करना और रायपुर को एक ग्रीन सिटी में बदलना। ग्रीन आर्मी ने प्रकृति को संरक्षित करने के लिए अपने कार्यों को चार प्रमुख विंग्स में विभाजित किया है -

**ग्रीन विंग :** पौधारोपण और पेड़ों के संरक्षण के लिए कार्य करता है।

**ब्लू विंग :** जल संरक्षण पर ध्यान केंद्रित करता है।

**व्हाइट विंग :** प्लास्टिक के उपयोग का विरोध करता है।

**ब्राउन विंग :** प्रदूषण नियंत्रण के लिए काम करता है।

अमिताभ को पेड़ों के संरक्षण की प्रेरणा रायपुर से बिलासपुर की यात्रा में हाईवे निर्माण के दौरान हजारों पेड़ों के कटने के दृश्य को देखकर मिली। इस अनुभव ने उन्हें प्रेरित किया कि पेड़ों को संरक्षित करना उनके जीवन का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य होगा। ग्रीन आर्मी के प्रयासों से उन्होंने पर्यावरण संरक्षण की दिशा में एक बड़ा कदम उठाया है, जो न केवल पेड़ों की सुरक्षा में मदद करता है बल्कि पर्यावरणीय जागरूकता भी बढ़ाता है।

**प्रेरणा विचार की टीम ने पर्यावरण संरक्षण में योगदान देने वाले विभिन्न हरित योद्धाओं के कार्यों और अनुभवों को उजागर किया है। देवेंद्र सूरा की पौधारोपण मुहिम, अमिताभ दुबे की ग्रीन आर्मी, रमाकांत त्यागी की नदी संरक्षण पहल, विनोद कुमार वर्मा का जल संरक्षण अभियान और डॉ. दिनेश बंसल की हरित एम्बुलेन्स सभी ने प्रदूषण नियंत्रण, पौधारोपण, जल संरक्षण और जीवन की गुणवत्ता के सुधार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।**

**रमाकांत त्यागी -** पर्यावरण को संरक्षित करने और खासकर नदियों, तालाबों और जल के अन्य स्रोतों को बचाने के लिए मेरठ के रमाकांत त्यागी भी हर संभव कोशिश कर रहे हैं। उन्हें लोग नदी पुत्र के नाम से भी संबोधित करते हैं क्योंकि उन्होंने हिंडन नदी, काली नदी के साथ-साथ कई तालाबों को भी पुनर्जीवित किया है। भारतीय नदी परिषद् का गठन कर लोगों को जोड़ा ताकि नदियों को पुनर्जीवित किया जा सके। उन्होंने नेचुरल एनवायरनमेंटल एजुकेशन एंड रिसर्च फाउंडेशन का भी गठन किया ताकि आने वाले समय में जल समस्या से निपटा जा सके। 28 दिसम्बर 2023 को रमाकांत त्यागी ने राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू से मिलकर पूरे भारत के नदी तंत्र को विकसित करने और इसकी महत्ता को समझाने के लिए 'नदी दर्शन पोर्टल' को विकसित करने का प्रस्ताव रखा। जर्मनी की जीआईजेड नामक संस्था ने भी रमाकान्त त्यागी को पूरा समर्थन दिया है। यह संस्था नमामि गंगे प्रोजेक्ट के तहत गंगा की सफाई भी करेगी। रमाकांत त्यागी के योगदान को देखते हुए उन्हें यूएस के टैरी बेकर पुरस्कार, भारत सरकार के राष्ट्रीय जल पुरस्कार, यूके के ग्रीन एप्पल पुरस्कार आदि राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय कई पुरस्कारों से पुरस्कृत किया जा चुका है।

**विनोद मेलाना :** भीलवाड़ा के विनोद मेलाना ने 'अमृता देवी पर्यावरण नागरिक संस्थान', जिसे 'अपना संस्थान' के नाम से भी जाना जाता है, की स्थापना कर पर्यावरण संरक्षण में एक बड़ी पहल की है। इस संस्थान ने अब तक एक करोड़ से अधिक पेड़ लगाकर पर्यावरण को संरक्षित करने में अहम भूमिका निभाई है। इसके अलावा, जल संरक्षण के क्षेत्र में भी इस संस्थान ने बड़ी सफलता हासिल की है। 3500 से अधिक केंद्रों पर रेनवॉटर हार्वेस्टिंग के सफल संचालन के परिणामस्वरूप, भीलवाड़ा का जलस्तर, जो

कभी 180 फीट तक गिर चुका था, इसमें आशातीत सुधार हुआ है, जिससे जल संकट में भारी कमी आई है। पेयजल की गुणवत्ता में भी सुधार हुआ है, जिसे TDS (टोटल डिजॉल्व्ड सॉलिड्स) में कमी के रूप में देखा गया है।

विनोद मेलाना का मानना है कि पौधारोपण को लेकर लोगों में जागरूकता बढ़ी है, लेकिन जल संरक्षण के महत्व को लेकर अभी भी व्यापक सुधार की जरूरत है। वे मानते हैं कि जल संरक्षण को जन आंदोलन का रूप देने की आवश्यकता है और इसके लिए समाज के प्रतिष्ठित वर्ग को भी आगे आकर लोगों से पर्यावरण संरक्षण के लिए अपील करनी चाहिए। उनका मिशन यह सुनिश्चित करना है कि पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी हर नागरिक की प्राथमिकता बने।

**डॉ. दिनेश बंसल :** वह पेशेवर रूप से बागपत में एक डॉक्टर हैं उन्होंने पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनका मानना है कि वायु प्रदूषण आज की सबसे गंभीर समस्याओं में से एक है और इसका समाधान पौधारोपण के माध्यम से किया जा सकता है।

वर्ष 2016 में, उन्होंने एक अभिनव शुरुआत की- 'हरित एम्बुलेंस'। यह एम्बुलेंस एक ट्रैक्टर पर आधारित है, जिसमें 1500 लीटर का एक टैंक, ऑर्गेनिक खाद और पेस्टिसाइड के बॉक्स शामिल हैं। यह एम्बुलेंस सूखे पौधों और पेड़ों के लिए एक वरदान है। विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहां पौधों को नियमित देखभाल की जरूरत होती है। कोविड-19 महामारी के दौरान, जब लोग अपने घरों में बंद थे, तब भी डॉ. बंसल ने प्रशासन से अनुमति लेकर अपनी हरित एम्बुलेंस के माध्यम से पेड़ों और पौधों की देखभाल जारी रखी और उन्हें जीवनदान प्रदान किया। इस दौरान उनकी कोशिशों ने यह सुनिश्चित किया कि पौधे स्वस्थ रहें और वायु गुणवत्ता में सुधार हो।

डॉ. बंसल की यह पहल न केवल पर्यावरण को लाभ पहुंचाती हैं, बल्कि समाज में हरित प्रयासों के प्रति जागरूकता भी बढ़ाती है। उनके कार्यों से यह संदेश मिलता है कि पर्यावरण संरक्षण में हर एक व्यक्ति का योगदान महत्वपूर्ण है और सब मिलकर ही प्रभावी बदलाव ला सकते हैं।

**अंतत:, पर्यावरण संरक्षण का उद्देश्य केवल प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करना नहीं है, बल्कि हमारे जीवन की गुणवत्ता को भी सुधारना है। इस दिशा में उठाए गए प्रत्येक कदम, चाहे वह पौधारोपण हो, जल संरक्षण हो, या प्रदूषण नियंत्रण हो, समाज के हर वर्ग के योगदान को महत्वपूर्ण बनाते हैं। एक हरित भविष्य की ओर अग्रसर होने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम सभी मिलकर, एक दृढ़ संकल्प के साथ, पर्यावरण के संरक्षण के लिए प्रयासरत रहें।**

पर्यावरण संरक्षण आज की दुनिया में केवल एक नैतिक जिम्मेदारी नहीं, बल्कि हमारे अस्तित्व की आवश्यकता भी है। वायु, जल, मिट्टी और वनस्पतियों की रक्षा करते हुए हम न केवल अपने वर्तमान जीवन को सुरक्षित कर सकते हैं, बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी एक स्थिर और स्वस्थ वातावरण दे सकते हैं।

आधुनिक जीवनशैली और औद्योगीकरण ने पर्यावरण पर गंभीर प्रभाव डाला है, जिससे वायु प्रदूषण, जल संकट और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएं उत्पन्न हुई हैं। इस परिदृश्य में, अंतरराष्ट्रीय संगठनों द्वारा दी जा रहीं चेतावनियां और प्रयास विशेष महत्व रखते हैं, क्योंकि ये वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय संकट को समझने और उनका समाधान करने के लिए आवश्यक दिशा प्रदान करते हैं।

प्रेरणा विचार की टीम ने पर्यावरण संरक्षण में योगदान देने वाले विभिन्न हरित योद्धाओं के कार्यों और अनुभवों को आम जन के सामने लाने की कोशिश की है। देवेंद्र सूरा की पौधारोपण मुहिम, अमिताभ दुबे की ग्रीन आर्मी, रमाकांत त्यागी की नदी संरक्षण पहल, विनोद कुमार वर्मा का जल संरक्षण अभियान और डॉ. दिनेश बंसल की हरित एम्बुलेंस सभी ने प्रदूषण नियंत्रण, वृक्षारोपण, जल संरक्षण और जीवन की गुणवत्ता के सुधार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन प्रयासों से यह स्पष्ट होता है कि पर्यावरण संरक्षण एक सामूहिक प्रयास है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इन हरित योद्धाओं के प्रेरणादायक कार्यों से हम सीख सकते हैं कि छोटे-छोटे प्रयास भी बड़े बदलाव ला सकते हैं। समाज के प्रत्येक सदस्य को यह समझना होगा कि पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक है। हमारे हर एक कदम और निर्णय का पर्यावरण पर प्रभाव पड़ता है और इसे ध्यान में रखते हुए हमें अपने जीवन में स्थिरता और सकारात्मकता को अपनाना होगा।

अंतत:, पर्यावरण संरक्षण का उद्देश्य केवल प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करना नहीं है, बल्कि हमारे जीवन की गुणवत्ता को भी सुधारना है। इस दिशा में उठाए गए प्रत्येक कदम, चाहे वह पौधारोपण हो, जल संरक्षण, या प्रदूषण नियंत्रण हो, समाज के हर वर्ग के योगदान को महत्वपूर्ण बनाते हैं। एक हरित भविष्य की ओर अग्रसर होने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम सभी मिलकर, एक दृढ़ संकल्प के साथ, पर्यावरण के संरक्षण के लिए प्रयासरत रहें। ■

# संस्कृत भाषा : भारतीय ज्ञान और रोजगार की कुंजी

**अदिति सिंह**
छात्रा, लॉ
दिल्ली मेट्रोपोलिटन एजुकेशन

**संस्कृत ही विश्व की अनेक भाषाओं की जननी है। इसलिए संस्कृत न केवल दर्शन और ज्ञान की भाषा है, बल्कि अनेक क्षेत्रों में रोजगार के लिए कुंजी भी है।**

संस्कृत न केवल एक प्राचीनतम् शास्त्रीय भाषा है, बल्कि यह भारत के धर्म, दर्शन, परंपरा और संस्कृति की संवाहक भी है। साथ ही यह अनेक आधुनिक भारतीय और यूरोपीय भाषाओं की मूल भाषा यानी जननी है। हमारे महान भारतीय ऋषियों, मनीषियों और दार्शनिकों ने ज्ञान, विज्ञान की अवधारणाओं को संस्कृत में लिखा है। वेद, उपनिषद् जैसे अनेक प्राचीन ग्रंथ संस्कृत में ही हैं। कभी संस्कृत भारतीयों की मातृभाषा थी। धीरे-धीरे संस्कृत का प्रभुत्व अन्य भाषाओं तक पहुंचा। बौद्ध काल में भारतीय क्षेत्र में कई नई भाषाओं का आगमन हुआ। फिर कालांतर में जब मुस्लिम आक्रमणकारियों ने भारत में अपना शासन स्थापित कर लिया, तो संस्कृत भाषा नेपथ्य में चली गई। इसके बाद अंग्रेजों ने भारतीय साम्राज्य पर कब्जा कर लिया और अंग्रेजी भाषा ने अपना शासन शुरू कर दिया। इस प्रकार, आधुनिक भारत में साजिश के तहत संस्कृत भाषा को बोलचाल और करियर से बाहर कर दिया गया। वर्तमान नेतृत्व और नयी शिक्षा नीति में संस्कृत भाषा ने नई संभावनाओं के द्वार खोल दिये हैं। ऐसे में अब छात्र संस्कृत भाषा के जरिये अनेक क्षेत्रों में भविष्य बनाने को लेकर उत्सुक हैं। इसलिए आजकल छात्र पाठ्यक्रम के रूप में संस्कृत भाषा को चुन रहे हैं और संस्कृत भाषा में अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

**आवश्यक योग्यता :** छात्र 12वीं के स्तर पर भी अन्य विषयों के साथ संस्कृत पढ़ सकते हैं। हालांकि आज अधिकांश संस्थानों में संस्कृत वैकल्पिक विषय के रूप में है। इसके बाद छात्र संस्कृत पाठ्यक्रम में स्नातक डिग्री हासिल कर सकते हैं। वहीं यदि आप उच्च अध्ययन और शोध के लिए जाना चाहते हैं, तो आप संस्कृत पाठ्यक्रम में स्नातकोत्तर करने के बाद पीएचडी भी कर सकते हैं। संस्कृत पाठ्यक्रमों के अध्ययन करने के लिए वैसे तो देशभर के लगभग सभी महाविद्यालय और विश्वविद्यालय हैं। लेकिन कुछ प्रसिद्ध संस्थान लेडी श्री राम कॉलेज दिल्ली, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर के साथ-साथ देश के अन्य संस्थानों से भी आप संस्कृत की पढ़ाई कर सकते हैं।

**प्रगति के अवसर :** संस्कृत की पढ़ाई करने के बाद आपके लिए कई क्षेत्रों में संभावनाओं की भरमार है। सबसे प्रभावी भविष्य की बात करें तो देश के अधिकांश विश्वविद्यालयों और स्कूलों में आप प्रोफेसर और शिक्षक के रूप में भविष्य बना सकते हैं। इसके अलावा कई संस्थानों में प्राचीन दार्शनिकों और धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन के लिए भी अवसर हैं। साथ ही वास्तु, योग, भारतीय नाटक, ज्योतिष, वैदिक अध्ययन और आयुर्वेद से जुड़कर रिसर्च के साथ-साथ इन सभी क्षेत्रों में भी रोजगार के अनेक अवसर हैं। ऑनलाइन ट्रांसक्राइबर, दुभाषिया, संपादक, भाषा-विशिष्ट, प्राक्-शास्त्री, लेखक /उपन्यासकार, पुरातत्व, संग्रहालयों में नौकरियों के विकल्प भी उपलब्ध हैं। संस्कृत विषय के छात्र सिविल सेवा को भी अपने विकल्प के रूप में चुन सकते हैं। इसके अलावा सेना में धर्म शिक्षक/गुरु के रूप में भी अवसर हैं। इसके लिए भी संस्कृत में आचार्य होना चाहिए। इस तरह संस्कृत भाषा के जरिए आप न केवल राष्ट्र के प्राचीन ज्ञान से परिचित हो सकते हैं बल्कि अनेक आकर्षक अवसर भी सहज ही आपके सपनों को पंख लगा सकते हैं। ■

# शुष्क मौसम में त्यौहारों का मेला

**नीलम भागी**
**लेखिका, जर्नलिस्ट, ब्लॉगर, ट्रैवलर**

**शारदीय नवरात्र, दुर्गा महा अष्टमी, दशहरा, दुर्गा पूजा, करवा चौथ धनतेरस, दीपावली, छठ पूजा और देव दीपावली के त्यौहार पूरे देश में अलग-अलग रंग में धूमधाम से मनाए जाते हैं। मन भावन ऋतु में त्यौहारों का संगम और अपनों का संग भारतीय संस्कृति की समृद्ध परंपरा का अनूठापन है।**

पूरा आश्विन और आधा कार्तिक महीना विविध पारंपरिक त्यौहारों के लिए कुंभ जैसा है। हर वर्ग, समुदाय और उम्र के लोग इस दौरान धूमधाम से अनेक त्यौहारों में शामिल होकर राष्ट्र की सनातन परंपरा और संस्कृति को आत्मसात करते हैं। इसी क्रम में आंध्र प्रदेश और तेलंगाना राज्य की महिलाओं द्वारा, बड़े उत्साह से पूरे नौ दिन मनाये जाने वाले बतुकम्मा महोत्सव में आंचलिकता का अद्‌भुत समावेश है। ये शेष भारत के शरद नवरात्रि से मेल खाता है। प्रत्येक दिन बतुकम्मा उत्सव को अलग नाम से पुकारा जाता है। जंगलों से ढेर सारे फूल लाये जाते हैं। फूलों की सात परतों से गोपुरम मंदिर की आकृति बनाकर बतुकम्मा अर्थात देवी माँ पार्वती को महागौरी के रूप में पूजा जाता है। नौ दिनों तक अलग-अलग क्षेत्रीय पकवानों से गोपुरम को भोग लगाकर सब उत्सव के आनन्द में भावविभोर होते हैं। नवरात्रि की अष्टमी को यह त्यौहार दशहरे से पहले समाप्त होता है। इसी तरह बतुकम्मा से मिलता जुलता, तेलंगाना में कुवांरी लड़कियों द्वारा बोडेम्मा पर्व मनाया जाता है, जो सात दिनों तक चलने वाला गौरी पूजा का पर्व है। महाअष्टमी और महानवमी को नौ कन्याओं की पूजा की जाती है जो देवी नवदुर्गा के नौ रूपों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

इसी क्रम में कबीर यात्रा, करणीमाता महोत्सव राजस्थान में नवरात्र के दौरान मनाया जाने वाला त्यौहार है। तिरुमाला में ब्रह्मोत्सव में लाखों श्रद्धालु शामिल होते हैं। किंवदंती है कि भगवान ब्रह्मा ने सबसे पहले तिरुमाला में ब्रह्मोत्सव मनाया था। वैसे तिरुमाला में हर दिन एक त्यौहार है और धन के भगवान श्री वेंकटेश्वर साल में 450 उत्सवों का आनन्द लेते हैं। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण ब्रह्मोत्सव है जिसका शाब्दिक अर्थ है ब्रह्मा का उत्सव। वहीं दशहरे की छुट्टियों में जगह-जगह रात को रामलीला मंचन होता है। इससे समूचा देश इन दिनों राममय रहता है। तवांग महोत्सव अरुणाचल प्रदेश के तवांग जिले में आयोजित होने वाला तीन दिवसीय त्यौहार है। यह क्षेत्र की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को जानने के लिए अनूठा पर्व है। जैसे स्ट्रीट कार्निवल, पारंपरिक नृत्य और संगीत, पारंपरिक खेल और क्रीड़ा आदि।

वहीं पूरे देश में दुर्गा पूजा का त्यौहार भारतीय उपमहाद्वीप व दक्षिण एशिया में मनाया जाने वाला सामाजिक, सांस्कृतिक,

धार्मिक वार्षिक हिन्दू पर्व है। पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, असम, बिहार, झारखण्ड, मणिपुर, ओडिशा और त्रिपुरा में सबसे बड़ा उत्सव माना जाता है। नेपाल और बांग्लादेश में भी यह बड़े त्यौहार के रूप में है। दुर्गा पूजा पर्व पश्चिमी भारत के अतिरिक्त दिल्ली, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, जम्मू-कश्मीर, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक और केरल में भी मनाया जाता है। हिन्दू सुधारकों ने ब्रिटिश राज में इसे भारतीय स्वाधीनता आंदोलनों का प्रतीक भी बनाया। दिसम्बर 2021 में कोलकाता की दुर्गा पूजा को यूनेस्को की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर की सूची में शामिल किया गया। इसी क्रम में बहू मेला जम्मू-कश्मीर में आयोजित होने वाले बड़े हिन्दू त्यौहारों में से एक है। यह जम्मू के बहू किले में साल में दो बार नवरात्र के दौरान मनाया जाता है। इस समय विभिन्न प्रांतों में अलग-अलग पद्धति से देवी पूजन और गुजरात में गरबा नृत्य जैसी पारंपरिकता देखते ही बनती है।

तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक में दशहरे से पहले नौ दिनों को तीन देवियों की समान पूजा के लिए तीन-तीन दिनों में बांट दिया है। पहले तीन दिन धन और समृद्धि की देवी लक्ष्मी को समर्पित हैं। अगले तीन दिन शिक्षा और कला की देवी सरस्वती को समर्पित हैं और बाकी तीन दिन माँ शक्ति दुर्गा को समर्पित हैं। विजयदशमी का दिन बहुत शुभ माना जाता है। बच्चों के लिए विद्या आरंभ के साथ कला में अपनी-अपनी शिक्षा शुरू करने के लिए इस दिन सरस्वती पूजन किया जाता है।

विजयदशमी या दशहरा पर देश में कहीं महिषासुर मर्दिनी को सिंदूर खेला के बाद विसर्जित किया जाता है, तो कहीं श्री राम की रावण पर विजय के उपलक्ष्य में रावण, मेघनाथ, कुंभकरण के पुतले दहन किए जाते हैं। सबसे अनूठा 75 दिन तक मनाया जाने वाला बस्तर का दशहरा है। जिसका रामायण से कोई संबंध नहीं है। अपितु बस्तर की आराध्य देवी माँ दन्तेश्वरी और देवी देवताओं की पूजा से सम्बंध है। ऐसे ही कोटा दशहरा एक सप्ताह तक मनाया जाता है। कुल्लू दशहरे में गांवों से देवी देवताओं की मूर्तियां कुल्लू घाटी में लाकर दशहरा मनाया जाता है। वहीं रामनगर में एक महीने तक रामलीला चलती है। मैसूर का दस दिवसीय दशहरा विश्व विख्यात है। इसे असत्य पर सत्य की जीत का प्रतीक माना जाता है। इस दिन शस्त्र पूजा का विशेष महत्व है। नए कार्य भी आरम्भ किए जाते हैं।

इसी क्रम में दो दिवसीय मारवाड़ उत्सव जोधपुर में, शरद पूर्णिमा के दिन अपने गौरवशाली अतीत के राजपूत वीरों की याद में मनाया जाता है। शरद पूर्णिमा, कोजागरी पूर्णिमा, कंगाली बिहू, वाल्मीकि जयंती विविधता के संवाहक हैं। इस दिन (शरद पूर्णिमा) समुद्र मंथन के दौरान माँ लक्ष्मी प्रकट हुईं थीं। पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा और असम में इसे कोजागरी पूर्णिमा भी कहा जाता है। कोजागरी का अर्थ है-वह जो जाग रहा है। मान्यता है कि रात में लक्ष्मी जी घरों में आती हैं और जो जाग रहा होता है उसे आशीर्वाद देती हैं। यह व्रत चंद्रमा की रोशनी में रखा जाता है। कहा जाता है कि इस दिन चांदनी में अमृत का प्रभाव होता है।

**इन त्यौहारों से नकारात्मक ऊर्जा को समाप्त कर जीवन में सकारात्मक ऊर्जा के प्रवाह के जरिये समृद्धि का स्वागत करते हैं। ऐसे में व्यस्त और रंग-बिरंगी सांस्कृतिक गतिविधियों का अक्टूबर महीना अपनों और अपनी सनातन संस्कृति से मिलाने का मनमोहक समय है।**

कावेरी संक्रमणा ब्रह्मगिरि की पहाड़ियों में भागमंडला मंदिर है। यहां से आठ किलोमीटर की दूरी पर कावेरी का उद्गम स्थल तालकावेरी है। मंदिर के प्रांगण में ब्रह्मकुण्डिका है, जहां श्रद्धालु इस दिन स्नान करते हैं। सूर्य के तुला राशि में प्रवेश करते ही कावेरी संक्रमणा का त्यौहार मनाया जाता है और कावेरी यात्रा महीने भर चलती है। त्यौहारों की श्रृंखला में पहले महाकाव्य 'रामायण' के रचयिता महाकवि महर्षि वाल्मीकि जयंती आश्विन महीने की पूर्णिमा को मनाई जाती है। वहीं असम का कंगाली बिहू किसानों और खलिहान की समृद्धि से जुड़ा मनभावन त्यौहार है। सौभाग्यवती महिलाएं पति की लम्बी आयु के लिए निर्जला करवा चौथ का व्रत रखती हैं। महिलाएं श्रृंगार करके रात्रि को चंद्रमा को अर्घ्य देकर पति के हाथ से पानी पीती हैं और व्रत का पारण करती हैं। अहोई अष्टमी के दिन महिलाएं संतान की लम्बी आयु और उसके सुखमय जीवन की कामना के लिए निर्जला व्रत रखती हैं। इस दिन गोवर्धन परिक्रमा मार्ग में स्थित राधा कुण्ड में निसंतान जोड़े डुबकी लगाते हैं। ऐसी मान्यता है कि इससे उन्हें संतान सुख मिलता है।

वहीं वर्ष के सबसे महत्वपूर्ण त्यौहारों की शुरुआत धनतेरस से पांच दिवसीय दीपावली पर्व की होती है। इन त्यौहारों से हम नकारात्मक ऊर्जा को समाप्त कर जीवन में सकारात्मक ऊर्जा के प्रवाह के जरिये समृद्धि का स्वागत करते हैं। ऐसे में व्यस्त और रंग-बिरंगी सांस्कृतिक गतिविधियों का महीना अपनों और अपनी सनातन संस्कृति से मिलाने का मनमोहक समय है। ■

# तीनों सेना के उप-प्रमुखों की स्वदेशी उड़ान

एक ऐतिहासिक घटना के तौर पर, भारतीय सेना, नौसेना और वायु सेना के उप प्रमुखों ने स्वदेश में निर्मित हल्के लड़ाकू विमान (एलसीए) तेजस में उड़ान भरकर इतिहास रच दिया। उप वायुसेना प्रमुख (वीसीएएस) एयर मार्शल ए.पी. सिंह ने प्रमुख लड़ाकू विमान उड़ाया और उप थल सेना प्रमुख लेफ्टिनेंट जनरल एन.एस. राजा सुब्रमणि के साथ-साथ उप नौसेना प्रमुख वाइस एडमिरल कृष्णा स्वामीनाथन ने दो सीट वाले तेजस में उड़ान भरी। यह संयुक्त उड़ान इसलिए भी अभूतपूर्व है, क्योंकि पहली बार तीनों सेनाओं के उप प्रमुखों ने एक ही अवसर पर उड़ान भरी है। यह भारत की बढ़ती एकीकृत रक्षा क्षमताओं, आत्मनिर्भरता के प्रति प्रतिबद्धता का एक मजबूत प्रमाण है। यह उड़ान जोधपुर के आसमान पर हुई, जहां भारतीय वायु सेना ने तरंग शक्ति 2024 नामक अभ्यास का आयोजन किया था। यह भारत का पहला बहुराष्ट्रीय अभ्यास है जिसका उद्देश्य इसमें भाग लेने वाले मित्र देशों के बीच अंतर-संचालन और परिचालन समन्वय को बढ़ाना है। इस मिशन में तेजस को शामिल किए जाने से भारत के रक्षा बुनियादी ढांचे के आधुनिकीकरण में स्वदेशी प्लेटफॉर्मों की महत्वपूर्ण भूमिका का पता चलता है। भारत के स्वदेशी रक्षा विनिर्माण कौशल के प्रतीक तेजस की उड़ान देश की मेक इन इंडिया पहल के लिए एक महत्वपूर्ण क्षण है। ■

# ऋषि परंपरा का सम्मान बढ़ा : उपराष्ट्रपति

उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़ ने वैश्विक दृष्टिकोण और राष्ट्र के मूल्यों को आकार देने में भारत की प्राचीन ऋषि परंपरा के योगदान पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि वसुधैव कुटुंबकम् ऋषि परंपरा का मूल सिद्धांत है। वैश्विक कूटनीति में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका पर उन्होंने कहा कि जी-20 शिखर सम्मेलन के दौरान दुनिया ने भारत के नेतृत्व को पहचाना जब हमारा ध्येय वाक्य 'एक पृथ्वी, एक परिवार, एक भविष्य' था। यह बात उन्होंने जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय, चित्रकूट में आयोजित 'आधुनिक जीवन में ऋषि परंपरा' विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी में कही। उन्होंने भारत की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विरासत में निहित दो प्रमुख सिद्धांतों को विश्व मंच पर पेश करने के लिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के दूरदर्शी नेतृत्व की सराहना की। प्रथम सिद्धांत को रेखांकित करते हुए उन्होंने कहा कि भारत ने कभी भी विस्तारवाद की नीति का समर्थन नहीं किया अथवा दूसरों की भूमि के प्रति लालसा की भावना नहीं रखी। वहीं दूसरे सिद्धांत के बारे में बताया कि किसी भी संकट में युद्ध समाधान नहीं है। उपराष्ट्रपति ने कहा कि दुनिया के बड़े-बड़े लोग जब अशांति महसूस कर रहे थे, पथ से भटक गए, जब उन्हे अंधकार दिखाई दिया, तो उनका रुख भारत की तरफ हुआ। इस तकनीकी युग में भी, उन लोगों को मार्गदर्शन और किरण की उम्मीद भारत में मिली। ■

# चंद्रमा और मंगल के बाद, शुक्र ग्रह पर जाएगा भारत

वैज्ञानिक अन्वेषण और शुक्र के वायुमंडल, भूविज्ञान को बेहतर ढंग से समझने तथा घने वायुमंडल की जांच करके बड़ी मात्रा में वैज्ञानिक डाटा प्राप्त करने के लिए शुक्र पर मिशन के लिए केंद्रीय मंत्रिमंडल ने वीनस ऑर्बिटर मिशन (वीओएम) के विकास को मंजूरी दे दी है। यह चंद्रमा और मंगल के बाद शुक्र ग्रह के अन्वेषण और अध्ययन के सरकार के विजन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा। शुक्र, पृथ्वी का सबसे निकटतम ग्रह है। माना जाता है कि इसका निर्माण पृथ्वी जैसी ही परिस्थितियों में हुआ है। यह इस बात को समझने का अनूठा अवसर प्रदान करता है कि ग्रहों का वातावरण किस प्रकार बहुत अलग तरीके से विकसित हो सकता है। इस मिशन के मार्च 2028 तक पूरा होने की संभावना है। ■

MAHARAJA AGRASEN
TECHNICAL EDUCATION SOCIETY
PASSION FOR QUALITY EDUCATION SINCE 1998
MATES
Years of Excellence
Maharaja Agrasen Institute of Management Studies
www.maims.ac.in
ACCREDITED A++ By NAAC
PROUDLY ANNOUNCES THE GRANT OF
AUTONOMOUS STATUS FROM UGC
COURSES
MANAGEMENT • BBA • BCA
LAW • B.A. LLB (H) • BBA LLB (H) • LLM
COMMERCE • B. Com (H) • B.A. Economics (H)
HUMANITIES • Journalism B.A(JMC)
MAHARAJA AGRASEN INSTITUTE OF TECHNOLOGY
www.mait.ac.in
COURSES
MAHARAJA AGRASEN BUSINESS SCHOOL
www.mabs.ac.in
COURSE
PGDM
Approved by AICTE, Ministry of Education, Govt. of India
Academic Partnership with Grant Thornton Bharat
MAHARAJA AGRASEN UNIVERSITY (HIMACHAL PRADESH)
www.mau.ac.in
COURSES
2021-22 Highest Rating from IIC of MHRD
50+ MoUs & Collaborations with Corporates
10000+ Students From Delhi/ NCR
30+ Wide range of Course
400+ Top Corporate Recruiters
150+ MoUs
25000+ Alumni Trust Base
75+ High-Tech Labs & Computer Labs
Achievements
100 Gold Medalists
Selection in UPSC
1000+ Research Papers Published & Patents Registered
Placement inTop Companies
Recognitions & Approvals
Facilities
500+ Top Faculty
Incubation Center for Start-Ups
NCC and NSS
State of Art Auditorium
Hostels for Boys
GYM for boys and girls
Yajya Shala
Meditation Centre
Spiritual Library
OUR GUIDING FORCE
Dr. Nand Kishore Garg, M.Sc, LLB
Founder Chairman MATES, Chancellor MAU
WE WELCOME EMINENT FACULTY AT MATES
Prof. (Dr.) J.V. Desai
Prof. (Dr.) S. K. Garg
Prof. (Dr.) D. K. Jain
OUR PLACEMENT PARTNERS
CELEBRATING 25 YEARS OF EXCELLENCE IN EDUCATION
MATES CAMPUSES, Maharaja Agrasen Chowk, Sector-22, Rohini, Delhi- 110086 | https://mates.foundation

# विनम्र एवं जीवट शक्ति के प्रेरणा महापुरुष

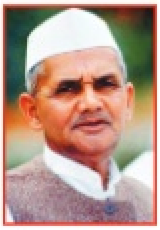

उत्तर प्रदेश के वाराणसी के नजदीक छोटे से रेलवे टाउन, मुगलसराय में 2 अक्टूबर 1904 को जन्मे लाल बहादुर शास्त्री असाधारण प्रतिभा के धनी थे। बचपन से ही अपनी मेहनत पर विश्वास करने वाले शास्त्री जी ने पूरे देश को कर्म का संदेश दिया। गांधी जी के असहयोग आंदोलन में शामिल होने के आह्वान पर लाल बहादुर शास्त्री ने मात्र सोलह वर्ष की अवस्था में पढ़ाई छोड़ दी। उनके परिवार ने इस निर्णय को गलत बताकर उन्हें रोकने की कोशिश की लेकिन असफल रहे। बाहर से विनम्र दिखने वाले लाल बहादुर शास्त्री अन्दर से चट्टान की तरह दृढ़ थे। वह मानवता और आदर्शों के सच्चे पुजारी थे। वह वर्ष 1930 में महात्मा गांधी के नमक कानून को तोड़ने वाली दांडी यात्रा में शामिल हो गए। इस तरह उन्होंने कई स्वतंत्रता अभियानों का नेतृत्व किया और लगभग सात वर्षों तक जेल में रहे। स्वाधीनता के संघर्ष ने उन्हें पूर्णतः परिपक्व बना दिया। स्वाधीनता के बाद देश के शासन में रचनात्मक भूमिका निभाने के क्रम में वह अपने गृह राज्य उत्तर प्रदेश का संसदीय सचिव नियुक्त हुए और जल्द ही वे गृह मंत्री के पद पर भी आसीन हुए। वह 1951 में दिल्ली आ गए एवं केंद्रीय मंत्रिमंडल के कई विभागों का प्रभार संभाला। वह रेल मंत्री, परिवहन एवं संचार मंत्री, वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री, गृह मंत्री एवं पं. नेहरू की बीमारी के दौरान बिना विभाग के मंत्री रहे। जवाहर लाल नेहरू के बाद लाल बहादुर शास्त्री भारत के दूसरे प्रधानमंत्री के रूप में 9 जून 1964 से 11 जनवरी 1966 को अपनी मृत्यु तक पद पर रहे। शास्त्री जी ने 1965 में पाकिस्तान से युद्ध में उत्तम नेतृत्व प्रदान किया और 'जय जवान-जय किसान' का नारा दिया। इससे भारत की जनता का मनोबल बढ़ा और सारा देश एकजुट हो गया। एक बार उन्होंने कहा था कि मेहनत प्रार्थना करने के समान है। उनकी मृत्यु 11 जनवरी 1966 की रात को रहस्यमय तरीके से उज्बेकिस्तान के ताशकंद में हुई। ■

# भारतीय राजनीति पर अमिट छाप छोड़ने वाले नानाजी देशमुख

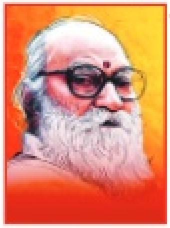

नानाजी देशमुख का जन्म ग्राम कडोली (जिला परभणी, महाराष्ट्र) में 11 अक्टूबर, 1916 को हुआ था। संघ से प्रभावित होकर नानाजी ने 1940 में प्रचारक बनने के लिए घर छोड़ दिया। पहले आगरा और फिर गोरखपुर गये। नानाजी के प्रयासों से तीन साल के अंदर ही गोरखपुर जिले में लगभग 250 शाखाएं खुल गयीं। उसी दौरान ही गोरखपुर में 1950 में पहला 'सरस्वती शिशु मंदिर' स्थापित किया गया। 1947 में नानाजी लखनऊ में राष्ट्रधर्म प्रकाशन के प्रबंध निदेशक बने। बाद में जनसंघ की स्थापना होने पर उत्तर प्रदेश में कार्य करते हुए नानाजी ने प्रदेश के सभी जिलों में जनसंघ का काम पहुंचा दिया। 1967 में वे जनसंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री बनकर दिल्ली आ गये। वर्ष 1968 में उन्होंने दिल्ली में दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की। विनोबा भावे के भूदान आंदोलन में खूब सक्रिय रहे। 1975 में आपातकाल के विरुद्ध बनी 'लोक संघर्ष समिति' के वे पहले महासचिव थे। नानाजी बलरामपुर से सांसद भी रहे। बाद में जनता पार्टी का महामंत्री का दायित्व भी निभाया। 1978 में नानाजी ने सक्रिय राजनीति छोड़कर 'दीनदयाल शोध संस्थान' के माध्यम से गोंडा, नागपुर, बीड़ और अहमदाबाद में ग्राम विकास के कार्य किये। 1991 में उन्होंने चित्रकूट में देश का पहला 'ग्रामोदय विश्वविद्यालय' स्थापित कर आस-पास के 500 गांवों का जन भागीदारी द्वारा सर्वांगीण विकास किया। इसी प्रकार मराठवाड़ा, बिहार आदि में भी कई गांवों का पुनर्निर्माण किया। वह वर्ष 1999 में वे राज्यसभा में मनोनीत किये गये। पद्म विभूषण और भारत रत्न से सम्मानित नानाजी ने 27 फरवरी, 2010 को अपनी नश्वर देह त्याग दी। ■

# अतुलनीय क्रांतिकारी दुर्गा भाभी

देश के स्वाधीनता आंदोलन में वीर महिलाओं का योगदान भी अतुलनीय है। जिन्होंने अपने साथ संपूर्ण परिवार बलिदान कर मातृभूमि के लिए संघर्ष किया। उन्हीं में से एक हैं वीरांगना दुर्गा भाभी। उनका जन्म प्रयागराज में सात अक्टूबर, 1907 को हुआ था। 11 वर्ष की अल्पायु में उनका विवाह लाहौर के सम्पन्न परिवार में भगवती चरण बोहरा से हुआ। शादी के बाद दुर्गा भाभी ने पति को भी सहभागी बना लिया। उनके पति भगवती भाई प्रायः क्रांतिकारी दल के काम से बाहर या फिर भूमिगत रहते थे। इसलिए सूचनाओं के आदान-प्रदान का पूरा कार्य दुर्गा भाभी ही करती थीं। इसके साथ ही वह बम या बम की सामग्री को भी तय स्थान पर पहुंचाती थीं। जब भगत सिंह ने साथी क्रांतिवीरों के साथ लाहौर में पुलिस अधिकारी सांडर्स का वध किया, तो उनकी खोज में पुलिस नगर के चप्पे-चप्पे पर तैनात थी। उस दौरान दुर्गा भाभी सामने आयीं और भगत सिंह को नये लुक में बाहर निकाला। उनके साथ दुर्गा भाभी अपने छोटे बच्चे शचीन्द्र को लेकर भी बैठीं। सुखदेव उनके नौकर बने। साथ ही चन्द्रशेखर आजाद ने भी वेष बदल लिया। इस प्रकार पुलिस को चकमा देते हुए ट्रेन के जरिये वे लाहौर से निकल गये। 12 सितम्बर, 1931 को पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। 15 दिन तक जेल में और तीन साल तक शहर में ही नजरबंद रहीं। लखनऊ में ही उन्होंने 'शहीद स्मारक शोध केन्द्र एवं संग्रहालय' की भी स्थापना की। इस तरह जीवन का हर पल राष्ट्र को समर्पित करने वाली दुर्गा भाभी ने 15 अक्टूबर, 1999 को अंतिम सांस ली। ■

# BHAURAV DEVRAS SARASWATI VIDYA MANDIR

- Digital Library
- Atal Tinkering Laboratory
- Well Equipped Laboratories
- All Sports Activities
- Studio for Smart Education
- Value Based Education
- Easy Transport options from most suburbs
- Unique & Innovative Programs
- Modern Resources & Technologies

**H-107, Sector-12, NOIDA**
**E-Mail: bdsvidyamandir@gmail.com**
**Contact No. 0120-4238317, 9910665195**

RNI No. : UPHIN/2023/84344 Postal Reg No. : DL (DS)-61/MP/2023-24-25